आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-21/2012-14
वर्ष : 69 ★ अंक : 04 ★ मूल्य : 20 रु.
10 अप्रेल, 2012 ★ वैशाख, 2069

ISSN 2249-2011

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

सम्वत्सरी अंक

नवकार महामंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं।।

एसो पंच णमोक्कारो, सव्व-पावप्पणासणो,
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल जयपुर

मंगल-मूल धर्म की जननी,
शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी,
महिमामयी यह 'जिनवाणी'।।

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

दूध की धरती खून से लथपथ..!
गोमांस निर्यात का कड़वा सच
सन २००६-०७ में
4,94,505 मेट्रीक टन गोमांस निर्यात
सन २००८-०९ में
4,62,750 मेट्रीक टन गोमांस निर्यात
सन २००७-०८ में
4,83,478 मेट्रीक टन गोमांस निर्यात
सन २००९-१० में
3,11,305 मेट्रीक टन गोमांस निर्यात
व्हिएतनाम,मलेशिया,फिलिपाइल्स,कुवैत, अंगोला,ओमन,इराक,कोंगो,सिरिया,इरान, अर्मेनिया, कोटेडआयवारै, मॉरिशस, कोमोरोस, येमेन, इक्वतुलजिनिया, ब्रुनै, उझबेकिस्तान जैसे कई
इजिप्त, सौदी अरबिया,अरब अमिराती,जॉर्डन, जॉर्जिया, लेबनॉन गॅबॉन, सेनेगल,घाणा,कतार पाकिस्तान, बहीरन, अझबैजन, तजाकिस्तान, अल्वॅनिया,नामिबिया, चीन,अफगाणिस्तान, देशो में यह मांस निर्यात हो रहा है।
पवित्र भारतभूमिपर कब तक चलेगा यह हिंसक दौर ?
अहिंसा तीर्थ
रतनलाल सी. बाफना गो सेवा अनुसंधान केंद्र
'अहिंसा तीर्थ',कुसुंबा,अजंता रोड,जलगाँव फोन : 0275-2270125, सुविधा केंद्र : 2220212
सौजन्य
रतनलाल सी. बाफना ज्वेलर्स
''नयनतारा'', सुभाष चौक, जलगाँव 0257-2223903
''स्वर्णतीर्थ'', आकाशवाणी चौक, जालना रोड, औरंगाबाद 0240-2244520
''नयनतारा इस्टेट'', उन्टवाडी रोड, संभाजी चौक, नासिक 0253-2315644
जहाँ विश्वास ही परंपरा है।
मानवीय आहार शाकाहार।

सम्वत्सरी अंक : विषयानुक्रम

सम्पादकीय-	सम्वत्सरी कब?	5
भूमिका-		11
प्रस्तावना-		13
प्रथम खण्ड :	**अहिंसा महापर्व**	
	(क) आदि-मध्य-अंतविहीन ऐतिहासिक पर्व	18
	(ख) आरे का प्रारम्भ-श्रावण कृष्णा प्रतिपदा	21
	(ग) 50वाँ दिन कैसे?	37
	(घ) अहिंसा पालन की महाघोषणा- अहिंसा प्रतिष्ठापन दिवस	41
द्वितीय खण्ड :	**50वें दिन की महत्ता- पर्युषण विधान के आगमीय सूत्र**	
	(क) प्रथम भाग की प्रधानता	49
	(ख) संवत्सरी सम्बन्धी आगमिक विधान	54
	(ग) इतिहास कथानक, घटनाक्रमों से वर्षाऋतु और वर्षाऋतु में प्रथम प्रावृट् की महत्ता	67
	(घ) अन्य आगमीय प्रमाणों से भी 50वें दिन का विशेष महत्त्व	68
तृतीय खण्ड :	**लौकिक गणित-आगम गणित और पूर्वधर काल तक की संवत्सरी**	
	(क) लौकिक गणना मानने की विवशता	74
	(ख) गणना में 1 वर्ष तक के अंतर की संभावना	85
	(ग) आगम की मासवृद्धि-लौकिक पंचाग की मासवृद्धि-विभिन्नता अथवा समानता?	86
	(घ) वि.सं. 1 से 41 तक बढने वाले मासों का उदाहरण सहित अवलोकन	91
चतुर्थ खण्ड :	**वीर निर्वाण 1000 से उत्तरवर्ती काल में पर्युषण**	
	(क) अंधकार का गहरा गर्त-शिथिलाचार का तांडव	98
	(ख) आराधन काल में भिन्नता : सही के लिए निकला गलती के लिए चल पड़ा	105
	(ग) बढ़ गया चातुर्मास : अपर्युषण में पर्युषण की आश	106
	(घ) पर्युषण से जुड़े कतिपय शब्द-वाक्यांशों की समीक्षा	109
पंचम खण्ड :	**गणित की जटिल प्रक्रिया गुरुकृपा का है शुक्रिया**	
	(क) युग-स्वरूप, गणना, उपयोग	118
	(ख) 19 वर्षों में मासवृद्धि का सामान्य नियम व वि.सं. 2065 तक	110
	बिन्दु में उस नियम की एकरूपता-भिन्नता	126
	(ग) सामान्य सुलभ रीति	135
	(घ) आगम व लौकिक गणना- अत्यन्त निकटता	152
उपसंहार		158
श्राविका-मण्डल-	मासिक प्रश्नमंच प्रतियोगिता (25) -संकलित	166
परिणाम-	'आओ स्वाध्याय करें' त्रैमासिक प्रतियोगिता (27) का परिणाम -संकलित	164
समाचार विविधा-	समाचार-संकलन	169
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार	198

जिनवाणी हिन्दी-मासिक

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

卐 **संरक्षक**

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन-2636763

卐 **संस्थापक**

श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 **प्रकाशक**

विरदराज सुराणा, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003(राज.)
फोन-0141-2575997, फैक्स-0141-2570753

卐 **सम्पादक**

प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन
3 K 24-25, कुड़ी भगतासनी हाउसिंग बोर्ड
जोधपुर-342005 (राज.), फोन-0291-2730081
E-mail : jinvani@yahoo.co.in

卐 **सह-सम्पादक**

नौरतन मेहता, जोधपुर
डॉ. श्वेता जैन, जोधपुर

卐 **भारत सरकार द्वारा प्रदत्त**

रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-RJ/JPC/M-21/2012-14
ISSN 2249-2011

तओ काले अभिप्पेए,
सड्ढी तालिसमंतिए।
विणएज्ज लोमहरिसं,
भेयं देहस्स कंखए।।

-उत्तराध्ययन सूत्र, 5.31

मरण-समय की इष्ट घड़ी में,
श्रद्धालु निर्भय चित्त धरे।
गुरुचरणों में अनशनपूर्वक,
देहत्याग का भाव करे।।

अप्रेल, 2012
वीर निर्वाण संवत्, 2538
वैशाख, 2069

वर्ष 69 अंक 4

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 120 रु.	स्तम्भ सदस्यता : 21000/-
आजीवन देश में : 500 रु.	संरक्षक सदस्यता : 11000/-
आजीवन विदेश में : 12500 रु.	साहित्य आजीवन सदस्यता- 4000/-

एक प्रति का मूल्य : 20 रु.

शुल्क भेजने का पता- जिनवाणी, दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार,जयपुर-03 (राज.)
फोन नं.0141-2575997, 2571163, फैक्स : 0141-2570753, E-mail:sgpmandal@yahoo.in
ड्राफ्ट 'जिनवाणी' जयपुर के नाम बनवाकर उपर्युक्त पते पर प्रेषित किया जा सकता है।

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-2562929

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो

सम्पादकीय

सम्वत्सरी कब?

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

इस वर्ष दो भाद्रपद मास होने से वर्षावास पाँच माह का आ रहा है। जब भी श्रावण या भाद्रपद अधिक मास के रूप में आते हैं तब समस्या उत्पन्न होती है कि पर्युषण की आराधना कब की जाए एवं संवत्सरी किस दिन मानी जाए। समवायांग सूत्र को आधार बनाकर अधिक मास होने पर प्रायः दो मत बन जाते हैं। एक मत श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से 50 वें दिन संवत्सरी को महत्त्व देता है तो दूसरा मत वर्षावास समापन के 70 दिन शेष रहने पर संवत्सरी स्वीकार करता है। इस आधार पर दो श्रावण होने पर प्रथम मत के अनुसार दूसरे श्रावण में संवत्सरी पर्व आता है तथा द्वितीय मत के अनुसार चातुर्मास समापन के 70 दिन शेष रहने पर भाद्रपद में चतुर्थी या पंचमी को संवत्सरी आती है। इसी प्रकार दो भाद्रपद आने पर प्रथम मत के अनुसार पर्युषण एवं संवत्सरी प्रथम भाद्रपद में तथा द्वितीय मत के अनुसार द्वितीय भाद्रपद में पर्युषण एवं संवत्सरी मानी जाती है। जिनवाणी के प्रस्तुत अंक में इस समस्या पर विभिन्न प्रमाणों एवं गणनाओं के साथ यह प्रमाणित किया गया है कि चातुर्मास प्रारम्भ से लेकर पचासवें दिन ही संवत्सरी मानना अधिक उचित है। इस दृष्टि से इस वर्ष संवत् 2069 में प्रथम भाद्रपद शुक्ला पंचमी 21 अगस्त 2012 को संवत्सरी पर्व उपस्थित हो रहा है।

सारी समस्या का मूल आगम गणितीय मान्यता के स्थान पर लौकिक गणित को स्वीकार करना रहा है। आगमिक मान्यता में श्रावण एवं भाद्रपद कभी भी अधिक मास के रूप में नहीं आते हैं। उसके अनुसार पौष अथवा आषाढ़ मास अधिक मास के रूप में स्वीकार किए गए हैं। इसलिए चातुर्मास स्वतः चार माह का रह जाता है। तीर्थंकर महावीर एवं उनके पश्चात् लम्बे काल तक चातुर्मास अथवा वर्षावास चार माह का ही रहा। चार माह का वर्षावास मानने पर संवत्सरी सम्बन्धी दोनों मान्यताओं में कोई विवाद नहीं रहता है।

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने इस समस्या के मूल में जाकर समाधान निकालने हेतु संकल्प किया तथा अपने आज्ञानुवर्ती तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा. को पुरातन प्रमाणों के आधार पर गवेषणात्मक दृष्टि से चिन्तन प्रस्तुत करने हेतु अनुरोध किया। ज्ञान, दर्शन, चारित्र की आराधना में प्रतिपल सजग मुनि श्री ने संघ नायक की भावना को आज्ञा मानकर आचारांग सूत्र, समवायांग सूत्र, स्थानांग सूत्र, जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, बृहत्कल्पसूत्र, निशीथ सूत्र आदि विभिन्न आगमों एवं चूर्णियों, भाष्यों, टीकाओं आदि के आधार पर आगमिक गणित एवं 2500 वर्षों की गणना का विचार किया तथा अनेक नूतन

जानकारियों के साथ प्राचीन आगम-गणना को स्वीकार करने हेतु पुष्ट तर्क उपस्थापित किए, जिनके आलेखन का कार्य गुरु सान्निध्य में अध्ययनरत मुमुक्षु नेहा चोरडिया ने किया है।

संवत्सरी सम्बन्धी जो चिन्तन प्रस्तुत जिनवाणी के पांच खण्डों में निबद्ध हुआ है उसका कुछ सार इस प्रकार है-

1. पर्युषण या संवत्सरी पर्व का प्रमुख लक्ष्य आत्मशुद्धि है। आत्मशुद्धि साधक जब चाहे तब कर सकता है। उसके लिए सदा ही पर्युषण पर्व है। किन्तु पर्युषण पर्व के समय का निर्धारण साधु-साध्वियों के पर्युषण कल्प का समय निश्चित करने की दृष्टि से व्यवहार मार्ग से किया जाता है।
2. प्रत्येक आरक का प्रारम्भ श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को होता है। अतः आगम-गणना में वर्ष का प्रारम्भ भी श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से स्वीकार किया गया है, चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से नहीं। इसके साथ ही आगम-गणना में वर्ष का अन्त आषाढ़ माह की पूर्णिमा को होता है।
3. जीव रक्षा की दृष्टि से वर्षा ऋतु में विशेष सजगता की आवश्यकता होती है। वर्षा ऋतु में भी 'प्रावृट्' जो वर्षा का प्रारम्भिक भाग होता है, का विशेष महत्त्व है। आगम में ऋतुओं का कथन दो प्रकार से प्राप्त होता है। बृहत्कल्पसूत्र में तीन ऋतुओं का कथन है- वर्षा, हेमन्त और ग्रीष्म। वे ऋतुएँ चार-चार माह की हैं। स्थानांग सूत्र में छह ऋतुएँ कही गई हैं- प्रावृट्, वर्षारात्रि, शरद, हेमन्त, वसन्त और ग्रीष्म। वर्षा ऋतु का प्रथम मास एवं ग्रीष्म ऋतु का चतुर्थ मास अर्थात् आषाढ़ और श्रावण को प्रावृट् कह सकते हैं। वर्षावास को चार माह का मानने पर प्रथम पचास दिनों में तीव्र वर्षा के कारण जीवोत्पत्ति अधिक होती है। धरा पर हरियाली, कीचड़, लीलन, फूलन होती है, नदी-नाले उफनते हैं, विचरण का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है, इसलिए वर्षाकाल में साधु-साध्वी एक ही स्थान पर रहकर चातुर्मास करते हैं। चातुर्मास चार माह का होता है किन्तु प्रारम्भिक मासों में वर्षा का जोर अधिक होने से पर्युषण की आराधना प्रारम्भ के 50 वें दिन करना उचित है।
4. समवायांग सूत्र में श्रावण प्रतिपदा से 50 वें दिन एवं कार्तिक पूर्णिमा के पूर्व 70 दिन रहते जो संवत्सरी अथवा पर्युषण करने का उल्लेख है वह तभी घटित हो सकता है जब श्रावण, भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक में से कोई भी माह अधिक मास के रूप में परिगणित न हो। मुनि श्री ने द्वितीय खण्ड में वर्षावास के प्रथम भाग (श्रावण का एक मास एवं भाद्रपद के 20 दिन) को विभिन्न आधारों से पुष्ट किया है।
5. वर्तमान में ऋतु संवत्सर एवं ऋतुमास के आधार पर जो गणना की जाती है वह उपयुक्त नहीं है। ऋतुमास में 30 दिन होते हैं तथा इसके अनुसार एक संवत्सर में 12 महीनों के 360 दिन होते हैं। मात्र इस संवत्सर के आधार पर 4 गतियों की आयु एवं आरों का कालमान निर्धारित किया जाये तो सारी गणना गड़बड़ा जायेगी। ऋतु मास की तरह आदित्य मास, चन्द्र मास

एवं नक्षत्र मास का भी आगम में विचार किया गया है। आदित्य मास सूर्य की गति के आधार पर परिगणित किया जाता है, जिसके अनुसार एक वर्ष में 365¼ दिन होते हैं। ईस्वी सन् की गणना इसी आधार पर की जाती है। चंद्र मास 29 32/62 दिन का होता है तथा नक्षत्र मास 27 21/67 दिनों का। समवायांग सूत्र में कहा गया है कि एक युग में 61 ऋतु मास, 62 चन्द्र मास एवं 67 नक्षत्र मास होते हैं। एक युग में पाँच वर्ष माने गये हैं। इन पाँच वर्षों में 1830 या 1831 दिन स्वीकार किये गये हैं। जो उपर्युक्त मासों की संख्या को मासों के दिनों से गुणा करने पर प्राप्त होते हैं। आदित्य मास के अनुसार पाँच वर्षों में 365 ¼ × 5= 1826 ¼ दिन होते हैं।

आगम-गणना में इन चारों संवत्सरों (ऋतु संवत्सर, चन्द्र संवत्सर, सूर्य संवत्सर और नक्षत्र संवत्सर) का सामञ्जस्य बिठाया गया है जिसे मनीषी मुनि श्री ने अनेक तर्कों एवं प्रमाणों से सिद्ध किया है। उनका कहना है कि आगम में वर्णित काल का उल्लेख सूर्य संवत्सर और चन्द्र संवत्सर से ही नहीं, चारों संवत्सरों से मेल खाता है, क्योंकि 19 वर्ष में 7 अभिवर्द्धित मास के साथ में चन्द्र संवत्सर का सूर्य संवत्सर के साथ पूरा मेल हो जाता है। इसीलिए 19 वर्ष पश्चात् चन्द्र संवत्सर (हिन्दी वर्ष) और सूर्य संवत्सर (अंग्रेजी वर्ष) की तिथि और तारीख एक दिन के अपवाद को छोड़कर प्रायः वही आती है।

मुनिश्री का कथन है कि भगवान महावीर के तप की गणना भी ऋतु संवत्सर से मानना उचित नहीं। (द्रष्टव्य प्रथम खण्ड) यदि ऋतु संवत्सर से संवत्सरी की गणना की जाये तो वह 5-6 दिन पीछे उसी प्रकार खिसकती जायेगी जिस प्रकार हिजरी संवत् में ईद, मुहर्रम आदि त्यौहार पूर्वापेक्षया पहले होते जाते हैं एवं वे वर्षभर में बदल-बदल कर आते हैं। तदनुसार सम्वत्सरी एक वर्ष भादवा शुदि (शुक्ल दिवस) पंचमी को, अगले वर्ष भादवा कृष्णा अमावस्या को, फिर भादवा बदि (बहल/ कृष्ण दिवस) दशमी को और इस प्रकार खिसकते हुए 73 वर्ष पश्चात् ही भादवा शुदि पंचमी को आयेगी।

6. प्रस्तुत अंक में इस तथ्य को अनेक तर्कों एवं पुष्ट प्रमाणों से सिद्ध किया गया है कि आगमिक मान्यता के अनुसार चातुर्मास में चार ही महीने होने चाहिए। वे चार महीने हैं- श्रावण, भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक। आगम गणित के अनुसार इन चार माह में कभी भी कोई अधिक मास नहीं होता है। वर्षावास में अधिक मास की मान्यता लौकिक पंचांग के अनुसार है। आगम ज्योतिष के अनुसार अधिक मास दो ही हो सकते हैं, वह या तो पौष मास होता है या वर्ष के अन्त में आषाढ मास। आकाश में नक्षत्र एवं तारों की स्थिति को ध्यान में रखते हुए ज्योतिषीय गणना की जाती है। इसलिए 19 वर्षों में सात माह की अभिवृद्धि स्वीकार की गई है। यह अभिवृद्धि जिस प्रकार लौकिक पंचांग में मान्य है, उसी

प्रकार आगमगणित में भी सिद्ध की जा सकती है। इसमें मात्र महीनों के नामों का ही अन्तर आता है। मुनि श्री ने तृतीय खण्ड में आगम एवं लौकिक गणित की तुलनात्मक प्रस्तुति की है। किन्हीं कारणों से उत्तरकाल में लौकिक पंचांग को स्वीकार किया गया हो, किन्तु आगमों की सूक्ष्म गणित के अन्वेषण एवं प्रस्तुतीकरण की आवश्यकता है। तत्त्वचिन्तक मुनि श्री ने इस दिशा में ठोस कदम बढ़ाया है तथा विस्मृत आगम गणित को स्वीकार करने हेतु प्रेरित किया है। उनकी मान्यता है कि लौकिक पंचांग में जिस प्रकार अधिक मास, क्षय माय आदि का विवेचन है उसी प्रकार आगमिक गणित में भी वह सम्भव है।

7. मासवृद्धि कभी पाँच वर्ष में 2 बार, कभी 6 वर्ष में दो बार तो कभी 3 वर्ष में एक बार होती है, किन्तु 19 वर्षों में प्रायः 7 मास की वृद्धि विक्रम वर्ष की गणता में हो ही जाती है। वहाँ पर 12 माहों में किसी भी माह की वृद्धि अंगीकार की जाती रही है, किन्तु आगम गणित में मात्र पौष या आषाढ़ माह की ही वृद्धि मान्य रही है। आदि से मध्य तक पौष एवं फिर आषाढ़ मास की वृद्धि को जानने की सरल रीति इस अंक में निर्दिष्ट की गई है।

वर्तमान में कालगणना हेतु प्रायः विक्रम संवत्, शक संवत्, वीर निर्वाण संवत् एवं ईस्वी सन् का प्रचलन है। इनमें परस्पर अन्तर का ज्ञान हो तो किसी को भी आधार मानकर पारस्परिक गणना सरल हो जाती है। विक्रम संवत् से शक संवत् 135 वर्ष पीछे है, ईस्वी सन् 57 वर्ष पीछे है तथा वीर निर्वाण संवत् 470 वर्ष आगे है। अतः इनकी गणना करते समय इस अन्तर को ध्यान में रखना चाहिए। उदाहरण के लिए अभी विक्रम संवत् 2069 है तो शक संवत् होगा- 2069-135=1934, ईस्वी सन् होगा- 2069-57=2012 तथा वीर निर्वाण संवत् होगा-2069+470=2539/2538। इनकी गणना में महीनों के आगे-पीछे होने से कभी एक वर्ष की संख्या का अन्तर आना सम्भव है। प्रस्तुत अंक में इन संवतों की गणना का उपयोग हुआ है।

एक विशेष बात यह है कि भारतीय पंचांग कोई भी हो, उनमें 12 महीनों के नाम- चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ एवं फाल्गुन ही हैं। आगम गणित में इनका प्रारम्भ श्रावण से स्वीकार किया गया है तथा अन्तिम माह आषाढ़ को माना गया है। एक तथ्य यह भी है कि विक्रम संवत् जहाँ चैत्र के शुक्ल पक्ष से अर्थात् आधा चैत्र माह बीतने पर प्रारम्भ होता है वहाँ आगम के अनुसार वर्ष का प्रारम्भ श्रावण के कृष्ण पक्ष से होता है।

संवत्सरी के संबंध में तीन प्रमुख विचार धाराएँ हैं। प्रथम विचारधारा के अनुसार आगम गणना के अन्तर्गत संवत्सर के समापन दिवस आषाढ़ पूर्णिमा को महत्त्व दिया गया है। आषाढ़ पूर्णिमा को पर्युषण करने की मान्यता को मुनि श्री ने खण्डित करते हुए कहा है कि आषाढ़ी पूर्णिमा को छेदसूत्रों के व्याख्या साहित्य में 500 श्वासोच्छ्वास के कायोत्सर्ग का

उल्लेख है, जबकि संवत्सरी के लिए 1008 श्वासोच्छ्वास के कायोत्सर्ग का विधान है। अतः संवत्सरी पर्व को आषाढ़ी पूर्णिमा से अलग मानना चाहिए। दूसरी विचारधारा श्रावण की प्रतिपदा से 50 वें दिन चातुर्मास के समापन के 70 दिन शेष रहने पर संवत्सरी स्वीकार करती है। जिसके अनुसार लौकिक पंचांग को मान्यता देकर 2 श्रावण होने पर भाद्रपद में तथा 2 भाद्रपद होने पर दूसरे भाद्रपद में संवत्सरी पर्व स्वीकार करती है। तीसरी विचारधारा श्रावण बदि एकम से पचासवें दिन आने वाली पंचमी को महत्त्व देती है। मुनि श्री ने विभिन्न मान्यताओं का गहन विचार कर यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि पचासवें दिन संवत्सरी की मान्यता आगम के अधिक अनुरूप है। उन्होंने साढ़े पच्चीस आर्य क्षेत्रों का विवरण देते हुए वर्षा के काल का आकलन किया है तथा आर्य क्षेत्रों में प्रथम भाद्रपद शुक्ला पंचमी को संवत्सरी स्वीकार करने की मान्यता को उचित ठहराया है।

प्रस्तुत अंक में आगमिक गणित की सूक्ष्मता को मुनिश्री ने समझने एवं समझाने का प्रयत्न किया है तथा उसे आधुनिक पंचांगों और भूगोल-विज्ञान संबंधी मान्यताओं के साथ भी देखा है। गणितीय गणना में वे दक्ष हैं। यद्यपि चिन्तन का प्रमुख विषय पर्युषण एवं संवत्सरी की आराधना का समय निर्धारण है, फिर भी मुनि श्री ने प्रसंगवश अनेक बिन्दुओं का आलोडन किया है तथा अनेक नई सूचनाओं के साथ गवेषणात्मक-चिन्तन को अवसर प्रदान किया है। उनके द्वारा प्रसंगवश चिन्तित कुछ प्रमुख विषय हैं- 1. भगवान महावीर के तप दिवसों की गणना, उनके छद्मस्थ काल की गणना, 2. आर्य क्षेत्रों का अंक्षाश एवं दिनमान के आधार पर विचार, 3. गणना में एक वर्ष तक के अन्तर की सम्भावना, 4. आगम एवं लौकिक गणित में निकटता, 5. मासवृद्धि पर विभिन्न दृष्टियों से विचार, 6. विक्रम संवत्, वीर निर्वाण संवत् और ईस्वी सन् का तालमेल, 7.लौकिक पंचांग की मासवृद्धि का आगम के अनुसार आषाढ़ एवं पौष माह की वृद्धि में समायोजन आदि।

सम्वत्सरी एक अहिंसापर्व है। अहिंसा के साथ यह क्षमा, आत्मालोचन, प्रतिक्रमण, उपवास आदि का भी पर्व है। विगत वर्षों में इसकी महिमा में निरन्तर वृद्धि हुई है। अब यह मात्र साधु-साध्वियों की धर्माराधना का पर्व नहीं रहा, अपितु यह श्रावक-श्राविकाओं के लिए भी महत्त्वपूर्ण महापर्व बन गया है। सभी इसकी आराधना अत्यन्त उत्साह एवं उमंग से करते हैं। यह जैनों की एकता का प्रतीक बने तो इसके महत्त्व में सामाजिक एवं वैश्विक दृष्टि से भी चार चाँद लग सकते हैं।

सम्वत्सरी पर्व अथवा पर्युषण पर्व पर इस पुस्तिका में जो गवेषणात्मक एवं गणनात्मक चिन्तन प्रस्तुत किया गया है, वह कोई आग्रह का सूचक नहीं, अपितु विद्वानों एवं संतों के लिए विनम्रता पूर्वक विचार हेतु प्रस्तुत है।

★

सम्वत्सरी अंक

मार्गदर्शन

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.

गवेषणापूर्ण चिन्तन

तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा.

आलेखन

मुमुक्षु नेहा चोरडिया

भूमिका

''निव्वुइपहसासणयं, जयइ सया सव्वभावदेसणयं।
कुसमयमयणासणयं, जिणिंदवरवीरसासणयं।।''

नंदीसूत्र, गाथा 24

सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र रूप मोक्ष पद का प्रदर्शक, जीव-अजीव आदि पदार्थों का प्रतिपादक और कुदर्शन के अभिमान का मर्दक, जिनेन्द्र भगवान महावीर का शासन (प्रवचन) सदा जयवंत हो। इसी शासन के प्रभावक आचार्यों ने पंचाचार के विशुद्ध आराधन द्वारा आज तक शासन की शोभा बढायी है, मुमुक्षुओं को मुक्ति मार्ग में आगे बढ़ाया है, उन्हीं तेजस्वी, मनस्वी, महापुरुषों की शृंखला में आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. के पट्टधर आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. अपने गुरुओं से प्राप्त सरलता, उदारता, विशालता एवं समन्वय के साथ शासन की सेवा में संलग्न हैं। इस वर्ष के पावटा, जोधपुर के चातुर्मास में पुस्तकालय, प्राचीन सामग्री के प्रतिलेखन का अवसर उपस्थित होने पर आपश्री ने नेश्रायवर्ती संतों के सहयोग से तिथि संबंधी विचारणा की सामग्री को अलग से एकत्र करवाया तो एक पूरा कार्टून भर गया। छपी हुई पुस्तकें, सम्मेलनों की हस्तलिखित सामग्री, पर्युषण संबंधी विचारणा के लेख, लेख पर उठाए गए प्रश्न आदि अनेक प्रकार के बिखरे हुए मोतियों को पिरोकर समाधानपरक एक माला बनाने की भावना आचार्यप्रवर के अंतर में स्फुरित हुई। चातुर्मास पश्चात् से ही इस दिशा में सतत व प्रबल प्रेरणा प्रदान कर आपने उसे मूर्त रूप दिलाने का प्रयास किया, किन्तु विचरण-विहार, स्वाध्याय-ध्यान शिविरों के कारण उसका क्रियान्वयन नहीं हो पाया। मेडता में आपश्री की ही प्रेरणा, आपश्री का ही आशीर्वाद और आपश्री की ही कृपा उसे इस व्यवस्थित रूप तक पहुँचा पायी।

आपके चरणों में
असीम आस्था के साथ
नति की तति
समर्पित है यह कृति।
गुरु कृपा से पाए हैं नए तथ्य
विनम्र अनुरोध क्या नहीं है ये सब सत्य?

1. भगवान ऋषभदेव व भगवान महावीर के पश्चात् आरे के बदलने के काल में समानता नहीं है।
2. प्रत्येक आरे, प्रत्येक कालचक्र का प्रारम्भ श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को ही।
3. भगवान महावीर के 4165 दिन तप व 349 दिन पारणे का उल्लेख पूर्ण नहीं अपूर्ण है, उनका छद्मस्थकाल 4515 दिन का नहीं लगभग 4565 दिन का है।
4. युग के होते हैं दो प्रकार- (1) युग सामान्य 1800 दिन/संशोधित 1801 दिन।
   (2) युग संवत्सर 1830 दिन/ संशोधित 1831 दिन।
5. युग संवत्सर में दो अभिवर्धित मास की नियमा है, युग सामान्य में केवल एक अभिवर्धित वर्ष होता है।
6. लौकिक गणित आगम गणित से अधिक दूर नहीं।
7. प्रत्येक 120 युग-600 वर्षों में कर दिया जाता है पूर्ण सामञ्जस्य।

प्रस्तावना

संवत्सरी विचार श्रेणि

आचार्य भगवंत पूज्य गुरुदेव श्री हस्तीमल जी म.सा. के हस्तलिखित पत्र, व्याख्यान, सम्मेलन की कार्यवाही की पुस्तिकाएँ, आचार्य भगवन्त पूज्य गुरुदेव श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के द्वारा सं. 2047 (सन् 1990) में पाली में दिये गये पर्युषण के व्याख्यान, लेखमाला आदि के आधार से-

(अ) द्वितीय भाद्रपद में संवत्सरी क्यों? संवत्सरी पर्व का आराधन कब हो?

आचार्य भगवंत पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. के हस्तलिखित प्रेरक पत्र की प्रतिलिपि-

आत्मशुद्धि के (दीवानों) मस्तानों को जो प्रतिदिन अप्रमत्त भाव से साधना में तत्पर रहते हैं, आज की स्खलना कल तक भी नहीं रहने देते। कभी क्रोध आदि का उदय आ जाय तो इसे भी पानी की लकीर की तरह आगे को पीछे मिटा देते हैं उनके लिए तो सदा संवत्सरी है।

आज स्थानकवासी जैन समाज में चारों ओर विचार चल रहा है कि **पर्युषण पर्व का आराधन कब करना चाहिए?** 'शुभस्य शीघ्रं' की नीति के समर्थक कई शुभार्थिक प्रथम भाद्रपद में करना सोचते हैं तो कई दूसरे भाद्रपद में करना ठीक समझते हैं। वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रमण संघ में दोनों विचार के लोग हैं। अधिकांश ऐसे लोग हैं जो परम्परा से प्रथम भाद्रपद में पर्वाराधन करते आये हैं और शास्त्राज्ञा से भी वे इसे ठीक समझते हैं, इधर द्वितीय भाद्रपद की परंपरा वाले थोड़े हैं, अत: दूसरे भाद्रपद में पर्वाराधन करते समय उनको (प्रथम वालों को) विचार होना सहज है।

फिर जबकि कॉन्फ्रेन्स की ओर से संवत्सरी द्वितीय भाद्रपद में ही क्यों? इस लेख में दिए गए द्वितीय भाद्रपद का पर्वाराधन शास्त्रसम्मत है; इस निर्णय से तो पूर्वोक्त विचारणा को और भी प्रोत्साहन मिल गया। बहुल पक्ष वाले सोचने लगे कि क्या वास्तव में प्रथम भाद्रपद का पर्वाराधन अशास्त्रीय है? क्या हमारे पूर्वजों ने शास्त्र-विरुद्ध आचरण किया? आदि।

संघ ऐक्य के लिए हमें सोचना चाहिए कि इस वर्ष हमें पर्वाराधन कब मनाना उचित है? वास्तव में पर्युषण या संवत्सरी पर्व आत्मशुद्धि के लिये है जो (आत्मशुद्धि) किसी खास नियत समय में ही नहीं होती, साधक जब चाहे विषय-कषायों का निवारण कर कृत दोषों की आलोचना, निन्दा करते हुए आत्मशुद्धि कर सकता है, उसके लिए सदा

सावण-भादवा और सदा ही पर्युषण पर्व है। इसके विपरीत जिसने उपशम भाव को नहीं अपनाया और भूतकाल के दोषों का त्याग नहीं किया, पर्व समय भी उसके लिए अपर्व है। फिर जो पर्व के लिए समय का निर्णय किया जाता है वह धर्मध्यान को समय के साथ बांधने के लिए नहीं, किन्तु उसका हेतु साधु-साध्वियों के लिए पर्युषण कल्प का समय निश्चित कर उन्हें व्यवहार मार्ग में लगाना है।

दूसरी बात व्यवहार में एकरूपता लाने के लिए भी समय का निर्णय आवश्यक हो जाता है। वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रमण संघ की एकता को दृष्टिकोण में लेकर ही मुनिमंडल ने द्वितीय भाद्रपद में संवत्सरी पर्व स्वीकार किया-किन्तु श्रमण संघ की पूर्ण एकता नहीं होने से पुन: विचारणीय रहा।

इस समय हमारे सम्मुख प्रश्न संघ-ऐक्य का है, ऐक्य के लिए प्रथम भाद्रपद या द्वितीय भाद्रपद कोई महत्त्व नहीं रखते। जब एक राजा की अनुकूलता को ध्यान में लेकर पंचमी के बदले चौथ को पर्वाराधन कर लिया गया तो संगठन के लिए प्रथम भाद्रपद के बदले द्वितीय भाद्रपद का पर्वाराधन करना अनुचित नहीं होगा।

उपशमभाव और त्याग-तप की आराधना तो हम सदैव कर सकते हैं, किन्तु व्यवहार में संघ का अनुशासन मान्य कर एकता को अखंड कायम रखना प्रमुख कर्त्तव्य है और इसी दृष्टि से परंपरा से प्राप्त प्रथम भाद्रपद का पर्वाराधन छोड़कर इस वर्ष द्वितीय भाद्रपद का संवत्सरी पर्व करना चाहिये। इससे संघ-शांति और अखंड एकता बनी रहेगी, क्योंकि सामूहिक आराधना में एक प्रथम भाद्रपद में करे और दूसरे द्वितीय भाद्रपद में करे तो इससे सामाजिक एकरूपता नहीं रह पाएगी एवं हिंसाबंदी और व्यापार बंद के सामूहिक कार्य भी व्यवस्थित नहीं हो सकेंगे। संभव है इससे परस्पर मन में राग-द्वेष बना रहे। अत: कॉन्फ्रेन्स और समाज के विचारकों को ऐसा मार्ग निकाल लेना चाहिए कि सौराष्ट्र आदि में पृथक् रहे हुए स्वधर्मी बन्धु भी इसमें सहयोग दे सकें। (यह तभी हो सकता है कि जाहिर पर्युषण और खमतखामणा सबका एक दिन हो और धर्मवृद्धि के लिए शास्त्र-वाचन एवं उपदेश की व्यवस्था दोनों समय की जाय।)

प्रेम के लिए एक दूसरे को शास्त्र-विरुद्ध कहकर मन में कटुता उत्पन्न करना बुद्धिमत्ता का, चातुर्य का काम नहीं है। आशा है पूर्ण उपशम भाव के साथ पर्वाधिराज की साधना सम्पन्न हो)।

(आ) आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. इन्हीं उदारतावादी संस्कारों से शासनसेवा में अहर्निश तत्पर हैं। इस विषय के उनके दो प्रसंगों का उल्लेख करना यहाँ आवश्यक समझते हैं-

1. संवत् 2057 (सन् 2000) जलगांव चातुर्मास में सुधर्म संघ के अग्रणी श्रावक श्री ललित जी खिंवसरा विद्यापीठ के आचार्य श्री प्रकाश जी जैन के साथ में संवत्सरी को सायंकाल आचार्यप्रवर के श्री चरणों में उपस्थित हुए और चिंतित से स्वर में निवेदन करने लगे कि नीचे के हॉल में तो एक प्रतिक्रमण और बीस लोगस्स का कायोत्सर्ग करने वालों की संख्या अधिक होने से हम दो प्रतिक्रमण और चालीस लोगस्स का कायोत्सर्ग करने वालों के लिए स्थान का अभाव रहेगा, हम कहाँ जाएँ? प्रतिक्रमण कहाँ करें? आचार्यप्रवर ने पृच्छा की, कितने श्रावक दो प्रतिक्रमण वाले हैं? तीस-चालीस के लगभग की संख्या का प्रत्युत्तर मिलने पर आचार्य भगवन्त ने संतों के दोनों कमरे खाली करके ऊपर छत पर पानी की टंकी के नीचे के स्थल पर प्रतिक्रमण करने का फरमाया और उन दोनों कमरों में उन्हें अपनी परंपरा के अनुरूप साधना करने की उदारता दर्शायी।

2. संवत् 2061 (सन् 2004) शूले बैंगलोर के चातुर्मास में भी दो सावन होने पर स्वयं की आराधना-साधना दूसरे सावन में करते हुए भी भाद्रपद मास की मान्यता वाले साधकों की सुविधा के लिए व्याख्यान आदि में अंतगड सूत्र व आत्मजागृति के विशिष्ट उद्बोधन द्वारा उनकी साधना में पूर्ण सहयोग दिया।

आज भी ये महापुरुष उसी उदारता के संस्कारों से शासन की सेवा में तत्पर हैं। संवत् 2042 (सन् 1985) संवत्सरी पर्व पर भोपालगढ़ में आचार्यप्रवर पूज्य हस्तीमल जी म.सा. ने फरमाया था "**विवाद के लिए ना तो समय है, ना ही शक्ति**"।

उदारता, विशालता से शासन की एकता के अनेक सद्प्रयासों के उपरांत भी जब संघ में एक विचारधारा कायम नहीं हो पा रही, तब जीतव्यवहार से अपनी-अपनी साधना कर आत्मशुद्धि के इस महापर्व की आराधना श्रेयस्कर है, पर विवशता तब पैदा होती है, जबकि दूसरों को अनागमिक समझकर अपने को ही आगम सम्मत प्रमाणित किया जाता है, विवेचित किया जाता है।

उत्तराध्ययन सूत्र की 10 वें अध्ययन की 31 वीं गाथा-

"**ण हु जिणे अज्ज दिस्सइ, बहुमए दिस्सइ मग्गदेसिए।**
संपइ णेयाउए पहे, समयं गोयम मा पमायए।।"

अर्थात् आज जिन नहीं दिख रहे हैं और जो मार्ग निर्देशक हैं, वे भी अनेक मत के दिख रहे हैं। किन्तु आज (मेरी विद्यमानता में) तुझे न्यायपूर्ण मुक्तिरूप मार्ग उपलब्ध है। स्वयं तीर्थंकर भगवान की विद्यमानता में भी न्याय मार्ग दिखना मुश्किल था, तब आज के युग में, जड़ता और वक्रता की बहुलता में, उस न्याय मार्ग का मिलना कितना कठिन है? कितना दुरुह है? इसीलिए समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं।

एक ही शब्द के अनेक अर्थ हैं- पज्जोसवेइ, पज्जोसवियंसि, पज्जोसवणा आदि शब्द परि+वस् धातु और परि+ऊष धातु (दोनों धातुओं) से बनता है। निकटवर्ती दो सूत्रों में कहीं इसका अर्थ रहना, कहीं इसका अर्थ पर्युषण (संवत्सरी) करना है। इन सभी के कारण छिन्न भिन्न हो रहा है वीतराग वाणी के उपासकों का वर्ग। एक दूसरे को देखना भी पसंद नहीं किया जा रहा, सुनना भी पसंद नहीं किया जा रहा, अन्यथा कहा जा रहा है। शास्त्र में तो स्पष्ट आज्ञा है-

''ण परं वइज्जासि अयं कुसीले, जेणं णो कुप्पिज्ज न तं वइज्जा।
जाणिय पत्तेयं पुण्ण-पावं, अत्ताणं न समुक्कसे जे स भिक्खू।।''

-दशवैकालिक 10/18

अर्थात् 'प्रत्येक व्यक्ति के पुण्य-पाप पृथक्-पृथक् होते हैं' ऐसा जानकर जो दूसरों को (यह) नहीं कहता है कि 'यह कुशील (दुराचारी) है तथा जिससे दूसरा कुपित हो, ऐसी बात भी नहीं कहता और जो अपनी आत्मा को सर्वोत्कृष्ट मानकर अहंकार नहीं करता, वह भिक्षु है।

''सयं सयं पसंसंता गरहंता परं वयं।
जे उ तत्थ विउस्संति संसारं ते विउस्सिया।।''

-सूत्रकृतांग 1/1/2

अपनी प्रशंसा और दूसरे की निंदा करने वाले को मिथ्यादृष्टि कहकर संसार बढाने वाला ही कहा है। तत्त्वार्थ सूत्र 6/24 में भी ''परात्मनिंदाप्रशंसे सदसद्गुणाच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य''

अर्थात् अपनी प्रशंसा, दूसरे की निंदा को नीच गोत्र का कारण बताया और दूसरा कर्मग्रंथ स्पष्ट ही कह रहा- नीच गोत्र का बंध दूसरे गुणस्थान तक ही होता है अर्थात् हमारी ही संवत्सरी सही, दूसरों की गलत, हमारी ही आगमसम्मत बाकी सब की आगमविरोधी, अत: वे सब विराधक हैं संसार बढाने वाले हैं, ऐसा कथन क्या वीतराग वाणी की आराधना करने वालों के मुख से निकल सकता है? बृहत्कल्प के छठे अध्ययन में पहले सूत्र में हीलित, खिंसित, निंदित वचनों को कहने का स्पष्ट निषेध है। निशीथ सूत्र में आचार्य के लिए, साधक-साधिका के लिए, गृहस्थ एवं अन्यतीर्थिकों के लिए भी कटु, कठोर शब्द कहने का बड़ा (चातुर्मासिक) प्रायश्चित्त बताया है। उस समय ऊपर वर्णित आचार्य भगवंतों का अभिप्राय उदारता, विशालता, सहृदयता से आराधना करने के मार्ग को सुप्रशस्त करना है।

''केसी गोयमओ णिच्चं, तम्मि आसी समागमे।

सुयसीलसमुक्कसो, महत्थत्थ-विणिच्छओ।।

"तोसिया परिसा सव्वा, सम्मग्गं समुवट्ठिया।

संथुया ते पसीयंतु, भयवं केसिगोयमे।।"

-उत्तराध्ययन 23/88,89

अर्थात् उस तिंदुकवन में केशीकुमार और गौतमस्वामी दोनों का जो यह नित्य का समागम हुआ, उसमें श्रुत और शील का समुत्कर्ष और मोक्षरूप महान अर्थ का विशेष रूप से निश्चय हुआ।।88।। श्रावस्ती नगरी की समस्त परिषद् इन दोनों महानुभावों के संवाद से संतुष्ट हुई और सन्मार्ग में समुपस्थित हुई। तत्पश्चात् उसने इन दोनों की स्तुति की कि भगवान केशीकुमार श्रमण और गणधर गौतम स्वामी दोनों हम पर प्रसन्न हों।।89।। श्रुत-शील का समुत्कर्ष करने वाला संवाद, सन्मार्गदर्शक संवाद, आत्मोल्लासकारी संवाद इसीलिए प्रस्तुत है यह संवत्सरी संबंधी विचार-श्रेणि, विवाद के लिए नहीं संवाद के लिए। दूसरों को नीचा दिखाने के लिए नहीं, समाधानपूर्वक अपनी आत्मसाधना करने के लिए, क्योंकि "पणया वीरा महावीहिं........." और महाभारत में भी आया-

"तर्कोऽप्रतिष्ठः श्रुतयो विभिन्ना, नैको ऋषिर्यस्य वचः प्रमाणं।

धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां, महाजनो येन गतः स पंथाः।।"

यक्ष प्रश्न के उत्तर में धर्मराज युधिष्ठिर ने कितना सुंदर कहा- तर्क अप्रतिष्ठ हो गए हैं, श्रुतियाँ भिन्न-भिन्न हैं, ऐसा कोई ऋषि नहीं जिसके मत को प्रमाणित कहा जा सके। धर्म का तत्त्व (वास्तविक रूप) गुफा में कहीं छुप गया और अंत में समाधान कह दिया- महापुरुष जिस रास्ते जाते हैं वही सत्पथ है। उदारता, विशालता, गुणग्राहिता, सौम्यता, सरलता, सहृदयता के साथ संघ-उत्थान के शुभाकांक्षी आचार्य भगवंत श्री हस्तीमल जी म.सा. ने संथारे सहित महाप्रयाण किया और उस संथारे के पहले सहवर्ती संप्रदायों के मुखियाओं से क्षमायाचना, नेश्रायवर्ती संत-सतियों से, चतुर्विध संघ से अन्तःकरण की गहराई से क्षमायाचना कर समता, मैत्री, मुदिता और माध्यस्थभाव के साथ परमार्थतः संवत्सरी की सही आराधना की। काल की अपेक्षा प्रतिवर्ष उस संवत्सरी की आराधना कब करना? उन्हीं के प्रवचन अंशों से इस लेख का प्रारंभ किया जा रहा है।

प्रथम खण्ड

अहिंसा महापर्व

(क) आदि-मध्य-अंतविहीन ऐतिहासिक पर्व-

आज का दिन विश्व में अहिंसा की प्रतिष्ठा करने का, जगत् में अहिंसा का साम्राज्य प्रतिष्ठापित करने का दिन है। आज का दिन महान् ऐतिहासिक और धार्मिक महत्त्व का दिन है। अतीत अवसर्पिणी काल के दु:षमादु:षम नामक प्रथम आरक तथा विगत उत्सर्पिणी काल के दु:षमादु:षम नामक प्रथम आरक की समाप्ति के उनपचास दिवस पश्चात् ही संवत्सरी के दिन ढाईद्वीप की 5 भरत और 5 ऐरावत इन 10 कर्मभूमियों के बीज रूप में बचे हुए मानवों में 42 हजार वर्ष के घोरातिघोर कष्टपूर्ण काल की परिसमाप्ति पर इन दशों ही कर्मभूमियों में स्थूल हिंसा का परित्याग कर अहिंसा की प्रतिष्ठा की थी।

मानव द्वारा की गई अहिंसा की प्रतिष्ठापना के उस ऐतिहासिक दिन की स्मृति में अनादि-अतीत से संवत्सरी का दिन परम पावन पर्व के रूप में मनाया जाता आ रहा है।

कालचक्र- जैन दर्शन में काल को निरंतर गतिशील एक चक्र के समान माना गया है। जीवाभिगम एवं जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति में कालचक्र का वर्णन आता है। जिस प्रकार दिन के पश्चात् रात्रि, रात्रि के पश्चात् दिन, तथा शुक्ल पक्ष के पश्चात् कृष्ण पक्ष एवं कृष्ण पक्ष के पश्चात् शुक्ल पक्ष आता है, उसी प्रकार क्रमश: अपकर्षोन्मुख तथा तदनन्तर उत्कर्षोन्मुख कालक्रम के रूप में कालचक्र भरत तथा ऐरावत क्षेत्रों की दश कर्मभूमियों में अनवरत गति से चलता रहता है। इस प्रकार अपकर्षोन्मुख और उत्कर्षोन्मुख कालचक्र को क्रमश: अवसर्पिणी काल तथा उत्सर्पिणी काल के नाम से अभिहित किया जाता है। कृष्ण पक्ष के चन्द्र में क्रमिक ह्रास के समान अपकर्षोन्मुख अथवा ह्रासोन्मुख काल को अवसर्पिणी काल और शुक्ल पक्ष के चन्द्र में क्रमिक अभिवृद्धि तुल्य उत्कर्षोन्मुख काल को उत्सर्पिणी काल के नाम से पहचाना जाता रहा है।

कालचक्र के अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी- इन दोनों चरणों में सुषमा-सुषम, सुषम, सुषमा-दु:षम, दु:षमा-सुषम, दु:षम और दु:षमा-दु:षम नामक छ: छ: आरक होते हैं। ये आरक अवसर्पिणी काल में अनुलोम तथा उत्सर्पिणी काल में प्रतिलोम गति से चलते हैं।

खण्ड-प्रलय- आज आप और हम जिस आरक में से गुजर रहे हैं वह अवसर्पिणी काल

का दु:षम नामक पंचम आरक है। 21 हजार वर्ष की स्थिति वाले इस पंचम आरक के अभी तक लगभग 2500 वर्ष गुजरे हैं, लगभग साढे अठारह हजार वर्ष अवशिष्ट रहे हैं। इस पंचम आरक की समाप्ति के पश्चात् इस अवसर्पिणी काल का 21,000 वर्ष की स्थिति वाला दु:षमा-दु:षम नामक छठा आरक प्रारंभ होगा। उस आरक के प्रारंभ होते ही अतिभीषण वृष्टियों, प्रलयंकर आंधियों एवं अग्निज्वाला तुल्य सूर्य की रश्मियों से प्राणिवर्ग का घोर संहार होगा। इन 10 क्षेत्रों में केवल बीज मात्र ही मानव एवं पशु-पक्षी आदि बचेंगे जो गंगा एवं सिन्धु नदी के दोनों तटों पर वैताढ्य पर्वत के बिलों (गुहाओं)में रहेंगे। अवसर्पिणी के दु:षम-दु:षम नामक 21 हजार वर्ष की स्थिति वाले छठे आरक के समाप्त होते ही 10 कोडा कोडी सागरोपम की स्थिति वाला अवसर्पिणी काल समाप्त हो जाएगा। अपकर्षोन्मुख अवसर्पिणी काल के समाप्त होते ही 10 कोडाकोडी सागरोपम का उत्कर्षोन्मुख उत्सर्पिणी काल प्रारंभ होगा। इसमें भी अवसर्पिणी के समान छः आरक होंगे पर वे प्रतिलोम क्रम से अर्थात् अवसर्पिणी काल के आरकों के उल्टे क्रम से होंगे। इस प्रकार उत्सर्पिणी काल का प्रथम आरक दु:षमा-दु:षम, द्वितीय आरक दु:षम, तृतीय आरक दु:षमा-सुषम, चतुर्थ आरक सुषमा-दु:षम, पंचम आरक सुषम और षष्ठ आरक सुषमा-सुषम होता है।

अवसर्पिणी काल के दु:षमा-दु:षम नामक छठे आरक के प्रारंभ में हुई खण्ड प्रलय के पश्चात् उस आरक की 21 हजार वर्ष की अवधि तक और उत्सर्पिणी काल के दु:षमा-दु:षम नामक प्रथम आरक की 21 हजार वर्ष की अवधि तक, इस प्रकार कुल मिला कर 42 हजार वर्ष तक पांच भरत तथा पांच ऐरावत- इन दसों क्षेत्रों के बीज रूप में बचे हुए मानव एवं पशु-पक्षी बिलों में ही निवास करते हैं।

अन्यान्य मतों की तरह जैन सिद्धान्त संपूर्ण विश्व का, समस्त संसार का प्रलय नहीं मानता। जैन सिद्धान्त की दृष्टि से पांच भरत और पांच ऐरवत-इन दश क्षेत्रों में खण्ड प्रलय होता है।

उस खण्ड प्रलय में भी मूल पदार्थ, मूल वस्तु कायम रहती है, बीज कभी खत्म नहीं होता।

गीता में भी एक सिद्धान्त है-नासतो विद्यते भावो, नाभावो विद्यते सत:। अर्थात् जो चीज असद् है, उसका कभी सद्भाव नहीं होता और जो सत् है उसका कभी अभाव अर्थात् विनाश नहीं होता। असत् की उत्पत्ति भी नहीं होती। मैं कह गया कि अवसर्पिणी के छठे तथा उत्सर्पिणी के प्रथम आरक में मनुष्य, पशु आदि जीवों का और भौतिक पदार्थों का बीज विद्यमान रहता है, पर आज की तरह हाट, हवेली, खाने-पीने, घूमने-फिरने की,

कर्म-धर्म की कोई सुविधाएँ उस समय नहीं मिलेंगी। लोग बड़े पीडित और अत्यन्त दुःखी रहेंगे बड़े संक्लेश का जीवन बितायेंगे। गंगा और सिंधु नदी के किनारे वे रहेंगे। वैताढ्य की खोहों-बिलों में रहेंगे।

युग प्रवर्तन- दुषमा दुषम नामक आरा समाप्त होते ही दुःषम नामक दूसरा आरा श्रावण की पडिमा अर्थात् श्रावण बदि 1 से प्रारंभ होगा। यह युग का प्रारंभ होगा। इस तरह के युग का प्रारंभ श्रावण की पडवा (प्रतिपदा) से माना गया है। जब काल बदलने को होता है और उत्सर्पिणी का पहला आरा समाप्त होता है और दूसरा आरा होता है तब श्रावण की पडवा से कुछ रंग बदलता है। प्रकृति में कुछ नवीनता आती है। कुछ सुख की लहर बढती है। एक-एक वर्षा एक-एक सप्ताह चलती है। एक-एक सप्ताह की पांच वर्षाएं होती हैं। इन पांच वर्षाओं के द्वारा धरती की गर्मी, ताप, जलन शान्त होकर उसमें उर्वरा शक्ति पैदा होती है। तृण-घास उत्पन्न होता है।

पांच सप्ताह वर्षा के और दो सप्ताह खुलने के, इस प्रकार श्रावण कृष्णा 1 से प्रारंभ हुए नवीन युग के 49 दिन बीत जाते हैं। जब भाद्रपद शुक्ला पंचमी का दिवस आया और वे बिलवासी बिलों से बाहर निकले, तो उन्होंने पहले की अपेक्षा पृथ्वी, आकाश, समस्त वातावरण और प्रकृति में पूर्णतः परिवर्तन पाया। वे आज तक नारकीय दुःखपूर्ण निकृष्ट वातावरण में कुत्सित आहार द्वारा येन केन प्रकारेण अपने पेट की ज्वाला को शांत करने का प्रयास करते हुए पापपूर्ण घृणित जीवन बिताते आ रहे थे। आज से पहले वे बिलवासी मनुष्य अपनी खोह से सुबह-शाम निकलते और निकल कर नदी के जलचर प्राणियों, मच्छ, कच्छ आदि को निकाल कर, मिट्टी में दबाकर सुबह का शाम और शाम का सुबह खाते थे। यह उनका जीवन था। अधर्मी और अनार्य जीवन था उनका। मांस का भक्षण करने वाले जीव थे वे।

एक पुनीत ऐतिहासिक निर्णय- लेकिन उन्होंने आज प्रातः देखा कि रजनी व्यतीत हो चुकी, मंगलमय प्रभात आया है। वे मंगलमय प्रभात की वेला में बाहर निकले। अपने-अपने बिलों से, अपना उदर-पोषण करने के लिए निकले। उन्होंने चारों ओर पृथ्वी को सस्यश्यामला, हरी-भरी, फल-फूलों से लदी देखा। वनस्पति और वनौषधियों की हरी-भरी वृक्षावली को देखा। यह सब देखते ही उनका मन गद्-गद् हो गया। यह सब देखकर वे एक सभा के रूप में एक स्थान पर एकत्र हुए। जिस प्रकार यहाँ अपनी धर्मसभा के शान्त वातावरण में चिंतन चलता है, वैसे ही वे भी चिंतन करने लगे- "हमारे सौभाग्य से हमारे जीवन में ये सुख की घडियाँ अब उपलब्ध हुई हैं और इन सुख की घड़ियों का लाभ हमें उठाना है। आज तक तो हम मांस-भक्षण पर अपना जीवन निर्भर रखकर चल रहे थे।

मछलियां खाते रहे, अन्यान्य जल-जन्तुओं का मांस भक्षण करते रहे, लेकिन आज हमको फल-फूलों से लदे वृक्ष मिल रहे हैं और अन्य द्रव्य इस धरती पर मिलने प्रारंभ हो गए हैं। प्रकृति ने हम पर अनुकंपा की है। ऐसी स्थिति में हमें क्या करना चाहिए? उन्होंने मिलकर निश्चय किया कि आज ही से हम लोगों में से कोई भी व्यक्ति मांस मच्छी का भक्षण नहीं करेगा। "वे लोग सर्व-सम्मति से यह निर्णय करते हैं। इस नियम का भविष्य में सदा कडाई से पालन हो, कोई इस नियम का उल्लंघन न करने पाए, इसके लिए उन्होंने दण्ड-व्यवस्था भी बनायी। (गजेन्द्र व्याख्यान माला भाग-1/ तृतीय संस्करण 1975 ब्यावर वर्षावास पर्युषण के आठवें दिवस का प्रवचनांश)

जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र के हिन्दी भावार्थ में श्री अमोलकऋषि जी म.सा. ने इस प्रकार उल्लेख किया- उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल का अधिकार-

1. सात दिन रात्रि तक पुष्कर नामक मेघ की वर्षा।
2. सात दिन रात्रि तक क्षीर नामक मेघ की वर्षा।
3. सात दिन रात्रि तक उघाड़ा रहा।
4. सात दिन रात्रि घृत नामक मेघ की वर्षा।
5. सात दिन रात्रि अमृत नामक मेघ की वर्षा।
6. सात दिन उघाड़ा (अवकाश) रहा।
7. सात दिन रात्रि रस नामक महामेघ की वर्षा।

वृक्ष-गुल्म-लता-वल्लि-तृण-हरित-औषधि-छाल-पत्र-पुष्प-प्रवाल-अंकुर उत्पन्न होने से मनुष्य बिल से बाहर निकल कर आनंदित होकर-आज दिन से जो अशुभ पुद्गल मांसादि का आहार करेगा उसकी छाया में भी दूसरों को खड़ा नहीं रहना, इस प्रकार की मर्यादा बांधते हैं। मांसाहार को छोडने की प्रतिज्ञा करते हैं। अवसर्पिणी काल के छठे आरे के इक्कीस हजार वर्ष, उत्सर्पिणी काल के पहले आरे के 21000 वर्ष बाद दूसरे आरे के प्रारम्भ में वर्षा बरसती हैं। श्रावण कृष्णा एकम् से दूसरा आरा प्रारंभ होता है। 49 दिवस अर्थात् सात सप्ताह पश्चात् पचासवें दिन वे लोग अभक्ष्य आहार नहीं करने कि प्रतिज्ञा लेते हैं, उसे संवत्सरी पर्व कहते हैं। (संघ की एकता के लिए समर्पित आचार्य भगवंत श्री हस्तीमल जी म.सा. 1956 के पूर्व भी इसी धारणा के थे जो 1976 के व्याख्यान से स्पष्ट है, पर शासन के गौरव को वर्धापित करने को ही वह प्रेरक पत्र (हस्तलिखित) लिखा था।)

(ख) आरे का प्रारम्भ-श्रावण कृष्णा प्रतिपदा-

यहाँ प्रथम प्रश्न यह उपस्थित किया जाता है "उत्सर्पिणी काल का दु:खम नामक

दूसरा आरा श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को प्रारंभ होना स्पष्ट नहीं है। जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति के वक्षस्कार 2 सूत्र 37 (सुत्तागमे, पृष्ठ 627) "**तीसे णं समाए इक्कवीसाए वाससहस्सेहिं काले वीइक्कंते आगमिस्साए उस्सप्पिणीए सावणबहुल-पडिवए बालवकरणंसि अभीइणक्खत्ते चोद्दसे पढमसमए अणंतेहिं पण्णपज्जवेहिं जाव अनंतगुणपरिवुड्ढीए परिवड्ढेमाणे 2 एत्थ णं दूसमदूसमा णामं समाकाले पडिवज्जिस्सइ समणाउसो।**

अर्थात् उस काल के अवसर्पिणी काल के छठे आरक के इक्कीस हजार वर्ष व्यतीत हो जाने पर आने वाले उत्सर्पिणी काल का श्रावण मास, कृष्ण पक्ष प्रतिपदा के दिन बालव नामक करण में चंद्रमा के साथ अभिजित नक्षत्र का योग होने पर चतुर्दशविध काल के प्रथम समय में दुषमा-दुषम नामक आरक प्रारम्भ होगा। उसमें अनंत वर्णपर्याय आदि अनंतगुण परिवृद्धि क्रम से परिवर्द्धित होते जाएंगे।

इस पाठ में श्रावण बदि प्रतिपदा को उत्सर्पिणी लगना बताया है उसके आगे के पाठ का उल्लेख करते हुए उल्लेख किया जाता है "तीसे णं समाए एक्कवीसाए वाससहस्सेहिं काले वीइक्कंते आणंतेहिं वण्णपज्जवेहिं जाव अणंत गुण परिवुड्ढीए परिवड्ढमाणे-2 एत्थ णं दूसमा णामं समाकाले पडिवज्जिस्सइ समणाउसो।

अर्थात् उस काल के उत्सर्पिणी के प्रथम आरक दुःषमा-दुषम के इक्कीस हज़ार वर्ष व्यतीत हो जाने पर उसका दुःषम नामक द्वितीय आरक प्रारम्भ होगा। उसमें अनंत वर्णपर्याय आदि अनंत-गुण-परिवृद्धि-क्रम से परिवर्द्धित होते जाएंगे।

इस वर्णन में श्रावण बदि प्रतिपदा से संबंधित पाठ को छोड दिया है। इस पाठ से तो यह स्पष्ट होता है कि दूसरा आरा श्रावण बदि प्रतिपदा को नहीं लगेगा। मात्र इतने पाठ को छोड़ने के पीछे आगमकारों का यही आशय हो सकता है कि शेष आरे श्रावण बदि प्रतिपदा को लगना निश्चित नहीं है।

समाधान- कोई भी सुज्ञ, विज्ञ, गहन गंभीर चिंतक इस पर माध्यस्थ्यभाव से विचार करे तो सूर्य के प्रकाश की भांति स्पष्ट है कि ऊपर वर्णित दुषमा-दुषम और दुषम आरे का यह उल्लेख एक ही सूत्र में निबद्ध है। जिसमें पूरे अवसर्पिणी का परिवर्तन होकर उत्सर्पिणी लगने वाली तिथि को स्पष्ट कह दिया तब उसी सूत्र में दूसरे आरे के लगने में उसी तिथि को वापिस कहने की आवश्यकता ही कहाँ रही? दूसरी तिथि होती तो अवश्य ही उसका उल्लेख होता। स्वयं भाष्यकारों को कहना पड़ा-

"**कत्थइ देसग्गहणं कत्थइ भणंति निरवसेसाइं।**
उक्कमकमजुत्ताइं, कारणवसओ निजुत्ताइं।।"

आगमकार कहीं पर देश का कथन करके सर्व का ग्रहण कर लेते हैं तो कहीं पर सभी बातें अलग-अलग खोलकर बता देते हैं। कहीं पर उत्क्रम से तो कहीं पर क्रम से कथन करते हैं। यह तो आगमकारों की शैली है। इसीलिए इतने मात्र से क्या उत्सर्पिणी का दूसरा आरा श्रावण बदि एकम् को नहीं लगने का कहा जा सकता है? इसी सूत्र का 35 वां सूत्र (सुत्तागमे-पृ.625) भी देख लें-

''तीसे णं समाए एक्काए सागरोवमकोडाकोडीए बायालीसाए वाससहस्सेहिं ऊणियाए काले वीइक्कंते अणंतेहिं वण्णपज्जवेहिं तहेव जाव परिहाणीए परिहायमाणे-2 एत्थ णं दूसमा णामं समाकाले पडिवज्जिस्सइ समणाउसो।''

अर्थात् आयुष्मन् श्रमण गौतम! उस समय के चतुर्थ आरक के बयालीस हजार वर्ष कम एक सागरोपम कोडाकोडी काल व्यतीत हो जाने पर अवसर्पिणी काल का दुषमा नामक पंचम आरक प्रारंभ होता है। उसमें अनंत वर्ण पर्याय आदि का क्रमश: ह्रास होता जाता है। इसमें भी अवसर्पिणी के इस दुषम नामक पांचवें आरे के लगने की तिथि का कोई उल्लेख नहीं फिर भी सभी एक मत से उसे श्रावण कृष्णा एकम् के रूप में ही स्वीकार करते हैं। कितना स्पष्ट है- ना यहाँ दु:षम नामक पांचवें आरे की लगने की तिथि कही, ना वहाँ 37 वें सूत्र में दु:षम नामक दूसरे आरे की लगने की तिथि, देहली दीपक न्याय से मध्य में 1 बार उत्सर्पिणी काल के लगने की तिथि कह दी। अत: अवसर्पिणी का पांचवा, छठा आरा और उत्सर्पिणी का पहला, दूसरा, तीसरा आरा श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को लगना आगम से स्पष्ट है।

ऐसा भी कहा जाता है- 4 गति की आयु एवं आरों का कालमान ऋतु संवत्सर से निर्धारित होता है पर यह बात भी युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होती-

(अ) **''इमीसे ओसप्पिणीए दुसमसुसमाए समाए बहुविइक्कंताए तिहिं वासेहिं अद्धणवमेहि य मासेहिं सेसेहिं पावाए मज्झिमाए हत्थिवालस्स रण्णो रज्जु (य) ग सभाए एगे अबीए छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं साइणा णक्खत्तेणं......सव्वदुक्खपहीणे।''** कल्पसूत्र के इस उल्लेख से पांचवें आरे के लगने से तीन वर्ष साढ़े आठ मास पूर्व भगवान महावीर के मोक्ष पधारने का कथन आज तक सभी इतिहासकार पुष्ट रूप से स्वीकार करते हैं। जरा सा गणित करके देखें-

ऋतुसंवत्सर- 1 मास में 30 दिन, वर्ष में 360 दिन

3 वर्ष 8½ मास के 1335 दिन

युग का अंत होने से अंत में आषाढ बढेगा और उसके ढाई वर्ष पूर्व भगवान

महावीर के निर्वाण के एक वर्ष पश्चात् पौष बढेगा अर्थात् 2 महीने बढेंगे। लगभग 1373 दिन होते हैं। इस तरह ऋतु संवत्सर में 38 दिन कम रह जाएंगे। 3 वर्ष साढ़े आठ महीने के पश्चात् भी त्रतु संवत्सर की तिथि श्रावण कृष्ण एकम् नहीं आ सकती। इसलिए ऋतुसंवत्सर से आरे का कालमान मानकर उत्सर्पिणी के दूसरा आरा श्रावण कृष्ण प्रतिपदा को नहीं लगता है, ऐसा मानना किसी भी प्रकार से उपयुक्त नहीं हो सकता।

(आ) इसी लेख में आगे विस्तार से बताए जा रहे गणित के अनुसार वर्तमान उपलब्ध लौकिक गणित के अनुसार 19 वर्ष में 7 मास की वृद्धि होती है। अंग्रेजी (ईस्वी सन्) के अनुसार 19 वर्ष में 6939 ¾ दिन आते हैं और हिंदी संवत्सर (विक्रम संवत्, शक , वीर निर्वाण आदि) के अनुसार भी लगभग इतने ही दिन आते हैं और ऋतु संवत्सर के 360 दिन को 19 से गुणा करने पर (360x19=6840 दिन होते हैं) लगभग 100 दिन का अंतर पड़ जाता है वो 100 साल में लगभग 524 दिन का अंतर ठहरता है, और 1000 साल में बढ़कर 5240 दिन का अंतर पड़ जाता है, जो ऋतु संवत्सर के 14 वर्ष 6 मास से कुछ अधिक होता है। वर्तमान में उपलब्ध इतिहास को देखा जाय तो बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि काल की गणना इस ऋतु संवत्सर से नहीं की गई है। बिन्दु 'ऋ' में वर्णित चारों के सामञ्जस्य वाले संवत्सर से की है।

भगवतीसूत्र शतक 20 उद्देशक 8 में- **''जंबुद्दीवे णं भंते! दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए देवाणुप्पियाणं केवइयं कालं पुव्वगए अणुसज्जिस्सइ? गोयमा! जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए ममं एगं वाससहस्सं पुव्वगए अणुसज्जिस्सइ।''** अर्थात् हे भगवन्! जंबूद्वीप के अन्तर्गत भारतवर्ष (भरत क्षेत्र) में इस अवसर्पिणीकाल में आप देवानुप्रिय का पूर्वगत श्रुत कितने काल तक (स्थायी) रहेगा? गौतम! इस जंबूद्वीप के भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में मेरा पूर्वगतश्रुत एक हजार वर्ष तक (अविच्छिन्न) रहेगा।

1000 वर्ष तक पूर्वश्रुत चलने का उल्लेख भगवती में आया।

वी.नि. संवत् 1000 विक्रम संवत् 530 (1000-470)

ईस्वी सन् 473 (1000-527)

अंतिम पूर्वधर देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण के नेतृत्व में वी.नि. 980 से 993 तक वल्लभी में आगम-लेखन का उल्लेख कल्पसूत्र में स्पष्ट आया है-**''समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स णव वाससयाइं विइक्कंताइं, दसमस्स य वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ। वायणंतरे पुण अयं तेणउए संवच्छरे काले गच्छइ इइ दीसइ।''** सभी इतिहासवेत्ता इस विषय में

एक मत हैं यदि इस काल को ऋतुसंवत्सर से माना जाए तो वी.नि. 985 वर्ष 6 मास में ही पूर्वश्रुत का विच्छेद होना ध्वनित होता है जो किसी को इष्ट नहीं है।

(इ) श्रीमद् लोकाशाह जी की क्रांति शुद्ध परंपरा को पुनः प्रतिष्ठित करने में विशेष उपकारी बनी। क्रांतिवीर लोकाशाह जी के गुणगान समस्त स्थानकवासी परंपरा समवेत स्वर में करती है। वी.नि. 2000 के लगभग इस क्रांति का उल्लेख होता है,, कल्पसूत्र में भी कहा गया है-''**जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे जाव सव्वदुक्खप्पहीणे तं रयणिं च णं खुद्दाए भासरासी णाम महग्गहे दो वाससहस्स ठिई समणस्स भगवओ महावीरस्स जम्मणक्खत्तं संकंते।।29।। जप्पभिइं च णं से खुद्दाए भासरासी महग्गहे दो वास सहस्स ठिई समणस्स भगवओ महावीरस्स जम्मणक्खत्तं संकंते तप्पभिइं च णं समणाणं निग्गंथाणं निग्गंथीण य णो उदिए उदिए पूयासक्कारे पवत्तइ।।130।। जया णं से खुद्दाए जाव जम्मणक्खत्ताओ विइक्कंते भविस्सइ तया णं समणाणं निग्गंथाणं निग्गंथीणं य उदिए पूयासक्कारे भविस्सइ**।।131।।

अर्थात् जिस रात्रि में श्रमण भगवान महावीर कालधर्म को प्राप्त हुए, यावत् उनके सम्पूर्ण दुःख नष्ट हो गए, उस रात्रि में भगवान् महावीर के जन्म नक्षत्र पर क्षुद्र क्रूर स्वभाव का दो हजार वर्ष तक रहने वाला भस्मराशि नामक महाग्रह आया था।।129।। जब से क्षुद्र क्रूर स्वभाव वाला, दो हजार वर्ष तक रहने वाला भस्मराशि नामक महाग्रह भगवान महावीर के जन्म नक्षत्र पर आया तब से श्रमण निर्ग्रन्थ और निर्ग्रंथिनियों के सत्कार और सम्मान में उत्तरोत्तर वृद्धि नहीं होती है।।130।। जब वह क्षुद्र क्रूर स्वभाव वाला भस्म राशि ग्रह भगवान् के जन्म नक्षत्र से हट जाएगा तब श्रमण निर्ग्रंथ व निर्ग्रंथनियों का सत्कार सम्मान दिन प्रतिदिन अभिवृद्धि को प्राप्त होगा।।131।।

यदि ऋतुसंवत्सर से गणना की जाए तो 2000 वर्ष में लगभग 29 वर्ष पहले ही अर्थात् वी.नि. 1971 में ही लोंकाशाह जी की क्रांति घटित हो जानी चाहिए थी, किन्तु इतिहास से स्पष्ट है कि

वी.नि. 2001 विक्रम संवत् 1531 (2001-470)

ईस्वी सन् 1474 (2001-527) में ही

क्रांतिवीर लोकाशाह ने शासन में आयी गिरावट, क्रिया में घुसे विकारों को अपने दृढ निश्चय , अदम्य साहस, शुद्ध प्ररूपणा से दूर किया था। अतः आगम के इन उल्लेखों, इतिहास के वर्णनों से यह पूरी तरह स्पष्ट हो जाता है कि आगम में वर्णित काल का उल्लेख सूर्य संवत्सर और चंद्र संवत्सर दोनों से ही नहीं चारों संवत्सरों से मेल खाता है क्योंकि 19

वर्ष में 7 अभिवर्द्धित मास के साथ में चंद्रसंवत्सर का सूर्य संवत्सर के साथ पूरा मिलाप हो जाता है और इसीलिए 19 वर्ष पश्चात् चंद्र संवत्सर (हिंदी वर्ष) और सूर्य संवत्सर (अंग्रेजी वर्ष) की तिथि और तारीख 1 दिन के अपवाद को छोड़कर प्राय: वही आती है। जिस ऋतु संवत्सर से गणना मान्य की जा रही, उससे होने पर आगम में वर्णित पूर्वश्रुत के विच्छेद (वी.नि.1000), भस्मग्रह का प्रभाव (वी.नि.2000) मेल नहीं खा रहे हैं जैसे मुस्लिम समुदाय जो मास वृद्धि नहीं करता है लगभग साढ़े बत्तीस वर्ष पश्चात् उनके त्यौहारों में 12 महीने का अंतर पड़ जाता है अर्थात् लगभग साढ़े बतीस वर्ष में हिजरी सन् का विक्रम संवत् और ईस्वी सन् से 1 वर्ष का अंतर घट जाता है। उनके त्यौहार बदलते हुए महीनों में देखे ही जाते है। वर्षा, सर्दी, गर्मी 12 ही महीनों में ईद, मोहर्रम बदलते रहते हैं।

(ई) 1000 वर्ष में साढ़े चौदह ऋतुवर्ष का अंतर पड़ जाता है, 21000 वर्ष में यँह अंतर 304 वर्ष 6 मास का होता है तो 84000 वर्ष में बढ़कर 1218 वर्ष तक का अंतर हो जाता है अर्थात् 84,000 ऋतुवर्ष =82,782 चंद्र या सूर्य वर्ष, जो किसी को भी मान्य नहीं। श्रेणिक राजा जी की प्रथम नरक की आयु 84,000 वर्ष झाझेरा इसी 84,000 वर्षो के पश्चात् दुषमा सुषम नामक उत्सर्पिणी के तीसरा आरा लगने पर पूर्ण होगी। ये सभी आदित्य संवत्सर से ही गिने जाते हैं।

(उ) भगवान महावीर का छद्मस्थकाल ऋतुसंवत्सर से ही 12 वर्ष 6 माह 1 पक्ष होने की धारणा वाले जिज्ञासु के अंतर में एक जिज्ञासा पुन: उठी- कल्पसूत्र (श्री देवेन्द्रमुनि जी) पृ. 185-186, जैन धर्म का मौलिक इतिहास (भाग 1 पृ. 396)

भगवान का तप

एक छ मासी तप	180 दिन
एक पांच दिन न्यून छ: मासी	175 दिन
नौ चातुर्मासिक 9 × 120	1080 दिन
दो त्रिमासिक 2 × 90	180 दिन
दो सार्ध द्विमासिक 2 × 75	150 दिन
छह द्विमासिक 6 × 60	360 दिन
दो सार्धमासिक 2 × 45	90 दिन
बारह मासिक 12 × 30	360 दिन
बहत्तर पाक्षिक 72 × 15	1080 दिन
एक भद्र प्रतिमा (दो दिन)	2 दिन

एक महाभद्र प्रतिमा (चार दिन)	4 दिन
एक सर्वतोभद्र प्रतिमा (दस दिन)	10 दिन
बारह अष्टमभवत 12 × 3	36 दिन
दो सौ उनतीस छट्ठ भक्त 229 × 2	458 दिन
तप के कुल दिन-	4165
पारणे के	349
1 दिन दीक्षा (पूर्व का बेला)	1
	4515 दिन

$$\frac{4515 \text{ दिन}}{\text{ऋतु संवत्सर के 360 दिन}} = \text{12 वर्ष 6 माह 1 पक्ष} = \text{12 वर्ष 13 पक्ष}$$

ठाणांग 9- ''दुवालस संवच्छराइं तेरस पक्खा छउमत्थ परियागं पाउणित्ता'' शास्त्र में भी इतना ही काल कहा- अत: छद्मस्थ पर्याय का काल ऋतु संवत्सर से ही मानना चाहिए (आयु, कालचक्र भी)

समाधान- नहीं भैया। ऐसा कहना भी युक्ति संगत नहीं है।

आचारांग 2/15 में कहा-''तेणं कालेणं तेणं समएणं जे से हेमंताणं पढमे मासे पढमे पक्खे मग्गसिरबहुले, तस्स णं मग्गसिरबहुले, तस्स णं मग्गसिरबहुलस्स दसमी पक्खेणं, सुव्वएणं दिवसेणं, विजएणं मुहुत्तेणं, दशुत्तरानक्खत्तेणं जोगोवगएणं......सिद्धाणं नमोक्कारं करेइ करेत्ता, सव्वं मे अकरणिज्जं पाव कम्मं ति कट्टु सामाइयं चरित्तं पडिवज्जइ।''

सार-मृगशीर्ष कृष्णा दशमी, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र को दीक्षा अंगीकार की। उसी आचारांग सूत्र में- ''......बारसवासा वीइक्कंता, तेरसमस्स वासस्स परियाए वट्टमाणस्स जे से गिम्हाणं दोच्चे मासे चउत्थे पक्खे वइसाहसुद्धे, तस्स णं वइसाह सुद्धस्स दसमीपक्खेणं हत्थुत्तराहि णक्खत्तेणं....केवलवरणाणदंसणे समुप्पण्णे।''

12 वर्ष बीते, तेरहवें वर्ष वैशाख शुक्ला दशमी उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र केवलज्ञान। 12 वर्ष 6 माह 1 पक्ष-छद्मस्थ पर्याय।

1 युग (5 वर्ष) स्थूल रूप से 1830 दिन (औघिक)

सूक्ष्म रूप 1826 ¼ दिन (विभाग निष्पन्न)

12 वर्ष 6 माह = ढाई युग

1826 ¼ गुणा 5/2 = 913 ⅛ गुणा 5=4565 ⅝ दिन

जबकि ऋतु संवत्सर से = 4515 दिन। अतः 50 ⅝ दिन का अंतर है।

सामान्यत: युग के दिनों से गुणा दिखाया गया। माह बनाकर चंद्रमाह के दिवस से गुणा करने पर 4562 से अधिक एवं 4563 से कम आते हैं। अर्थात् ऋतु संवत्सर से केवलज्ञान की तिथि वैशाख शुक्ला दशमी से 50 दिन पूर्व चैत्र कृष्णा पंचमी आएगी-नक्षत्र विशाखा या आगे पीछे का होगा जो आगमन बाधित है। अत: छद्मस्थ काल भी ऋतु संवत्सर से नहीं होता। 4515/27 =167 व ऊपर 6 बचे।

प्राय: 28 वें दिन वही नक्षत्र- 6 बचे- उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा विशाखा, स्वाति-गणना में भी विशाखा या स्वाति आया। स्पष्ट है यहाँ ऋतु संवत्सर से गणना नहीं है। आदित्य और चंद्र संवत्सर से 4565 दिन में 27 का भाग देने पर 4565/27= 169; बचा 2 (उत्तराफाल्गुनी-1 या हस्त-2) आते हैं, नजदीक के पिछले नक्षत्र कुछ अधिक घडी के होने पर उत्तराफाल्गुनी बैठ जाता है। विभागश: महीने बनाने पर 4563 दिन आए जो पूरी तरह उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के निकट है। अत: छद्मस्थकालीन तिथि व नक्षत्र स्पष्ट बता रहे हैं कि आगम में तप विशिष्ट का काल ऋतुमास से है जैसे गुणरत्न तप 16 मास का पर छद्मस्थकाल ऋतुमास से नहीं। आगम भी पुष्ट प्रमाण से कह रहा है-
''छट्ठेण एगया भुंजे, अदुवा अट्ठमेणं दसमेणं। दुवालसमेण एगया भुंजे, पेहमाणो समाहि अपडिण्णे।।'' आचारांग 1/9/4, गाथा 7

अर्थ- वे कभी बेले के अनन्तर कभी तेले, कभी चोले और कभी पचोले के अनन्तर भोजन करते थे। भोजन के प्रति प्रतिज्ञारहित (आग्रह मुक्त) होकर वे समाधि का प्रेक्षण करते थे।

आवश्यक निर्युक्ति की गाथा 526 से 535 तक के विवेचन से कल्पसूत्र व इतिहास में 4515 दिन का कथन किया- दोनों ही ग्रंथों में आचारांग की तपस्या का भी सूचन किया गया है। आचारांग प्रथम अंग है, गणधर भगवंतों द्वारा प्रणीत है, वह प्रामाणिकता में अग्रणी स्थान रखता है। उसमें चोले, पचोले करने का उल्लेख आया, जो निर्युक्ति के तप विवरण में है ही नहीं। केवल 4515 दिन ऋतु संवत्सर से 12 वर्ष 13 पक्ष का मेल खाने से ग्रहण कर शेष की गणना छूट जाना स्पष्ट दीख रहा है। अत: आगम प्रमाण से पूरी तरह स्पष्ट है कि छद्मस्थ काल 4515 दिन का नहीं हो सकता, कभी चोले से, कभी पचोले से स्पष्ट ही है कि कुछ चोले, कुछ पचोले अवश्य हुए। यदि 4 चोले और 5 पचोले मानें तो

तप	तप दिन	+	पारणा दिन	=	कुल दिन
4 चोले	16	+	4	=	20
5 पचोले	25	+	5	=	30
	41	+	9	=	50 दिन

50 दिन में और दूसरे विकल्प भी हो सकते हैं- पर छद्मस्थकाल ऋतुसंवत्सर से कहना उपयुक्त नहीं, आदित्य संवत्सर की प्रधानता से ही कालगणना है। युग में शेष तीनों को उससे तुल्य कर ही दिया जाता है।

(ऊ) ठाणांग सूत्र के 9 वें ठाणे में ''**अहं तीसं वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता मुंडे भवित्ता जाव पव्वइए दुवालस संवच्छराइं तेरस पक्खा छउमत्थपरियागं पाउणित्ता तेरसेहिं पक्खेहिं ऊणगाइं तीसं वासाइं केवलिपरियागं पाउणित्ता बायालीसं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता वावत्तरि वासाइं सव्वाउय पालइत्ता वि.स.**'' अर्थात् मैं 30 वर्ष घर में रहकर मुंडित हुआ यावत् प्रव्रजित हुआ। 12 वर्ष 13 पक्ष छद्मस्थपर्याय को पालकर 13 वर्ष कम 30 वर्ष केवलिपर्याय का पालन कर कुल 42 वर्ष की श्रमण पर्याय का पालन कर 72 वर्ष की आयु पालकर सिद्ध होऊँगा। यावत् सर्व दु:खों का अंत करूँगा।

भगवान् महावीर की आयु 72 वर्ष झाझेरा समवायांग-72 में ''**समणे भगवं महावीरे बावत्तरिं वासाइं सव्वाउयं पालइत्ता सिद्धे बुद्धे जावप्पहीणे।**'' श्रमण भगवान महावीर बहत्तर वर्ष की सर्व आयु भोग कर सिद्ध, बुद्ध, कर्मो से मुक्त, परिनिर्वाण को प्राप्त कर सर्व दु:खों से रहित हुए। तथा कल्पूसत्र में- ''**तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे तीसे वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता साइरेगाइं दुवालस देसणाइं तीसं वासाइं केवलिपरियागं पाउणित्ता बायालीसं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता वासाइं छउमत्थपरियागं पाउणित्ता बावत्तरिं वासाइं सव्वाउयं पालइत्ता खीणे वेयणिज्जाउयणामगुत्ते इमीसे ओसप्पिणीए दुसमसुसमाए.... सव्वदुक्खप्पहीणे।**'' अर्थात् उस काल उस समय श्रमण भगवान महावीर 30 वर्ष तक गृहवास में रहकर, बारह वर्ष से भी अधिक समय तक छद्मस्थ श्रमण पर्याय में रहकर, उसके पश्चात् 30 वर्ष से कुछ कम समय तक केवलपर्याय को प्राप्त कर, कुल 42 वर्ष तक श्रमण पर्याय का पालन कर, 72 वर्ष की आयु पूर्ण वेद कर.......। अर्थात् आचारांग, ठाणांग, समवायांग, कल्पसूत्र सभी समवेत स्वर में कह रहे हैं- गृहस्थावस्था 30 वर्ष, दीक्षा पर्याय-42 वर्ष जिसमें छद्मस्थ पर्याय लगभग 12 ½ वर्ष, केवली पर्याय लगभग साढ़े 29 वर्ष- कुल आयु 72 वर्ष ऋतु संवत्सर से गिनने पर इसके

चंद्र, सूर्य वर्ष 71 वर्ष झाझेरा ही बन पाएंगे जो किसी को भी मान्य नहीं। श्रमण जीवन के 42 वर्षावास का स्पष्ट उल्लेख उपलब्ध है, ऋतु संवत्सर से 1 चौमासा कम हो जायेगा, दीपावली पर निर्वाण नहीं आयेगा।

जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति, अनुयोगद्वार आदि सूत्रों में सामान्य काल गणना करते हुए ऋतु संवत्सर से वर्षों को बताया गया। उसी को अभिवर्द्धित मासों के साथ चंद्र संवत्सर और सूर्य संवत्सर के रूप में विशेष रूप में से निर्देशित किया गया, कालगणना में यही चंद्र और सूर्य संवत्सर उपयोगी है। निधि, मास, अयन वर्ष आदि में इन्हीं का प्रयोग होता है, ऋतुसंवत्सर का नहीं।

(ऋ) यदि ऋतुसंवत्सर से संवत्सरी की गणना की जाए तो वह भी हर वर्ष 5-6 दिन पहले खिसकती जाएगी, 1 वर्ष भादवा शुदि पंचमी अगले वर्ष भादवा कृष्णा अमावस्या को फिर भादवा बदि दसमी, भादवा बदि पंचमी और इस तरह 73 वर्ष पश्चात् ही भादवा शुदि पंचमी को आ पाएगी। अनिष्ट हो जायेगा।

(ॠ) समवायांग सूत्र इस विषय को बिल्कुल स्पष्ट कर रहा है-"**पंच संवच्छरियस्स णं जुगस्स रिउमासेणं मिज्जमाणस्स इगसट्ठिं उऊमासा पण्णत्ता।।61।।**" अर्थात् पंचसंवत्सर वाले युग के ऋतु-मासों से गिनने पर इकसठ ऋतु मास होते हैं। तथा "**पंचसंवच्छरिए णं जुगे वासट्ठिं पुण्णिमाओ बासट्ठिं अमावसाओ पण्णत्ताओ।।62।।**" अर्थात् पंचसांवत्सरिक युग में बासठ पूर्णिमाएँ और बासठ अमावस्याएँ कही गई हैं। "पंच **संवच्छरियस्स णं जुगस्स णक्खत्तमासेणं मिज्जमाणस्स सत्तसट्ठिं णक्खत्तमासा पण्णत्ता।।67।।**" अर्थात् पंचसांवत्सरिक युग में नक्षत्र मास से गिनने पर सडसठ नक्षत्रमास कहे गए हैं।

चंद्र मास से 1 युग (5 संवत्सर) में प्राय: 1830 दिन, ऋतुमास से 61 मास = 1830 दिन और नक्षत्र संवत्सर में 61 मास= 1830 दिन अर्थात् काल गणना में 1 युग में 1 ऋतुमास को अधिक गिनना अर्थात् आगमकार 1 युग में सूर्यसंवत्सर, चंद्र संवत्सर, नक्षत्र संवत्सर और ऋतुसंवत्सर चारों का पूर्ण सामंजस्य बिठा देते हैं। इसी गणना से जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति और अनुयोगद्वार सूत्र में चारों का सामंजस्य है और इसी से 4 गति की आयु का एवं आरों का कालमान आदि होता है।

यहाँ यह निर्विवाद स्पष्ट हुआ कि अवसर्पिणी का 5 वां, छठा आरा और उत्सर्पिणी का पहला व दूसरा आरा श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को ही लगेगा।

(ए) संवत्सरी की चर्चा में सीधा संबंध नहीं होने पर भी आरों के परिवर्तन की तिथि के निर्णय में प्रासंगिक होने से यहाँ प्रत्येक वर्ष, प्रत्येक युग, प्रत्येक आरे और प्रत्येक

कालचक्र के संबंध में कुछ विचार किया जा रहा है- चंद्रप्रज्ञप्तिसूत्र के दसम पाहुड के 19 वें पाहुडपाहुड में-''**एगमेगस्स णं संवच्छरस्स बारस मासा पण्णत्ता......तत्थ लोइया णामं तं सावणे भद्दवाए आसोए जाव आसाढे**'' तथा 20 वें पाहुडपाहुड में- ''**जुगसंवच्छरे णं पंचविहे पण्णत्ते तंजहा चंदे-चंदे अभिवड्ढिए चंदे अभिवड्ढिए चेव.....।**'' और जंबूद्वीप्रज्ञप्ति सूत्र के 7वें वक्षस्कार (सुत्तागमे सूत्र-152) में भी यही वर्णन है। इससे स्पष्ट होता है कि संवच्छर चाहे कोई भी हो पहिला महीना सावण ही होगा। जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र के वक्षस्कार 7 में स्पष्ट कहा है- ''**सावणाइया मासा**''। जैन परम्परा में आषाढ़ के महीने को अंतिम महीना कहा जाता है। प्रत्येक वर्ष का प्रारंभ श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को ही होता है, भले ही वह भरत क्षेत्र का हो या ऐरावत का, महाविदेह में भी संवत्सरी का पर्व मान्य किया जाता है और वह इसी श्रावण कृष्णा प्रतिपदा के 1 मास 20 दिन पश्चात् स्वीकृत किया जाता है, अत: यह निर्विवाद है कि किसी भी आगमिक वर्ष का प्रारंभ श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को ही होगा और 15 ही कर्मभूमि क्षेत्रों में जहाँ भी जब भी संवत्सरी का महापर्व मनाया जाएगा वही 1 माह 20 दिन बीतने पर मनाया जाएगा।

बड़ी विचित्र बात है 2012 का ईस्वी सन् 1 जनवरी को लगे, 2005 का भी 1 जनवरी को लगे, 2025 का भी 1 जनवरी को लगे और मि र कोई यह कहे कि ईस्वी सन् 3000 1 जनवरी को नहीं लगेगा, ऐसा कैसे संभव है? ठीक इसी प्रकार न केवल पांचवा, छठा आरा, अपितु प्रत्येक अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी काल, इनके छहों आरे और महाविदेह क्षेत्र का प्रत्येक नया वर्ष श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को लगना आगम से स्पष्ट ध्वनित हो रहा है।

अभिवर्द्धित संवत्सर में जहाँ पर भी मासवृद्धि का कथन है, वहाँ यही आया है। युगमध्य में पौष और युगान्त में आषाढ़, प्रत्येक पंचवर्षीय युग का अन्त आषाढ़ महीने में होता है, पूर्व में वर्णित कर आए हैं- इस युग में 60 आदित्य मास, 61 ऋतुमास, 62 चंद्र मास और 67 नक्षत्र मास होते हैं, युग के अंत में चारों का मिलाप हो जाता है। ऐसे 4,200 युग के 21,000 वर्ष होते हैं अतः उस 21,000 वर्ष का अंत भी आषाढ़ी पूर्णिमा को ही होगा और नए आरे का प्रारंभ श्रावण प्रतिपदा को ही होगा। इसी प्रकार उत्सर्पिणी काल पूरा होता है, अवसर्पिणी का प्रारंभ भी इन्हीं तिथि में होगा। 4 कोडाकोडी सागरोपम, 3 कोडाकोडी सागरोपम, 2 कोडाकोडी सागरोपम सब का अंत आषाढ़ी पूर्णिमा को ही चंद्र प्रज्ञप्ति, जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति से स्पष्ट होता है।

(ऐ) यहाँ पुनः प्रश्न उपस्थित होता है कि जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति के दूसरे वक्षस्कार में-''**उसभे णं अरहा एगं वाससहस्सं छउमत्थपरियागं पाउणित्ता एगं पुव्वसयसहस्स**

वाससहस्सूणं केवलिपरियायं पाउणित्ता एगं पुव्वसयसहस्सं बहुपडिपुण्णं सामण्णपरियायं पाउणित्ता चउरासीइं पुव्वसयसहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता जे से हेमंताणं तच्चे मासे पंचमे पक्खे माह बहुले तस्सणं माहबहुलस्स तेरसी पक्खेणं दसहिं अणगारसहस्सेहिं सद्धिं संपरिवुडे अट्ठावयसेल- सिहरंसि चोद्दसमेणं भत्तेणं अपाणएणं संपलियंकणिसण्णे पुव्वण्हकालसमयंसि अभीइणा णक्खत्तेणं जोगमुवागएणं सुसमदुसमाए समाए एगूणणवउईहिं पक्खेहिं सेसेहिं कालगए वीइक्कंते जाव सव्वदुक्खप्पहीणे।'' भगवान ऋषभदेव एक हजार वर्ष छद्मस्थ पर्याय में रहे। 1000 वर्ष कम 1 लाख पूर्व केवलि पर्याय। इस प्रकार एक लाख पूर्व तक श्रमण पर्याय का पालन कर 84 लाख पूर्व का पूर्ण आयुष्य भोगकर हेमंत के तीसरे मास में, 5वें पक्ष में माघ कृष्ण तेरस के दिन 10,000 साधुओं से संपरिवृत्त अष्टापद पर्वत के शिखर पर छह दिनों के निर्जल उपवास में पूर्वाह्न काल में पर्यंकासन में अवस्थित चंद्र योग युक्त अभिजित नक्षत्र में सुषम दुःषमा आरक में 89 पक्ष कम थे, तब वे सर्व दुःख रहित हुए। अर्थात् भगवान ऋषभदेव के मोक्षगमन के 1 कम 90 पक्षों के बाद तीसरे आरे का समापन बताया गया। अतः इससे आषाढ़ की पूनम को तीसरे आरे का समापन कैसे माना जाय, इस पर गणना की जाय तो-

1. पहला वर्ष पौष की पूर्णिमा तक (युगमध्य होने से 1 पौष का महीना बढ़ा)- 13 महीने के 26 पक्ष।
2. दूसरे वर्षकी पौष की पूर्णिमा तक- 12 महीने के 24 पक्ष।
3. अगले पौष की पूर्णिमा आषाढ़ मास बढ़ने से- 13 महीने के 26 पक्ष
4. माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ 6 मास- 6 महीने के 12 पक्ष।

इस तरह 88 पक्ष (अमावस्या-पूर्णिमा) पूर्ण हो जाते हैं और 89 वां पक्ष लगता है तब युग बदलता है। सूर्योदय के पूर्व रात्रि में श्रावण कृष्ण एकम् को 89 वां पक्ष प्रारंभ हो चुका है, सूर्योदय पर सुषमा सुषम नामक 4 थे आरे का प्रारंभ होता है। अतः जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति का कथन भी यही ध्वनित कर रहा है कि प्रत्येक आरे के समान चतुर्थ आरा भी श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को ही लगा।

इसे दूसरे रूप में भी गिना जा सकता है- 1. माघ= 2 पक्ष (कृष्ण, शुक्ल)।

2. इस वर्ष आषाढ़ बढ़े तो आषाढ़ तक-

(फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, आषाढ़)	6×2= 12 पक्ष
3. अगले वर्ष के आषाढ़ तक-	12×2= 24 पक्ष
4. अगले वर्ष के आषाढ़ तक-	12×2= 24 पक्ष

5. अगले वर्ष के आषाढ़ तक (पौष मास वृद्धि) के कारण 13×2= 26 पक्ष

88 पक्ष

यह केवल गणना के लिए दिखाया है, अन्यथा युग का अंत होने से ऊपरवाली गणना के अनुसार पहले पौष बढ़कर ही आषाढ़ बढ़ने की संभावना है।

आषाढ़ तक 88 पक्खी पूरी हुई (चौमासी सहित) 89 वां पक्ष पूर्णिमा की घडियाँ रात्रि के पूर्ण होने के पूर्व समाप्त हो गयी। 89 वां पक्ष श्रावण कृष्णा का प्रारंभ हो गया, सूर्योदय पर नवीन आरा प्रारम्भ हुआ- इस अपेक्षा आगम में आ गया **'एगूणणवउहेहि पक्खेहि सेसेहि'** 89 पक्ष के प्रारंभ के साथ नया आरा लगता है, यह आगम की शैली है, जिससे हम सुपरिचित हो ही गए हैं। जैसे 48-49 दिन को भी 1 मास 20 दिन कह दिया जाता है और 68-69 दिन को 70 वां दिन समझ लिया जाता है। इसे हम एक उदाहरण से समझ सकते हैं- एक यात्री माघ कृष्णा त्रयोदशी (वि.2066) को रात्रि में विश्रामालय में गया, वहां के प्रबंधकों से जानकारी मिली कि यहाँ प्रत्येक पक्ष के हिसाब से किराया लगता है भले ही चाहे 1 घंटा रुको, 1 दिन रुको चाहे पूरा पक्ष। श्रावण कृष्णा प्रतिपदा (वि.2070) सूर्योदय के समय विश्रामालय खाली करने पर प्रबंधक उसे बिल थमाएंगे।

2066 माघ कृष्णा-पहला पक्ष = 1 पक्ष

2066 माघ शुक्ला, फाल्गुन कृष्णा, फाल्गुन शुक्ला, चैत्र कृष्णा = 4 पक्ष

2067 वैसाख महीना बढ़ने से 13 महीने के = 13×2 = 26 पक्ष

2068 12 महीने के = 12×2 = 24 पक्ष

2069 भादवा बढ़ने से 13 महीने के = 13×2 = 26 पक्ष

2070 चैत्र शुक्ला, वैशाख कृष्णा, वैशाख शुक्ला, ज्येष्ठ कृष्णा,
ज्येष्ठ शुक्ला, आषाढ़ कृष्णा, आषाढ़ शुक्ला = 7 पक्ष

रात्रि में 2 बजे पूर्णिमा पूर्ण हो गयी और श्रावण कृष्ण पक्ष
प्रारंभ हो गया, अतः जब विश्रामालय खाली कर रहा है तब
श्रावण कृष्णा 2070 लग चुका है भले ही तब 4 घंटे ही रुका
अतः उसका 1 पक्ष के हिसाब से = 1 पक्ष

89 पक्ष

इस प्रकार उस राहगीर को 89 पक्ष का बिल थमाया जाएगा।

जिज्ञासु फिर कहता है यह तो केवल बात को जमाने के लिए विवेचन बिठाया है, अन्यथा देखिए इन दोनों गणितों को

	भगवान ऋषभदेव	भगवान महावीर
(1) पक्ष को माह में बदलें-	(1) 89 पक्ष 89/2= 44 माह 1 पक्ष 44/12= 3 वर्ष 8 माह 1 पक्ष 3 वर्ष साढ़े आठ मास	3 वर्ष साढ़े आठ मास

दोनों बराबर ही तो है

(2) माह को पक्ष में बदलें-	89 पक्ष	3 वर्ष साढ़े आठ मास 3 वर्ष × 12 = 36 मास 36 मास+8 = 44 मास 44 मास×2 = 88 पक्ष 88 + 1 पक्ष = 89 पक्ष

स्थूल दृष्टि से दोनों बराबर ही तो है। किन्तु सूक्ष्म दृष्टि से इसका आगम सम्मत समाधान देखा जाए-

पक्ष के वर्ष बनाकर

(3) 44 माह 1 पक्ष — 3 वर्ष साढ़े आठ मास

बीच में 2 महीने बढ़े हुए होने से
4 पक्ष उसके गए, माघ बदि त्रयोदशी से
माघ बदि अमावस्या तक का भी
1 पक्ष कहलायेगा इसमें अंतिम
स्पर्शवाले को जोड़ें तो 6 पक्ष हो गये।
89-6= 83 पक्ष के 3 वर्ष साढ़े पांच
माह ही होते हैं। अर्थात् 3 महीने
(6 पक्ष) का अंतर है।

स्पष्ट है दोनों गणनाओं में अंतर है। दोनों गणना में 3 महीने का अंतर है।

वर्ष के पक्ष बनाकर

(4) 89 पक्ष	3 वर्ष साढ़े आठ मास 3 वर्ष के माह 12×3=36 माह इसमें 2 माह बढ़े हुए हैं, अतः 38 माह 38 माह + 8 माह = 46 माह 1 माह में 2 पक्ष, अतः 46×2=92 पक्ष 1/2 माह का 1 पक्ष, अतः 92+1=93 पक्ष अमावस्या की रात्रि के पक्ष को जोड़ा जाए और आरे के प्रारंभ के पक्ष का जोड़ा जाए तो 95 पक्ष अर्थात् 6 पक्ष (3 महीने) का अंतर है।
अतः जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति में भगवान ऋषभदेव के वर्णन में 'एगूणणवउर्हहिं पक्खेहि'	कल्पसूत्र में भगवान महावीर के वर्णन में 'तिहिं वासेहिं अद्धणवमेहिं य मासेहिं'

दोनों स्थलों पर दो अलग शैली का प्रयोग किया गया है, जो आगमकारों की विलक्षणता, विचक्षणता के साथ में हमें भावित करता है, प्रभावित करता है-**''इणमेव निग्गंथं पावयणं सच्चं।''**

कालचक्र के वर्णन को इतना लंबा क्यों किया जा रहा है? ऐसा प्रश्न भी उपस्थित हो सकता है।

''मूलाउ खंधप्पभवो दुमस्स, खंधाउ पच्छा समुविंति साहा।
साहप्पसाहा विरुहति पत्ता, तओ सि पुप्फं च फलं रसो य।।1।।''

-दशवैकालिक 9/2

वृक्ष के मूल से स्कन्ध की उत्पति होती है, स्कन्ध से शाखाएँ, शाखाओं से प्रशाखाएँ तथा प्रशाखाओं से पत्ते उत्पन्न होते हैं। इसके अनन्तर उस वृक्ष में फूल, फल और और फल में रस आता है।

मूल से ही शाखा, प्रशाखा, पत्र, पुष्प, फल, बीज पनपते हैं, सुरक्षित रहते हैं और चर्चा- वार्ता के प्रसंग में तर्क दिया गया था- **'मूलं नास्ति कुतः शाखा?'** से जब आगम से दूसरा आरा श्रावण बदि प्रतिपदा को लगना ही स्पष्ट नहीं है तब पचासवें दिन संवत्सरी की बात कैसे कही जाती है?' इसलिए इसे विस्तार से स्पष्ट करने का प्रसंग चल रहा है।

(ओ) पुनः एक समस्या उपस्थित होती है- जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति एवं अनुयोगद्वार सूत्रों में 3773 श्वास का 1 मुहूर्त, 30 मुहूर्त का अहोरात्र, 30 अहोरात्र का 1 मास, 12 मासों का वर्ष, 100-100 वर्षों से 1-1 बालाग्र निकालने से पल्योपम, सागरोपम; इसी से 4 गति के आयु एवं आरों का कालमान होता है इसलिए इसे काल प्रमाण में गिनाया है। (जंबूद्वीप वक्षस्कार 2 में भी)।

अनुयोगद्वार सूत्र में काल प्रमाण में समय से शीर्ष प्रहेलिका तक को गणना का विषय कहकर शेष को उपमा का विषय कहा गया, पल्योयम-सागरोपम को उपमा में गिनकर 100-100 वर्षों में 1-1 बालाग्र को निकालने की चर्चा की गई, वहाँ सामान्य गणना का तरीका मात्र बताया है, जो स्थूल दृष्टि से उचित है। सूक्ष्म में प्रवेश करने के लिए समवायांग सूत्र के 61,62,67 वें समवाय में उसे स्पष्ट कर दिया-

''पंचसंवछरियस्स णं जुगस्स रिउमासेणं मिज्जमाणस्स इगसट्ठिं उऊमासाओ पण्णत्ताओ।।61।।

पंचसंवच्छरियस्स णं जुगे वासट्ठिं पुण्णिमासाओ बासट्ठिं अमावसाओ पण्णत्ताओ।।62।।

पंचसंवच्छरियस्स णं जुगस्स णक्खत्तमासेणं मिज्जमाणस्स सत्तसट्ठिं णक्खत्तमासा पण्णत्ताओ।।67।।

अर्थात् पंचसंवत्सर वाले युग के ऋतु मासों से गिनने पर इकसठ ऋतु मास होते हैं।।61।।

पंचसांवत्सरिक युग में बासठ पूर्णिमाएँ और बासठ अमावस्याएँ कही गई हैं।।62।।

तथा पंचसांवत्सरिक युग में नक्षत्र मास से गिनने पर सड़सठ नक्षत्र मास कहे गए हैं।।67।।

जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र के 7 वें वक्षस्कार में दोनों का सामंजस्य करके चमत्कारिक भाषा का प्रयोग हुआ-**''पंचसंवच्छरिए णं भंते! जुगे केवइया अयणा केवइया उऊ एवं मासा पक्खा अहोरत्ता केवइया मुहुत्ता पण्णत्ता? गोयमा! पंचसंवच्छरिए णं जुगे दस अयणा तीसं उऊ सट्ठि मासा एवं वीसुत्तरे पक्खसए अट्ठारसतीसा अहोरत्तसया चउप्पण्णं मुहुत्त- सहस्सा णव मासा पण्णत्ता।।54।।''** अर्थात् 5 संवत्सर के 1 युग में 10 अयन, 30 ऋतु, 60 मास, 120 पक्ष, 1830 अहोरात्र, 54900 मुहूर्त होते हैं।

इस एक ही सूत्र में स्थूल और सूक्ष्म दृष्टि को रख दिया, 120 पक्ष तक स्थूल

दृष्टि पश्चात् सूक्ष्म दृष्टि से दर्शाया। इस सूक्ष्म दृष्टि का भी संशोधन अनिवार्य है, जिसके सूत्र हमारे पास वर्तमान में विलुप्त प्रायः हो गए हैं। गणना में युग के 1830 दिन के स्थान पर 1826 1/4 दिन होते हैं अर्थात् 3 3/4 दिन का संशोधन और अनिवार्य है। किसी एक व्यक्ति से पूछा जाए- 1 साल में कितने दिन? स्थूल दृष्टि से यही जवाब आएगा 365 दिन तो 4 साल में (365×4) 1460 दिन, किंतु 1 बार फरवरी 29 की आने से इनकी संख्या 1461 होती है इसलिए कोई बोले 365 दिन का वर्ष और 4 वर्ष में 1461 दिन तो स्थूल दृष्टि से यह गलत ही प्रतीत होगा, इसी प्रकार जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र में 1 युग में स्थूल दृष्टि से 60 मास कहने पर भी 1830 अहोरात्रि कही, जो 61 ऋतुमास में होती है, समवायांग सूत्र में उसे स्पष्ट रूप से कह दिया। **अतः यह निर्विवाद सिद्ध हुआ कि एक युग में चंद्र संवत्सर, सूर्य संवत्सर, नक्षत्र संवत्सर, ऋतुसंवत्सर इन चारों संवत्सर में अंतर नहीं।** श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से प्रारंभ 20 युग के 100 वर्ष होंगे, 100-100 वर्ष में 1-1 बालाग्र निकाला गया तब कितने ही बालाग्र निकालो, कितने ही पल्योपम, सागरोपम पूरे करो श्रावण कृष्णा प्रतिपदा ही आयेगा। अतः स्पष्ट हुआ कि 2012 का प्रारंभ 1 जनवरी को होता है, 2015 का प्रारंभ 1 जनवरी को होता है, 2050 का प्रारंभ 1 जनवरी को, उसी तरह तरह ईस्वी सन् 3000 का प्रारंभ भी 1 जनवरी को होता है, ठीक इसी प्रकार नवीन वर्ष का प्रारंभ श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को, नवीन आरे का प्रारंभ श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को, नवीन कालचक्र का प्रारंभ भी श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को ही होगा।

भरत क्षेत्र का वर्ष भी

ऐरावत क्षेत्र का वर्ष भी

महाविदेह क्षेत्र का वर्ष भी

श्रावण कृष्णा प्रतिपदा

को ही प्रारंभ होगा।

(पांचवें खंड के गणित में स्पष्ट हो जायेगा-युग में-1800 दिन भी हो सकते हैं, उसी युग संवत्सर वाले युग में 1830 दिन भी होते हैं, दोनों ही कथन सार्थक है। कालगणना युग के 1826 1/4 दिनों के औसत से ही हुई है।)

(ग) 50 वाँ दिन कैसे?

जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्र में "तेणं कालेणं तेणं समएणं पुक्खलसंवट्टए णामं महामेहे पाउब्भविस्सइ उरहप्पमाणमित्ते आयामेणं.......।" पुष्करसंवर्तक मेघ के पश्चात् क्षीरमेघ, घृतमेघ, अमृतमेघ और रसमेघ का भी कथन है और इनके द्वारा निष्पन्न

गुणों का भी उल्लेख है जिससे पृथ्वी में उत्पादन की क्षमता प्रकट हुई। एक सुन्दर प्रश्न उपस्थित किया जाता है कि शास्त्र में तो केवल पांच मेघों का वर्णन है, उनमें 35 दिन ही लगेंगे फिर दो सप्ताह की उगाढ (मेघों के अभाव से आकाश के खुले रहने) का प्रसंग तो आगम में है नहीं उसके आधार पर 50 वें दिन की संवत्सरी का कथन करना आगम सम्मत कैसे?

समाधान (अ) कृषि से परिचित कोई भी विज्ञ भलीभांति जानता है कि लगातार वर्षा से बीज गलता है अथवा पनपता है, विकसित होने के बाद भी सूर्य के ताप की कितनी आवश्यकता रहती है। फिर भी कोई यह प्रश्न करे कि यहाँ उसका उल्लेख क्यों नहीं किया गया। पूर्व में कहे गए भाष्यकार महाराज का कथन- **''कत्थइ देसग्गहणं कत्थइ भणंति निरवसेसाइं''** से इसका समाधान हो ही जाता है और भी देखें। सुखविपाकसूत्र में सुबाहूकुमार के पूर्वभव सुमुख गाथापति के प्रसंग में वर्णन मिलता है-''तए णं तस्स सुमुहस्स गाहावइस्स तेणं दव्वसुद्धेणं तिविहेणं तिकरणसुद्धेणं सुदत्ते अणगारे पडिलाभिए समाणे संसारे परित्ताउए मणुस्साउए निबद्धे'' इसमें सुदत्त अणगार को भिक्षा बहराने से सुमुख गाथापति के संसार परित्त होने का उल्लेख है अर्थात् समकित प्राप्ति का कथन है जो भगवती शतक 7 उद्देशक 1 के विवेचन से पूरी तरह प्रमाणपुष्ट है, पर इसके तुरंत बाद मनुष्य आयु के बंध का उल्लेख है, जो भगवती शतक 26 से शतक 30 तक (बंधी शतक) तीसरे कर्मग्रन्थ आदि से बाधित है, क्योंकि सम्यग्दृष्टि मनुष्य केवल वैमानिक का आयुष्य बांध सकता है।

यद्यपि सद्धर्म मंडन में पूज्य जवाहरलालजी म.सा. ने एवं पू. आत्मारामजी म.सा. आदि ने विपाक सूत्र के अभिप्राय से सम्यक्दृष्टि मनुष्य के मनुष्य आयुष्य के बंध को स्वीकार किया था तथापि परंपरा में भी अभी आगमबाधित होने से सुमुख गाथापति द्वारा मिथ्यात्व अवस्था में ही मनुष्य के बंध को स्वीकार किया गया। फिर भी इस विवेचन से कोई यह कहे कि इसमें मिथ्यात्व में जाने का उल्लेख नहीं है, अतः हम तो नहीं मानेंगे, तब उसे कौन ज्ञानी सुज्ञ विज्ञ कह सकता है? मानना ही पड़ता है, आगम की शैली ही विचित्र है। ठीक इसी प्रकार से वनस्पति उत्पादन के लिए दो सप्ताह के खुले रहने को मानना पूर्ण युक्तियुक्त है।

(आ) सुखविपाक सूत्र के प्रथम अध्ययन में **''से णं ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं, भवक्खएणं, ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिइ लभिहित्ता केवलं बोहिं बुज्झिहिइ, बुज्झिहित्ता तहारूवाणं थेराणं अंतिए मुंडे भवित्ता जाव पव्वइस्सइ। से णं तत्थ बहूइं वासाइं सामण्णं परियागं पाउणिहिइ,**

पाउणिहित्ता आलोइय- पडिक्कंते समाहिपत्ते कालगए सणंकुमारे कप्पे देवत्ताए उववज्जिहिइ।

से णं ताओ देवलागाओ माणुस्सं, पव्वज्जा बंभलोए। माणुस्सं महासुक्के, माणुस्सं आणए, माणुस्सं आरणे, माणुस्सं सव्वट्ठसिद्धे।'' इस सूत्र में देवलोगाओ आउक्खएणं, भवक्खएणं, ठिइक्खएणं एक बार कह दिया तथा मनुष्य भव प्रव्रज्या का उल्लेख भी एक ही बार किया, पुनःपुनः नहीं। नहीं कहने पर भी इसे स्वीकार किया जाता है।

(इ) सुखविपाक सूत्र के द्वितीय अध्ययन में-

''सुमिणदंसणं कहणं जम्मं बालत्तणं कलाओ य।
जोव्वणं पाणिग्गहणं दाओ पासाय भोगा य।।''

यह भी दूसरे अध्ययन में कहा, तीसरे अध्ययन से नहीं कहा, पर वहाँ पर भी लगाना ही पड़ेगा। आगम शैली विलक्षण है, विचित्र है, ऐसे अनेक उदाहरण उपासकदशांग, अंतगडदशांग में भरे पड़े हैं।

(ई) ''**तच्चं पुणो भवग्गहणं नाइक्कमइ**'' उत्तराध्ययन 29/1 में संवेग में भी यह वाक्य है और भगवती शतक 5 उद्देशक 6 में भी यह वाक्य है, दोनों का अंतर तालिका के माध्यम से-

उत्तराध्ययन 29/1, 3 भव या 4 भव		**भगवती सूत्र 5/6, 5 भव**
1. संवेग का फल-उसमें मिथ्यात्व का क्षय होने के बाद में तीसरे भव का उल्लंघन नहीं।		1. अपने गण की अग्लान भाव से सेवा करने वाले आचार्य, उपाध्याय के उसी भव में, दूसरे भव में अधिकतम तीसरे भव में मोक्ष जाने का उल्लेख।
2. इसमें तीसरे भव या तीसरी नरक तक या 35 प्रकार के वैमानिक की आयु बांधने पर मिथ्यात्व का क्षय हुआ तब पहला भव-यही मनुष्य का दूसरा भव नरक/देव तीसरा भव कर्मभूमि मनुष्य का, वहाँ से मोक्ष।	चौथे भव में मोक्ष यदि एक पल्योपम या ऊपर के तिर्यंचपंचेन्द्रिय या मनुष्य का आयुष्य बांध रखा है तो पहला भव-यही मनुष्य का। दूसरा भव-युगलिक, तीसरा भव-वैमानिक, चौथा भव-कर्मभूमि मनुष्य वहाँ से मोक्ष	2. 3 भव का लेखा जोखा- पहला भव - आचार्य, उपाध्याय का, आराधक होने से दूसरा भव-वैमानिक, तीसरा भव-पुनः मनुष्य, चौथा भव-पुनः वैमानिक, पांचवा भव-मनुष्य का भव करके मोक्ष। इसमें तीसरे भव में विराधक होकर चतुर्थ भव में मनुष्य भव करके भी मोक्ष जा सकते हैं। पर सामान्य रूप से 5 भव।

एक ही शब्द है **''तच्चं पुणो भवग्गहणं नाइक्कमइ''** पर उस तीसरे भव के बीच के भव किस-किस प्रकार से हो सकते हैं, इसका स्पष्ट कथन नहीं होने पर भी अन्य-अन्य प्रमाणों से उसे ध्यान में लिया ही जाता है। पहले में मनुष्य, देव को मिला करके तीसरा भव है, जबकि भगवती में आचार्य, उपाध्याय की गण की सेवा के प्रसंग में 3 भव मनुष्य के हैं। बीच के दो भवों को नहीं कहा गया। फिर भी आराधक साधु की गति के प्रसंग से उन वैमानिक भवों को माना ही जाता है। ठीक उसी प्रकार से पाँच मेघ का वर्णन हुआ हो पर बीच के दो सप्ताह खुले रहने (उगाढ) के उन गीतार्थ, बहुश्रुत, आचार्य भगवंतों के कथन महत्त्वशाली हैं। व्यवहार जगत से परिपुष्ट हैं और आगम की भावनाओं के अनुरूप हैं।

(उ) आगम में मुंहपत्ती का दिग्दर्शन कराने वाले सूत्र इस प्रकार- (1) उत्तराध्ययन-26/23- **''मुहपोत्तिं पडिलेहित्ता.....''**, (2) उपासकदशांग सूत्र के प्रथम अध्ययन में (सुत्तागमे पृ. 1283) **''मुहपत्तिं पडिलेहेइ.....''** (3) प्रश्नव्याकरणसूत्र में पहले महाव्रत की 5 वीं भावना में (सुत्तागमे पृ. 1390) ''मुहपत्तिय....''। इसमें डोरे का उल्लेख हुआ ही नहीं, डोरा कैसे कहते हो?

आगम में तो मुखवस्त्रिका शब्द ही आया है। इसे पूज्य श्री घासीलाल जी म.सा. ने 'सदोरक' शब्द से स्पष्ट किया। वैसे ही 5 वर्षा के बीच में 2 सप्ताह का उगाढ भी आचार्य अमोलकऋषि जी म.सा. ने स्पष्ट किया।

(ऊ) आगम में 10 प्राणों का कहीं पर भी उल्लेख नहीं, फिर भी 25 बोल में बोला जाता है। व्यवहार राशि और अव्यवहार राशि का आगम में कहीं उल्लेख नहीं है। प्रज्ञापना-15 इन्द्रियपद, प्रज्ञापना-18 कायस्थिति, भगवती शतक 12 उ.7 से जीव सब स्थानों पर उत्पन्न हो चुके हैं, सर्व जीवों के माता-पिता के रूप में उत्पन्न हो चुके हैं। इन आगमिक आधारों से स्थूल दृष्टि से इनका विरोध भी आता है, कई परंपराएँ इन्हें स्वीकार भी नहीं करती। फिर भी अपेक्षा विशेष से सूक्ष्म चिंतन करने वाले इन्हें स्वीकार कर अव्यवहार राशि से व्यवहार राशि में भवी जीव के आने के उल्लेख का कथन करते ही हैं।

(ऋ) स्थानकवासी परंपरा में आगमों का सर्वप्रथम हिंदी अर्थ करने वाले शास्त्रोद्धारक श्री अमोलकऋषि जी म.सा. ने 3 वर्ष में 32 शास्त्रों का हिंदी अनुवाद लिख डाला। 1989 में ऋषि परंपरा के आचार्य बनने के पूर्व ही विशिष्ट उपयोगी जैन तत्त्व प्रकाश, ध्यान कल्पतरु आदि अनेक ग्रंथों की रचना कर डाली। यद्यपि उन्होंने ग्रंथ में प्रमाणों का उल्लेख नहीं किया, तथापि पापभीरू, संवेगवान वे आचार्य पुष्ट प्रमाणों के आधार पर ही हिंदी अनुवाद और इन ग्रंथों को प्रस्तुत करके गए हैं। जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिसूत्र का उनके द्वारा विवेचित हिंदी अनुवाद पृष्ठ संख्या 21 पर दिया ही जा चुका है।

(लृ) आचार्य भगवंत पूज्य गुरुदेव श्री हस्तीमल जी म.सा. का जीवन कितना निर्मल था, उनकी वचनसिद्धि के अनेक उदाहरण लोगों के द्वारा कहे हुए स्थान-स्थान पर छपे हुए मिलते हैं और उन्हीं महापुरुषों के शब्दों में- कम से कम 12 वर्ष जानकारीपूर्वक एक भी असत्य का भाषण नहीं बोलने वाले का वचन सिद्ध हो जाता है। 1975 के ब्यावर वर्षावास के उनके प्रवचन का अंश पृष्ठ सं. 19-21 पर दिया ही जा चुका है।

भले ही दोनों महापुरुष अर्वाचीन ही हों पर उनके अनुभूत वचनों को अप्रमाणिक कहना कैसे उचित हो सकता है? विस्तार भय से यहाँ सिर्फ महापुरुषों का ही प्रमाण प्रस्तुत किया गया है, अन्यथा अनेक आचार्यों, प्रवर्तकों, संतों के प्रवचन से भी इसी तथ्य की पुष्टि होती हैं कि यह शाश्वत पर्व किसी न किसी शाश्वत् घटना से संबंध रखने वाला अवश्य ही होना चाहिए। पचासवें दिन का गणित इस पचासवें दिन की घोषणा से पूरी तरह परिपुष्ट होता ही है।

(घ) अहिंसा पालन की महाघोषणा-अहिंसा प्रतिष्ठापन दिवस- एक दलील यह भी दी जाती है कि दूसरे आरे में जब धार्मिक प्रवृत्तियाँ हैं ही नहीं, उस समय में संवत्सरी की कल्पना करना अपने आप में युक्ति-विहीन है। तीर्थंकर उन असंयत लोगों की तत्कालीन परिस्थिति में की गई मर्यादा का अनुगमन करें, यह समझ में आने जैसी बात नहीं है। जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र का मूल पाठ है-''**तए णं ते मणुया भरहं वासं परूढरुक्ख-गुच्छगुम्मल यवल्लितण-पव्वयगहरियगओसहियं उवचियतय- पत्तपवाल-पल्लवंकुरपुप्फफलसमुइयं सुहोवभोगं जायं जायं चावि पासिहिंति पासित्ता बिलेहिंतो णिद्धाइस्संति, णिद्धाइत्ता हट्ठ तुट्ठ अण्णमण्णं सद्दाविस्संति-2 त्ता एवं वइस्संति जाए णं देवाणुप्पिया! अम्हं केइ अज्जप्पभिइ असुभं कुणिमं आहारं आहारिस्सइ से णं अणेगाहिं छायाहिं वज्जणिज्जेत्तिकट्टु संठिइं ठवेस्संति ठवेस्सित्ता भरहे वासे सुहंसुहेणं अभिरममाणा-2 विहरिस्संति।।39।।**''

(सुत्तागमे पृ. 628) अर्थात् तब वे बिलवासी मनुष्य देखेंगे- भरतक्षेत्र में वृक्ष, गुच्छ, गुल्म, लता, बेल, तृण, पर्वग, हरियाली, औषधि ये सब उग आए हैं। छाल, पत्र, प्रवाल, पल्लव, अंकुर, पुष्प तथा फल परिपुष्ट, समुदित एवं सुखोपभोग्य हो गए हैं। ऐसा देखकर वे बिलों से निकल आएंगे। निकलकर हर्षित एवं प्रसन्न हुए एक दूसरे को पुकारेंगे, पुकार कर कहेंगे-देवानुप्रियों! भरतक्षेत्र में वृक्ष, गुच्छ, गुल्म, लता, बेल, तृण, पर्वग, हरियाली, औषधि ये सब उग आए हैं। (छाल, पत्र, पवाल, पल्लव, अंकुर, पुष्प, फल) ये सब परिपुष्ट, समुदित तथा सुखोपभोग्य हैं। इसलिए देवानुप्रियों! **आज से हम में से जो कोई अशुभ, मांसमूलक आहार करेगा (उसके शरीर स्पर्श की तो बात ही दूर) उसकी**

छायातक वर्जनीय होगी, उसकी छाया तक को नहीं छूएँगे। ऐसा निश्चय कर वे संस्थिति समीचीन व्यवस्था कायम करेंगे। व्यवस्था कायम कर भरतक्षेत्र में सुख पूर्वक, सोल्लास रहेंगे।

वह दिन मांस-त्याग का पवित्र दिन है, अहिंसा प्रतिष्ठापन का पवित्र दिन है। तीर्थंकर उन असंयत की मर्यादा का अनुगमन नहीं करते हैं, वे तो उस अहिंसा प्रतिष्ठापन दिवस को और भी अधिक महिमा मंडित करते हैं। धर्म के मूल सम्यग्दर्शन की नींव अहिंसा के प्रतिष्ठापक वे सामान्य क्षयोपशम वाले भी अहिंसा प्रतिपालन में आगे बढ़ते हैं तो उस दिवस की महत्त्वशालिता स्पष्ट हो ही जाती हैं। आचारांग सूत्र के प्रथम श्रुतस्कंध के चतुर्थ अध्ययन के प्रथम उद्देशक में इसी अहिंसा की चर्चा की गई है और उस अध्ययन का नाम सम्यक्त्व दिया गया है।

प्रश्नव्याकरण सूत्र के द्वितीय श्रुतस्कंध के प्रथम अध्ययन में इस अहिंसा को तीर्थंकर से लेकर सभी साधकों के द्वारा अवश्य पालनीय कहा गया है- उसी अहिंसा की प्रतिष्ठा के लिए अहिंसक उपासकों के लिए उसे सर्वश्रेष्ठ पर्व के रूप में प्रतिष्ठापित करना सर्व जीवों के प्रति मैत्री भाव, क्षमापना के भाव अर्थात् सूक्ष्मतम अहिंसा की प्रतिपालना में जागृति करने वाला संवत्सरी महापर्व सर्वज्ञों की श्रेष्ठ देशना का परिचायक ही तो है।

(अ) भगवतीसूत्र शतक 8 उद्देशक 5 में आजीवक (गोशालक) मत के अनुयायी उंबर, बड, लसण, प्याज आदि का वर्जन कर त्रस प्राण से रहित भिक्षा द्वारा अपना निर्वहन करते हैं ऐसा कथन किया गया है, तो क्या तीर्थंकर उनका अनुगमन करने के लिए उनका उल्लेख करते हैं? नहीं, वे तो फरमाते हैं कि जब मिथ्यादृष्टि, अज्ञानी वे जीव भी ऐसा आचरण करते हैं तो फिर श्रमणोपासक का आचार तो कितना ऊँचा होना चाहिए। शास्त्र के शब्द हैं ''किमंग! पुण जे इमे समणोवासगा भवंति'' अर्थात् फिर श्रमणोपासक को तो 15 कर्मादान के द्वारा भी आजीविका नहीं करनी चाहिए।

(आ) भगवतीसूत्र शतक 2 उद्देशक 1 में उल्लेख आया कि कात्यायनगोत्रीय खंधक संन्यासी जो उस समय सम्यग्दृष्टि नहीं है, वैशालिक श्रावक पिंगलक निर्ग्रंथ द्वारा निरुत्तर किए जाने पर अपने त्रिदंड आदि विविध उपकरणों को लेकर भगवान के समीप पधार रहे हैं, जो द्रव्य से भी अन्यलिंगी है, भाव से भी अन्यलिंगी है। उस समय 14,000 साधुओं के अग्रणी गणधर गौतम स्वामीजी ने क्या किया-''तए णं भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं अदूरआगयं जाणित्ता खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ 2 खिप्पामेव पच्चुवगच्छइ पच्चुवगच्छित्ता जेणेव खंदए कच्चायणस्सगोत्ते तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं एवं वयासी - हे खंदया! सागयं खंदया!

सुसागयं खंदया! अणुरागयं खंदया! सागयमणुरागयं खंदया!'' अर्थ- तब भगवान गौतम कात्यायनगोत्रवाले उस स्कन्दक को पास में आया हुआ जानकर बहुत ही शीघ्र अपने आसन से उठे और उठकर शीघ्र ही उसके सामने जाते हैं। सामने जाकर फिर वे जहाँ कात्यायन गोत्रवाला वह स्कन्दक था वहाँ पर गए। वहाँ आकर उन्होंने कात्यायन गोत्र वाले स्कंदक से ऐसा कहा- हे स्कन्दक तुम्हारा स्वागत है, हे स्कन्दक तुम्हारा सुस्वागत है। हे स्कंदक! तुम्हारा अन्वागत है! हे स्कंदक! तुम्हारा स्वागत अन्वागत है।

स्वागत-सुस्वागत- छठे, सातवें गुणस्थानवर्ती, 14 पूर्वी, 4 ज्ञानी द्वारा प्रथम गुणस्थानवर्ती मिथ्यादृष्टि, अन्यलिंगी का?

टीकाकारों ने समाधान दिया- भावी पर्याय-भावी साधु की अपेक्षा- भगवान भी सभी 10 क्षेत्रों में होने वाले कृत्य को अहिंसा के महत्त्व के लिए प्रशंसित करें, इसमें आश्चर्य क्या?

अनार्यों में रूपान्तरण, अव्रतियों द्वारा व्रत ''मांसाहारी का स्पर्श तो क्या, उसके शरीर की छाया भी वर्जनीय,'' कर्मभूमि के रूप में नये युग का, नये इतिहास का प्रारंभ। बिना किसी ज्ञानी की प्रेरणा के उन अल्पमतियों द्वारा ऐसा साहसिक निर्णय। स्याद्वादमञ्जरी की अवतरणिका में श्री मल्लिषेण सूरि ने श्री हेमचन्द्राचार्य के लिए- 'विषमदुःषमाररजतितिमिरतिरस्कारभास्करानुकारिणा वसुधातलावत्तीर्ण-सुधासारिणी देश्यदेशनावितानपरमार्हतीकृत- श्री कुमारपालक्ष्मा-पालप्रवर्तिताभयदानभिधानजीवानु संजीवितनाना-जीवप्रदत्ताशीर्वाद-माहात्म्य-कल्पावधिस्थायी विशदयशशरीरेण।...''(श्री हेमचन्द्रसूरिणा)। अभयदान नामक संजीवनी से जीवित नाना जीवों द्वारा प्रदत्त आशीर्वाद के प्रभाव से कल्पावधि तक विशद यश शरीर से स्थायी होना कहा.... यहाँ यह घोषणा भी स्थायी रूप से संवत्सरी के रूप में अहिंसा भगवती को महिमामंडित करने वाली बन जाती है।

(इ) उपासकदशांग सूत्र के द्वितीय अध्ययन में-''जइ ताव, अज्जो! समणोवासगा, गिहिणो, गिहमज्झावसंता दिव्व-माणुसतिरिक्ख-जोणिए उवसग्गे सम्मं सहंति जाव अहियासेंति, सक्का पुणाइअज्जो! समणेहिं निग्गंथेहिं दुवालसंग-गणि-पिडगं अहिज्जमाणेहिं दिव्व-माणुस-तिरिक्ख-जोणिए (उवसग्गे) सम्मं सहित्तए जाव अहियासित्तए।''

भगवान महावीर ने बहुत से श्रमणों और श्रमणियों को संबोधित कर कहा-आर्यों! यदि श्रमणोपासक घर में रहते हुए भी देवकृत, मनुष्यकृत, तिर्यंचकृत-पशुपक्षीकृत उपसर्गों को भलीभांति सहन करते हैं तो आर्यों! द्वादशांग रूप गणिपिटक का आचार आदि बारह

अंगों का अध्ययन करने वाले श्रमण निर्ग्रंथों द्वारा देवकृत, मनुष्यकृत तथा तिर्यंचकृत उपसर्गों को सहन करना ही चाहिये।

(ई) उपासकदशांग सूत्र के छठे अध्ययन में फरमाया- ''तं धन्नेसि णं तुमं कुंडकोलिया! जहा कामदेवो अज्जो! इ समणेभागवं महावीरे समणे निग्गंथे य निग्गंथीओ य आमतित्तां एवं वयासि-जइ ताव, अज्जो! गिहिणोगिहि-मज्झावसंता णं अन्न-उत्थिए अट्ठेहि य हेऊहि य पसिणेहि य कारणेहि य वागरणेहि य निप्पट्ठ पसिणवागरणे करेंति, सक्का पुणाइं, अज्जो! समणेहिं निग्गंथेहिं दुवालसंगं गणिपिडगं अहिज्जमाणेहिं अन्न-उत्थिया अट्ठेहि य जाव निप्पट्ठ-पसिणवागणा करित्तए'' अर्थात् हे कुंडकोलिक! तुम धन्य हो। श्रमण भगवान महावीर ने उपस्थित श्रमणों और श्रमणियों को संबोधित कर कहा- आर्यों! यदि घर में रहने वाले गृहस्थ भी अन्य मतानुयायियों को अर्थ, हेतु, प्रश्न, युक्ति तथा उत्तर द्वारा निरुत्तर कर देते हैं तो आर्यों! द्वादशांगरूप गणिपिटक का- आचार आदि बारह अंगों का अध्ययन करने वाले श्रमण निर्ग्रंथ तो अन्य मतानुयायियों को अर्थ, (हेतु, प्रश्न, युक्ति तथा विश्लेषण) द्वारा निरुत्तर करने में समर्थ हैं ही।

(उ) जीवाजीवाभिगम सूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति के (मंदरोद्देसो-सुत्तागमे पृ. 246 पर) ''कम्हा णं भंते! लवणसमुद्दे जंबुद्दीवं णो उवीलेइ णो उप्पीलेइ णो चेव णं एक्कोदंग करेइ? गोयमा! जंबुद्दीवे णं दीवे भरहेरवएसु वासेसु अरहंत चक्कवट्टी बलदेवा वासुदेवा चारणा विज्जाहरा समणा समणीओ सावया सावियाओ मणुया पगइभद्दया पगइविणीया पगइउवसंता पगइपयणुकोहमाण-मायालोभा मिउमद्दवसंपण्णा अल्लीणा भद्दगा विणीया, तेसिं णं, पणिहाए लवणे समुद्दे जंबुद्दीवं दीवं णो उवीलेइ, णो उप्पीलेइ णो चेव णं एगोदगं करेइ''

अर्थात् वह लवणसमुद्र जंबूद्वीप नामक द्वीप को जल से आप्लावित क्यों नहीं करता, क्यों प्रबलता के साथ उत्पीडित नहीं करता? क्यों उसे जलमग्न नहीं कर देता? हे गौतम! जंबूद्वीप नामक द्वीप में भरत-ऐरावत क्षेत्रों में अरिहंत, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, जंघाचरण आदि विद्याधर मुनि, श्रमण, श्रमणियाँ, श्रावक और श्राविकाएँ हैं। वहाँ के मनुष्य प्रकृति से भद्र, प्रकृति से विनीत, उपशान्त, प्रकृति से मंद क्रोध, मान, माया, लोभ वाले, मृदु मार्दव संपन्न, आलीन, भद्र और विनीत हैं, उनके प्रभाव से लवणसमुद्र जंबूद्वीप को जल आप्लावित, उत्पीडित और जलमग्न नहीं करता है।

भगवान श्रावकों के गुणों से भी प्रेरणा लेने की फरमाते हैं, फिर उस व्यापक अहिंसा घोषणा की व्यापकता पर अपनी मुहर लगायें- इसमें आश्चर्य ही क्या?

(ऊ) अवसर्पिणी के 5 वें आरे में अभी सिर्फ 2500 साल बीते हैं, कितना मांसाहार बढ़ रहा है? कितने कत्लखाने खुल रहे हैं? धर्म की कैसी हानि हो रही है? साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविकाएँ विद्यमान हैं, तीर्थ चल रहा है, फिर भी निरंतर गिरावट होती जा रही है। लगभग 18500 साल पश्चात् की क्या कल्पना की जाए? जबकि उत्सर्पिणी के दूसरे आरे में बिना तीर्थ, बिना साधु-साध्वी, बिना उपदेश अंतःकरण की पवित्र प्रेरणा से अमारी की घोषणा करने वाले उन प्रकृतिभद्र उत्सर्पिणी काल में स्थूल अहिंसा के सर्वप्रथम प्रतिष्ठापक वीर पुरुषों की घोषणा को व्यापकता देते हुए सूक्ष्म हिंसा के भी त्यागी वे तीर्थंकर भगवान उस दिवस को महिमामंडित करें, यह पूरी तरह उचित और युक्तिसंगत है। भगवती शतक 25 उद्देशक 6,7 नियंठा-संजया के अधिकार में स्पष्ट है कि अवसर्पिणी के दुषम नामक 5 वें आरे में तीर्थ भले ही चलता रहे, पर 5 वें आरे का जन्मा निर्ग्रंथ नहीं बन सकता, स्नातक नहीं बन सकता, परिहार विशुद्धि, सूक्ष्मसंपराय, यथाख्यात चारित्र वाला नहीं हो सकता। मोक्ष में नहीं जा सकता। जबकि तीर्थंकर नहीं होते हुए भी उत्सर्पिणी के दूसरे आरे के अंत में जन्मा हुआ इन सबकी योग्यता को रखता है और तीसरे आरे में चारित्र की आराधना करता हुआ मोक्ष भी चला जाता है। इसलिए उनकी सार्वभौमिक, सार्वकालिक, अहिंसा की घोषणा इस महापर्व की तिथि के निर्धारण में सहकारी बनना पूरी तरह युक्ति युक्त है, न्याय सम्मत है।

संवत्सरी महापर्व किसी तीर्थंकर के जन्मकल्याणक से जुड़ा हुआ नहीं है, निर्वाण कल्याणक भी नहीं है। वह किसी क्षेत्र विशेष का नहीं 15 कर्मभूमि के 170 क्षेत्रों से संबंध रखता है उसके आधार रूप में कोई ऐसी तिथि ही महत्त्वशाली हो सकती है, जो व्यापक क्षेत्र, व्यापक काल से संदर्भित हो और उसके लिए प्रत्येक कालचक्र में 5 भरत और 5 ऐरावत् इन 10 क्षेत्रों से जुड़ी हुई यह तिथि अत्यंत महत्त्वशाली हो जाती है।

जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति के विवेचन को भी इसी रूप में देखा जाए तो तीर्थंकर भगवंत उस दिन को और महिमामंडित करते हुए उन अनार्य, हिंसक, मांसभक्षी प्राणियों द्वारा अहिंसा के प्रतिष्ठापन दिवस को सभी प्राणियों के लिए समता, करुणा, मुदिता आदि के लिए व्यापक करते हुए लोकोत्तम पर्वाधिराज के रूप में प्रतिष्ठापित करते हैं।

(ऋ) जीवाजीवाभिगम की तीसरी प्रतिपत्ति द्वीपसमुद्र के अधिकार में नंदीश्वर द्वीप के सिद्धायतन के संदर्भ में वर्णन मिलता है-" **तत्थ णं बहवे भवणवइ-वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया देवा, चाउमासिया पडिवएसु संवच्छरिएसु, वा अण्णेसु बहुसु जिणजम्मणणिक्खमण णाणुप्पत्तिपरिणिव्वाणमाइएसु य एगंतओ...... विहरंति।**" अर्थात् वहाँ पर बहुत से भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक देव

चातुर्मासिक, प्रतिपदाओं, संवत्सरी और अन्य बहुत से जिन, जन्म, निष्क्रम, ज्ञानोत्पत्ति, परिनिर्वाण महोत्सवों पर....विचरण करते हैं।

वहाँ पर चारों जाति के देवता भी हर्षित भाव से संवत्सरी महापर्व पर भक्ति करते हैं अर्थात् यह पर्व तीनों लोक निवासियों से जुड़ा हुआ है, कल्पातीत होने पर भी तीर्थंकर भगवंतों के द्वारा आराधित है। महाविदेह क्षेत्र में कारण होने पर पर्युषण कल्प मनाया ही जाता है अर्थात् यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पर्व है। तीर्थंकर भगवंतों की आज्ञा होने से ही हमें आराधना करनी है इस पर्व का विशिष्ट महत्त्व है पर तीर्थंकर भगवंतों ने इसी दिवस के लिए संवत्सरी की आज्ञा क्यों दी? उसके अंतर में रहे हुए कारणों को खोजते हुए महापुरुषों ने उस अहिंसा दिवस को महत्त्व दिया जो तीनों काल में प्रत्येक उत्सर्पिणी के दूसरे आरे के प्रथम दिवस पांचों भरत और पांचो ऐरावत 10 ही क्षेत्रों में उल्लास उमंग की अभिव्यक्ति करने वाला है, जीवों को अभय प्रदान करने वाला है। प्रश्नव्याकरण सूत्र में इस अहिंसा का माहात्म्य दर्शाते हुए कहा है-"**एसा भगवई अहिंसा, जा सा भीयाणं पिव सरणं पक्खीणं पिव गयणं, तिसियाणं पिव सलिलं, खुहियाणं पिव असणं, समुद्दमज्झेव पोयवहणं, चउप्पयाणं च आसमपयं, दुहट्ठियाणं च ओसहिबलं, अडवीमज्झे च सत्थगमणं, एत्तो विसिट्ठतरिया अहिंसा जा सा पुढवी जलअगणि मारूयवणस्सइ-बीय-हरिय-जलचर-थलचर-तस-थावर-सव्वभूय-खेमंकरी! एसा भगवई अहिंसा जा सा अपरिमियनाण दंसण-धरेहिं सीलगुण-विणय-तव-संजम नायगेहिं तित्थकरेंहिं सव्वजगजीव-वच्छल्लेहिं तिलोगमहिएहिं जिणचंदेहिं सुट्ठु दिट्ठा ओहि जिणेहिं.... एएहिं अन्नेहिं य जा सा अणुपालिया भगवई।**" अर्थात् जिनशासन में प्रसिद्ध यह अहिंसा भगवती भयभीत हुए प्राणियों की रक्षा करने के लिए शरणभूत है तथा जिस प्रकार पक्षियों को गमन करने में आधारभूत आकाश होता है उसी तरह धर्मों की आधारभूत यह अहिंसा ही है। जिस प्रकार तृषित व्यक्तियों की प्राणरक्षा का साधनभूत जल होता है उसी प्रकार यह अहिंसा भी प्राणियों के प्राणों की रक्षा का एक साधन है। "अन्न ही प्राण है" इस उक्ति के अनुसार जिस प्रकार भूख से पीड़ित हुए प्राणियों के लिए भोजन एक मात्र आधारभूत होता है उसी प्रकार यह अहिंसा भी जीवों की रक्षा करने का एक सर्वोत्तम साधन है। समुद्र के बीच में नौका जिस प्रकार प्राणियों की रक्षा करने वाली होती है उसी प्रकार संसार समुद्र के बीच में पतित हुए प्राणियों की रक्षा के लिए अहिंसा सर्वोत्तम दृढ नौका जैसी है। चतुष्पद-जानवरों के लिए गोष्ठ विश्रामस्थल होता है उसी प्रकार अहिंसा सर्वप्राणियों के लिए सर्वोत्तम विश्रामस्थल है। रोगग्रस्त व्यक्तियों को औषधि का सहारा होता है उसी प्रकार कर्मरोगग्रस्त भव्य जीवों के लिए अहिंसा एक परम औषधिरूप है। जंगल के बीच में सार्थ-समुदाय के

साथ चलना सुखप्रद होता है उसी प्रकार मोक्षमार्ग में प्रस्थित हुए मनुष्य को अहिंसा सार्थ का काम देती है, और इन पूर्वोक्त उपमानों से भी अहिंसा विशिष्टतर है। क्योंकि यह जो अहिंसा है वह पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, बीज, हरित, जलचर, थलचर, खेचर, त्रस और स्थावर इन सब भूतों की रक्षा करने वाली है। यह पूर्वोक्त भगवती अहिंसा सर्वज्ञ द्वारा प्ररूपित एवं सच्ची अहिंसा है, वह अपरिमित-अनंतज्ञान और दर्शन के धारण करने वाले, शीलरूप गुण, विनय एवं तप इनका स्वयं आचरण करने वाले और पर को आचरण कराने वाले, समस्त जगत के जीवों के प्रति वात्सल्यभाव रखने वाले और तीनों लोकों द्वारा पूजे जाने वाले ऐसे तीर्थंकर महाप्रभुओं ने इस अहिंसा भगवती को पूर्वोक्त प्रकार से अपने केवलालोक में कारण एवं कार्य की अपेक्षा को लेकर अच्छी तरह देखा है (बीच में विविध प्रकार के साधकों का वर्णन) ऐसे इन पूर्वोक्त गुणों से विशिष्ट महात्माजनों द्वारा तथा इस प्रकार के लक्षणों से युक्त अन्य गुणवालों द्वारा यह भगवती अहिंसा तीनों योगों की एकाग्रता से अच्छी तरह आराधित की गई है।

अतः **''सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठयाए भगवया पावयणं सुकहियं''** प्रश्नव्याकरण के दूसरे श्रुतस्कंध के प्रथम अध्ययन के इस अमोघ वचन के अनुरूप ही सारे जगत जीवों के प्रजावत्सल **'खेयण्णए से कुसले महेसी'**, **'अभयदए'** उन सर्वज्ञ प्रभुओं ने उसी अहिंसा दिवस को संवत्सरी के रूप में प्रतिपादित कर अहिंसा और उपलक्षण से उसी में समाए हुए सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह पांचों महाव्रत, पांचों अणुव्रत आदि के आराधकों को आत्मशुद्धि, मैत्री के मार्ग पर जागृत बन उत्तरोत्तर विकास करने की प्रेरणा दी। **''उवसमसारं खु सामण्णं''** उपशम ही सार है, क्षमाशीलता और क्षमाप्रार्थना उपशम भाव के परिचायक हैं। उत्तराध्ययन 29/17 से स्पष्ट है- ''क्षमायाचना से प्रह्लाद और प्रह्लाद से सारे प्राण, भूत, जीव, सत्व पर मैत्री भाव और मैत्री भाव से भाव विशुद्धि करके जीव निर्भय होता है। प्रमोदभाव के साथ सभी प्राणियों से मैत्री, भावविशुद्धि और निर्भयता, यहीं तो करते है उत्सर्पिणी काल के दुःषम नामक आरे के 50 वें दिन वे सभी बिलवासी प्राणी और इसी क्षमापना, प्रह्लाद, मैत्री, भावविशुद्धि और निर्भयता के लिए ही तो संवत्सरी का उपदेश देते हैं तीर्थंकर भगवान। कितना सामंजस्य है दोनों के निर्णय/निर्धारण में।

अतः तीर्थंकर भगवान उनका अनुगमन नहीं करते, अहिंसा प्रधान संस्कृति का सार्वकालिक, सार्वदेशिक उद्घोष करते हैं।

हर कालचक्र में पांच भरत, पांच ऐरावत में यह सौभाग्यशाली दिवस आता है और प्रत्येक धर्मनिष्ठ आराधक (उत्तराध्ययन 8/8) दुःखमुक्ति के लिए प्राणवध की

अनुमोदना रूपी सूक्ष्म हिंसा से भी उपरत होने के लिए संवत्सरी की आराधना करता है।

वहाँ स्थूलता है, यहाँ सूक्ष्मता। वहाँ प्रारंभ है, यहाँ पराकाष्ठा, पर है वहीं अहिंसा भगवती का प्रतिष्ठा पर्व।

''ण हु पाणवहं अणुजाणे, मुच्चेज्ज कयाइ सव्वदुक्खाणं।
एवमारिएहिं अक्खायं, जेहिं इमो साहुधम्मो पन्नत्तो।।8।।

-उत्तराध्ययन 8/8

जिन्होंने साधुधर्म की प्ररुपणा की है, उन आर्य पुरुषों तीर्थंकरों ने कहा है कि जो प्राणिवध का अनुमोदन करता है, वह समस्त दुःखों से कदापि मुक्त नहीं हो सकता है। आर्यावर्त पर आर्यत्व के प्रादुर्भाव का दिवस- उत्सर्पिणी का दूसरा आरा श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को लगा, 5 सप्ताह मेघ, 2 सप्ताह खुले, 49 दिन बीते, 50 वें दिन अहिंसा की महाघोषणा हुई और वह पावन पुनीत दिन संवत्सरी के रूप में सुर, असुर, मनुष्य, तिर्यंच, सम्यक्दृष्टि श्रावक, साधु के लिए आत्मसाधना का पवित्र दिन बन गया।

प्रज्ञापना सूत्र- पद 1 में बिना ऋद्धि वाले आर्यों का वर्णन है- क्षेत्र आर्य, जाति आर्य, कर्म आर्य, शिल्प आर्य, भाषा आर्य- ये कब से प्रारंभ होंगे इसी पवित्र दिन से।

जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र वक्षस्कार 2 में अवसर्पिणी के तीसरे आरे में भोगभूमि से कर्मभूमि में रूपांतरित होने के समय प्रभु ऋषभ द्वारा इन कलाओं के प्रतिपादन का उल्लेख है, पर यहाँ तो प्रकृति की सुरम्यता से अन्तःप्रेरणा से सामान्य से सामान्य प्राणियों का, छोटी अवगाहना छोटी उम्र वाले मनुष्यों का अदम्य साहस है। दुःखमा दुःखम आरक के 21,000+21,000= 42,000 वर्षों में वे प्रायः नरक, तिर्यंच आयु का ही बंध करते हैं- आज की उदात्त घोषणा उन्हें मनुष्य और देव गति के लिए दरवाजे खोलने वाली है।

धर्म की आधारशिला-मनुष्यत्व को, आर्यत्व को दिलानेवाली घोषणा का दिन- कितना महान् दिन-

श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से 50 वाँ दिन
आगम गणित से 'भाद्रपद शुक्ला पञ्चमी'।

द्वितीय खण्ड

50 वें दिन की महत्ता

पर्युषण विधान के आगमिक सूत्र

(क) प्रथम भाग की प्रधानता-

आचार्यप्रवर के प्रेरक पत्र से यह स्पष्ट ही है कि आत्मार्थी का प्रत्येक क्षण अनमोल है, प्रत्येक क्षण मैत्री, क्षमा, दोष-निवृत्ति, आत्मशुद्धि के लिए उपकारी है, सहकारी है। इस कालचक्र का कौनसा समय बाकी रहेगा, जिसमें महाविदेह के किसी न किसी भव्य जीव ने मुक्ति नहीं पायी होगी? इस अवसर्पिणी के किसी भी तीर्थंकर का केवल कल्याणक संवत्सरी को नहीं, तब भी उनके लिए वह महापर्व ही था- इन्द्रभूतिजी को दीपमालिका पर तो सुधर्मा जी को और कभी मृगावती जी के पश्चात् चंदनबाला जी को भी किञ्चिद् मिनिटों पर आत्माराधना ने ही ज्योति प्रकटायी। पूरा वर्ष महत्त्वपूर्ण है, पर प्रमाद बहुल जीवन में नियत काल में दोष की शुद्धि-आत्मनिरीक्षण अनिवार्य है। जीव रक्षा से अनुकम्पा विकसित करता हुआ साधक साता की आसक्ति से छुटकारा पा धर्मश्रद्धा से मोक्षमार्ग पर आगे बढ़ता है। इसीलिए जीवरक्षा के लिए वर्षावास या चौमासे का मंगलमय विधान हुआ।

(अ) (i) आचारांग सूत्र के ईर्याध्ययन का प्रारंभिक सूत्र (आचारांग 2/3/1, सूत्र 464)

''अब्भुवगते खलु वासावासे अभिपवुट्ठ, बहवे पाणा अभिसंभूया, बहवे बीया अहुणुब्भिण्णा, अंतरा से मग्गा बहुपाणा बहुबीया जाव संताणगा, अणण्णोकंता पंथा, णो विण्णाया मग्गा, सेवं णच्चा णो गामाणुगामं दूइज्जेज्जा, तओ संजयामेव वासावासं उवल्लिएज्जा।''

अर्थात् वर्षाकाल आ जाने पर वर्षा हो जाने से बहुत से प्राणी उत्पन्न हो जाते हैं, बहुत से बीज अंकुरित हो जाते हैं, (घास आदि से पृथ्वी हरी हो जाती है) मार्गों में बहुत से प्राणी, बहुत से बीज उत्पन्न हो जाते हैं, बहुत हरियाली हो जाती है, ओस और पानी बहुत स्थानों में भर जाते हैं, पाँच वर्ण की काई लीलण-फूलण आदि स्थान-स्थान पर हो जाती है, बहुत से स्थानों में कीचड या पानी से मिट्टी गीली हो जाती है, कई जगह मकड़ी के जाले हो जाते हैं। वर्षा के कारण मार्ग रुक जाते हैं, मार्ग पर चला नहीं जा सकता, क्योंकि (हरी घास छा जाने से) मार्ग का पता नहीं चलता। स्थिति को जानकर साधु को (वर्षाकाल में)

एक ग्राम से दूसरे ग्राम विहार नहीं करना चाहिए। अपितु वर्षाकाल में यथावसर प्राप्त वसति में ही संयत रहकर वर्षाकाल व्यतीत करना चाहिए।

(ii) **बृहत्कल्प सूत्र उ.1 सूत्र 36-37**

"णो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा वासावासासु चारए।
कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा हेमंत-गिम्हासु चारए।।"

अर्थात् निर्ग्रंथों और निर्ग्रंथियों को वर्षावास में विहार करना नहीं कल्पता है। निर्ग्रंथों और निर्ग्रंथियों को हेमन्त और ग्रीष्म ऋतु में विहार करना कल्पता है।

इसी वर्षावास में वस्त्र, पात्र ग्रहण का निषेध करने के सूत्रों में इसे प्रथम समवसरण कह दिया- बृहत्कल्पसूत्र उ.3 सूत्र 16,17-

"णो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा पढमसमोसरणुद्देसपत्ताइं चेलाइं पडिगाहेत्तए।
कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा दोच्चसमोसरणुद्देसपत्ताइं चेलाइं पडिगाहेत्तए।।"

निर्ग्रंथों और निर्ग्रंथियों को प्रथम समवसरण में वस्त्र ग्रहण करना नहीं कल्पता है। निर्ग्रंथों और निर्ग्रंथियों को द्वितीय समवसरण में वस्त्र ग्रहण करना कल्पता है।

(iii) **निशीथसूत्र उ. 10 सूत्र 41-** **"जे भिक्खू पढमसमोसरणुद्देसे-पत्ताइं चीवराइं पडिग्गाहेइ, पडिग्गाहेंतं वा साइज्जइ।"** अर्थात् जो भिक्षु चातुर्मासकाल प्रारंभ हो जाने पर भी वस्त्र ग्रहण करता है या करने वाले का अनुमोदन करता है। (उसे गुरु चौमासी प्रायश्चित्त आता है।)

(iv) जीव रक्षा की प्रधानता से हेमंत एवं ग्रीष्म की अपेक्षा वर्षा ऋतु को प्रधानता दी। आगम में ऋतुओं के सम्बन्ध में कथन की दो प्रकार की शैली है-

(a) **तीन ऋतु-** वर्षा, हेमन्त, ग्रीष्म।

बृहत्कल्प उ. 1 सूत्र. 36,37 सूत्र का अर्थ अभी ऊपर लिखा ही है। तीर्थंकर भगवान महावीर के जन्म आदि के महीनों का कथन इस प्रकार है-

गिम्हाणं चउत्थे मासे अट्ठमे पक्खे आसाढसुद्धे
वासावासाणं तच्चे मासे पंचमे पक्खे आसोयबहुले
हेमंताणं पढमे मासे पढमे पक्खे मिगसरबहुले।।

आचारांग श्रुत.2, अध्ययन-15

इन पाठों से यह स्पष्ट है कि वर्षावास, हेमंत और ग्रीष्मकाल 4-4 मास के होते हैं।

(b) **छ उऊ पण्णत्ता तं जहा–** 1 पाउसे 2 वरिसारत्ते 3 सरए 4 हेमंते, 5 वसंते, 6 गिम्हो।

–ठाणांग

इस विभाग में

1. **प्रावृट् –** आषाढ़, श्रावण
2. **वर्षारात्रि–** भाद्रपद, आश्विन
3. **शरद्–** कार्तिक, मृगशीर्ष
4. **हेमन्त–** पौष, माघ
5. **बसन्त–** फाल्गुन, चैत्र
6. **ग्रीष्म–** वैशाख, ज्येष्ठ

अर्थात् ऊपर की मुख्य तीन ऋतुओं में उनके बीच के दो मास रखे। प्रथम व अंतिम को छोड़ दिया। जैसे पुद्गलों की 8 प्रकार की वर्गणाएँ होती हैं– पाँच शरीर, मन, वचन और श्वासोच्छ्वास की वर्गणाएँ।

कर्मग्रंथ आदि में उनका भेद	**अन्यान्य ग्रंथों में भेद**
1. अग्रहण	1. अग्रहण
2. औदारिक ग्रहण	2. औदारिक ग्रहण
3. अग्रहण	3. अग्रहण (औदारिक अग्रहण/वैक्रिय अग्रहण)
4. वैक्रिय ग्रहण	
5. अग्रहण	5. अग्रहण (वैक्रिय अग्रहण/ आहारक अग्रहण) अन्यान्य ग्रंथों में अग्रहण को निकटता वाली अग्रहण से 2-2 रूपों में कहा है।
6. आहारक ग्रहण	6. अग्रहण (के रूप में दिखाया)

कार्मण तक इसी क्रम में हैं।

इसी रूप में हम भी ऋतुओं को कहें तो

ग्रीष्म — ग्रीष्म का चतुर्थ मास आषाढ

प्रावृट्

वर्षा — वर्षा का प्रथम मास श्रावण

वर्षा — शरद् — वर्षा का चतुर्थ मास कार्तिक
हेमन्त — शरद् — हेमन्त का प्रथम मास मृगशीर्ष

हेमन्त — बसन्त — हेमन्त का चतुर्थमास फाल्गुन
ग्रीष्म — बसन्त — ग्रीष्म का प्रथम मास चैत्र

इनमें प्रथम माह में पूर्व की ऋतु का प्रभाव व द्वितीय माह में उत्तरवर्ती ऋतु का कुछ कुछ प्रभाव रहता है। कभी-कभी मासादि वृद्धि में उत्तरवर्ती ऋतु अधिक प्रभावकारी हो जाती है।

"प्राबल्येन वर्षति यस्मिन् तद् प्रावृट्" अधिक वर्षा के कारण उसे प्रावृट् कह दिया। इस तरह वर्षावास के दो भाग किए।

वर्षावास

(सावण, भादवा, आसोज, कार्तिक)

प्रथम भाग

(सावण का 1 मास, भाद्रपद के 20 दिन)

1. तीव्र वर्षा से झरने, नदियों का उफान, मार्ग अवरुद्ध, विशेष जीवोत्पत्ति से जीव विराधना से बचने की विशेष प्रेरणा।

2. प्रथम प्रावृट्-ऋतुओं में प्रथम होने से प्रथम कह दिया। चौमासे में उस ऋतु का दूसरा मास ही आता है। अतः वह 'मासे' से ग्रहण हुआ। उस मास के ऊपर भी कुछ दिन विशेष वर्षा की, संभावना से **'सवीसइराए मासे'**।

द्वितीय भाग

(शेष बचे 70 दिन)

1. वर्षा की कुछ कमी, नदी आदि में उफान का समापन। प्रथम भाग से कुछ कम महत्ता।

2. वर्षावास चौमासे के बचे हुए **'सत्तरि एहिं राइंदिएहिं।**

अतः स्पष्ट ही है कि प्रथम भाग में जागृति विशेष आवश्यक है, उसकी पूर्णाहुति को ही संवत्सरी नाम से अभिहित कर साधना का महापर्व अहिंसा, मैत्री, क्षमापना दिवस से सूचित किया। आगमकारों का अभिप्राय स्पष्ट ध्यान में लेने के लिए निशीथ सूत्र के दसवें उद्देशक, समवायांग सूत्र के 70 वें समवाय, ठाणांग सूत्र के 5 वें ठाणे आदि के पाठों को देखना अनिवार्य है।

सविंशति रात्रि मास– किस विशेष उद्देश्य से कहा गया, कुछ-कुछ स्पष्ट हुआ- प्रावृट् कहने मात्र से चौमासे का प्रथम श्रावण मास ही आता, उसे पूरी तरह स्पष्ट करने के लिए 20 रात्रि सहित मास अर्थात् इस प्रावृट् के मास के ऊपर 20 दिन और लेना। आचारांग 2/3/1 में जिस उद्देश्य से वर्षावास में रुकने का कथन किया उसमें प्रधानता इसी की है। यहाँ इस कथन की गौणता समझ- 70 वें समवाय में होने से पीछे वाले 70 की मुख्यता ध्वनित नहीं होती है, कथन की विवशता से 70 कहना पड़ा।

प्रावृट् का एक मास वर्षारात्रि के 20 अहोरात्र के-विशेष प्रयोजनवश शब्द बना **'सवीसइराए मासे'**- छः ऋतुओं में द्वितीय ऋतु की अपेक्षा वर्षा रात्रि के 40 दिन ही बचे, इसे सचत्तालीसराए मासे नहीं कहा जा सकता। 40 दिन, 1 मास से अधिक है। अतः 70 अहोरात्र कहना पड़ा। प्रथम में 20 दिन मास से कम होने में कह दिए गए।

शास्त्रकारों की विलक्षणता, विचक्षणता से हम सुपरिचित हैं, पूर्व में भी 89 वां पक्ष और 3 वर्ष साढे आठ मास (जो दिखने में एक ही प्रतीत होते हैं) के भेद को देख चुके हैं। अनंत गम, अनंत पर्यव वाली वीतराग वाणी के संपूर्ण रहस्यों को हृदयंगम करना अल्पक्षयोपशम से संभव नहीं है। गुरु गम और गुरु कृपा से ही कुछ-कुछ जान पाते हैं कुछ-कुछ का अनुभव कर पाते हैं। यही सूत्र विवाद का जनक बना। कुछ केवल प्रथम भाग की प्रधानता बताते हैं- कुछ 70 वें समवाय में देने से 70 दिन (पीछे की) प्रधानता कहते हैं- कुछ दोनों का महत्त्व कहते हैं।

महत्त्व प्रत्येक अंश का है-आगम के अनुसार चौमासा चार ही मास का हो सकता है। इसमें तनिक भी संदेह का अवकाश नहीं। पांच माह का चातुर्मास करना ही आगम सम्मत नहीं। इसकी चर्चा आगे यथावसर की जाएगी। अभी केवल इस सूत्र का विश्लेषण करें-

आगम में दो शब्द आए- 1. **वासा**- दशवै.3/12, दशवै- 5/1/18, बृह-1/36, आचा. 2/3/1, 2/15, निशीथ 10/42 आदि आदि, जिसे प्रथम समवसरण भी कह दिया, जिसमें श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, 4 मास लिये। 2. **वरिसारत्ते**- छः ऋतुओं में दूसरी वर्षारात्रि मात्र भाद्रपद, आश्विन दो मास वाली कही। अतः

वासा (वर्षा)

प्रावृट् (उत्तर भाग)	वर्षारात्रि	शरद् (पूर्वभाग)
श्रावण	भादवा आसोज	कार्तिक

आचारांग, ठाणांग, निशीथ तीनों के सूत्रों (अगले बिंदु में सूत्र-अर्थ आदि आने वाले हैं) को मिलाकर देखें तो स्पष्ट है कि इस सूत्र में सविंशतिरात्रिमास का विशेष प्रयोजन

है।

प्रकर्ष वर्षा का काल प्रावृट् आषाढ में प्रारंभ हो जाता है। आर्य क्षेत्र में प्रायः वर्षा इसी ऋतु में प्रारंभ हो जाती है। ग्रीष्म से तप्त भूमि प्राथमिक वर्षा को सोख लेती है, पर्वत, मैदान आदि की प्यास बुझाने में पानी काम आ जाता है- अधिक नदी नालों की संभावना नहीं, खेती में वर्षाजल उपयोग में आ जाता है। अतः विहार में विशेष रुकावट नहीं, जीव विराधना के प्रसंग नहीं- सामान्यतः रुकने की आवश्यकता नहीं। विशेष वर्षा, नदी नाले जीव विराधना की संभावना होने पर रुकने का विधान भी अपवाद स्वरूप कर ही दिया गया। श्रावण मास में ये बाधाएँ प्रायः आने लग जाती हैं, पृथ्वी अंकुरित हो जाती है, लीलण, फूलण अधिक हो जाती है। अतः चौमासे की प्रथम ऋतु प्रावृट् में रुकने का विधान किया। पर उसका एक ही मास है। उसके ऊपर भी 20 रात्रि (दिन) विशेष विराधना की संभावना से **'सवीसइराए मासे'** प्रथम प्रावृट् के रूप में कहना पड़ा।

अब वरिसारत्ते- वर्षारात्रि के 40 दिन व शरद् का एक महीना बचा- चूंकि 40 रात्रि 1 महिने से अधिक है, अतः चालीस रात्रि सहित शरद् कहा नहीं जा सकता। अतः पूर्व सूत्र में ऋतु का नाम कहकर शेष अवशिष्ट को 3 ऋतु के विभाग से वर्षा कह दिया। दिनों की कुल गणना बची हुई 70 से कह दिया।

1 मास 20 अहोरात्र एवं फिर 70 अहोरात्र। 70 अहोरात्र का कथन समवायांग के 70 वें समवाय में ही रखना होगा- पर यह स्पष्ट है कि रागमुक्ति के लिए निरंतर विहार पर विशेष बल देने वाले वीतराग भगवंत ने जिस जीवरक्षण के लिए चौमासे का विधान फरमाया है, उसमें प्रधानता प्रावृट् (प्रारंभ) की है।

(ख) संवत्सरी संबंधी आगमिक विधान-

आगम में पर्युषण के संबंध का विधान निशीथ सूत्र के 10 वें उद्देशक में ''**जे भिक्खू अपज्जोसवणाए पज्जोसवेइ पज्जोसवेंत वा साहिज्जइ**।। 43।। **जे भिक्खू पज्जोसवणाए ण पज्जोसवेइ ण पज्जोसवेंतं वा साहज्जइ**।।44।।

इस सूत्र में अपर्युषण में पर्युषण करने का और पर्युषण में पर्युषण नहीं करने का प्रायश्चित्त बताया है, पर पर्युषण कब करना? इसका उल्लेख नहीं किया गया।

समवायांग सूत्र के 70 वें समवाय के आधार पर चूर्णिकार श्री जिनदास महत्तर ने चूर्णि गाथा 3152-3153 की व्याख्या में 1 माह 20 दिन का कथन किया तब वह तिथि भादवा सुदी पंचमी आती है, इस विषय में भिन्न-भिन्न विचारधाराओं का आविर्भाव हुआ-

(अ) पहली विचारधारा- संवत्सर का समापन ही संवत्सरी पर्व आराधन का दिवस है और भारतीय इतिहास में संवत्सर का समापन आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा को होता है। उसी दिन

आर्थिक वर्ष का समापन होता है। अतः आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा ही संवत्सरी आराधना का दिवस है। इस मान्यता के निरसन के लिए कतिपय प्रमाण ही पर्याप्त है-

1. यजुर्वेद ज्योतिष श्लोक 6 में स्पष्ट रूप से मिलता है कि प्राचीन भारतीय मान्यतानुसार युग का प्रारंभ माघ शुक्ला प्रतिपदा से होता है और माघ कृष्णा अमावस्या को संवत्सर का अंत। यहाँ प्रसंगानुसार यह भी उल्लेख करना आवश्यक है कि यजुर्वेद युग के मध्य में श्रावण को और युग के अंत में माघ मास को अभिवर्द्धित मास के रूप में स्वीकार करता है अतः प्राचीन भारतीय मान्यतानुसार भी आषाढ़ मास में वर्ष का अंत नहीं होता। वर्तमान में वर्ष का प्रारंभ चैत्र से माना जाता है। आर्थिक वर्ष भी इसी के निकट 1 अप्रेल से 31 मार्च तक होता है।

2. आगमों में आषाढ़ी पूर्णिमा को चातुर्मास प्रारंभ एवं कार्तिक पूर्णिमा को चातुर्मास की पूर्णता पूरी तरह स्पष्ट है। बीच की फाल्गुनी पूर्णिमा तीसरी चौमासी के रूप में प्रतिपादित की गई है। छेदसूत्रों के व्याख्या साहित्य में इन तीनों के लिए 500 श्वासोच्छ्वास का कायोत्सर्ग उल्लिखित हुआ है। जबकि संवत्सरी के लिए 1008 श्वासोच्छ्वास का कायोत्सर्ग उल्लिखित है। अतः संवत्सरी आषाढ़ी चौमासी से अलग है।

3. पूर्व विवेचन से और आगे विवेचित किए जाने वाले सूत्रों में चौमासे के 4 माह को 2 भागों में बाँटा गया, आषाढ़ी पूर्णिमा से संवत्सरी तक का काल तथा संवत्सरी से कार्तिक पूर्णिमा तक का काल। अतः यह निर्विवाद स्पष्ट है कि आषाढ़ी पूर्णिमा को संवत्सरी महापर्व के रूप में मानने पर दो विभाग हो ही नहीं सकते, अतः संवत्सरी आषाढ़ी पूर्णिमा को नहीं हो सकती।

(आ) दूसरी विचारधारा- समवायांग सूत्र के 70 वें समवाय से- ''**समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे वइक्कंते सत्तरिएहिं राइंदिएहिं सेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइ।।70।।**'' अर्थात् 1 मास 20 दिन बीतने और 70 दिन शेष रहने पर श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने पर्युषण किया। इस सूत्र में '**वासावासं पज्जोसवेइ**' है। संवत्सरी से पूर्व 1 मास 20 दिन और संवत्सरी के बाद 70 दिन का वर्षावास। इसकी दोनों बातों को महत्त्व देती हुई कुछ परंपराएं लौकिक पंचांग को ही मान्यता दे उनके अभिवर्द्धित मास को उन्हीं (लौकिक पंचांगकारों) की मान्यता के अनुसार गौण या नगण्य कर दो सावण होने पर भादवा में और दो भादवा होने पर दूसरे भादवा में संवत्सरी पर्व की आराधना करती हैं। इनकी आराधना में आगम प्रमाण से लौकिक-लोकोत्तर गणित से क्या-क्या बाधाएँ आती हैं, इसकी चर्चा करने के पूर्व तीसरी मान्यता का दिग्दर्शन कराना भी आवश्यक है।

(इ) तीसरी विचारधारा- चातुर्मास में होने वाली मासवृद्धि को संवत्सरी की गणना में पूरी तरह गौण कर 50 दिन के विशेष महत्त्व को स्वीकार कर आषाढ़ी पूर्णिमा से 50 वें दिन सामान्यतः भादवा शुक्ला पंचमी, श्रावण मास की वृद्धि होने पर द्वितीय श्रावण शुक्ला पंचमी और भादवा मास की वृद्धि होने पर प्रथम भाद्रपद शुक्ला पंचमी को सांवत्सरिक पर्व आराधन करती है। (चतुर्थी-पंचमी उदय अस्त को यहाँ गौण कर पंचमी का सामान्य कथन किया गया है।)

(ई) आगम संदर्भों से समवायांग सूत्र के 70 वें समवाय के पाठ को विश्लेषित किया जाए-

समणे भगवं महावीरे वासाणं

(श्रमण भगवान महावीर वर्षावास के)

सवीसइराए मासे वइक्कंते	**सत्तरिएहिं राइंदिएहिं सेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइ**
1 महीना 20 रात बीतने पर	70 दिन शेष रहने पर वर्षावास को रहे (वर्षावास को पर्युषित किया)

इस सूत्र का सीधा संबंध निशीथ सूत्र के 10 वें अध्ययन के पर्युषण संबंधित पूर्व के 2 सूत्रों से जुड़ता है।

जे भिक्खू पढमपाउसम्मि गामाणुगामं दूइज्जइ, दुइज्जंतं वा साइज्जइ।।41।।	**जे भिक्खू वासावासं पज्जोसवियंसि गामाणुगामं दूइज्जइ, दूइज्जं तं वा साइज्जइ।।42।।**
जो भिक्षु प्रावृट् ऋतु में ग्रामानुग्राम विहार करता है या विहार करने वाले का अनुमोदन करता है।	जो भिक्षु वर्षावास में पर्युषण करने के बाद ग्रामानुग्राम विहार करता है या करने वाले को अनुमोदन करता है।

यहाँ प्रायश्चित के 2 सूत्र एक ही चौमासे के संदर्भ में कहे गए, बृहत्कल्प उद्देशक 1 सूत्र 36 में उसे सम्मिलित रूप से दिखाया गया। ''**नो कप्पइ णिग्गंथाण वा णिग्गंथीण वा वासावासासु चारए। कप्पइ णिग्गंथाण वा णिग्गंथीण हेमंतगिम्हासु चारए**।। बृह. उ. 3 सूत्र 5 में निशीथ सूत्र के 10 वें उद्देशक सूत्र 48 में प्रथम प्रावृट और वर्षावास दोनों को सम्मिलित रूप से भी वर्षावास कहा गया। इस चातुर्मासिक काल को प्रथम समोसरण के नाम से ही कह दिया गया। इसी निशीथ सूत्र में पूरे चातुर्मास को एक ही काल के रूप में भी गिना तो व्यवहारसूत्र (4/12) में पूरे वर्षावास को एक मानकर दोनों विभागों के अपवाद को भी कह दिया- ''**वासावासं पज्जोसविए भिक्खू य जं पुरओ कट्टु विहरेज्जा से य आहच्च वीसंभेज्जा, अत्थि या इत्थ केइ उवसंपज्जणारिहे से उवसंपज्जियव्वे, णत्थि या इत्थ केइ**

उवसंपज्जणारिहे, तस्स अप्पणो कप्पाए असमत्ते कप्पइ से एगराइयाए पडिमाए जण्णं जण्णं दिसं अण्णे साहम्मिया विहरंति तण्णं तण्णं दिसं उवलित्तए''

वर्षावास में रहा हुआ भिक्षु, जिनको अग्रणी मानकर रह रहा हो और वह यदि कालधर्म प्राप्त हो जाय तो शेष भिक्षुओं में जो भिक्षु योग्य हो उसे अग्रणी बनाना चाहिए। यदि अन्य कोई भिक्षु अग्रणी होने योग्य न हो और स्वयं (रत्नाधिक) ने भी निशीथ आदि का अध्ययन पूर्ण न किया हो तो उसे मार्ग में विश्राम के लिए एक-एक रात्रि ठहरते हुए जिस दिशा में अन्य स्वधर्मी हो उस दिशा में जाना कल्पता है।

इससे तो और भी स्पष्ट हो गया कि आगमकारों को कौनसा विभाग विशेष महत्त्व का बताना है । स्वयं अयोग्य है- गीतार्थ नहीं हुआ तो प्रथम भाग व द्वितीय भाग में भी अपवाद, पर आचार्य उपाध्याय कालगत हो रहे हैं तो प्रथम भाग में अपवाद नहीं, भले ही उनका विशिष्ट ज्ञान रह जाए। केवल स्वयं के उपसर्ग होने पर प्रथम भाग में जाने का अपवाद कहा, उसे ही आचारांग ईर्याध्ययन के दूसरे सूत्र में भी कहा, जिसे यथासमय देखेंगे।

जब प्रथम भाग व द्वितीय भाग दोनों का समान प्रायश्चित्त है तो दोनों को अलग रूप से कहने की क्या आवश्यकता पड़ी? इसका समाधान मिलता है 5 वें ठाणे के दूसरे उद्देशक में -

''णो कप्पइ णिग्गंथाण वा णिग्गंथीण वा पढमपाउसंसि गामाणुगामं दुइज्जित्तए। पंचहिं ठाणेहिं कप्पइ, तंजहा-भयंसि वा दुब्भिक्खंसि वा पव्वहेज्ज व णं कोइ उदओघंसि वा एज्जमाणंसि महया वा अणारिएहिं ।।''- ठाणांग- 5.2.2

निर्ग्रंथों और निर्ग्रंथियों को प्रथम प्रावृट् में एक ग्राम से दूसरे ग्राम विचरण करना निषिद्ध है। (इस विषय में अपवाद मार्ग ऐसा है कि) 5 कारणों से विचरण कर सकते हैं-1. भय के समय में, 2. दुर्भिक्ष के समय में, 3. कोई निरंतर कष्ट देता हो तो ऐसी स्थिति में, 4. नदियों का प्रचुर प्रवाह उन्मार्गगामी होने के समय में, 5. अनार्यों द्वारा आक्रमण होने के समय में।

''वासावासं पज्जोसवियाणं णो कप्पइ णिग्गंथाण वा णिग्गंथीण वा गामाणुगामं दूइज्जित्तए। पंचहिं ठाणेहिं कप्पइ, तं जहा- 1. णाणट्ठयाए, 2. दंसणट्ठयाए, 3. चरित्तट्ठयाए, 4. आयरिय-उवज्झाया वा से विसुंभेज्जा, 5. आयरिय उवज्झायाण वा बहिया वेयावच्चकरणयाए।'' ठाणांग 5.2.2

वर्षाकाल में एक स्थान पर ठहरे हुए साधु-साध्वी को एक ग्राम से दूसरे ग्राम

विहार करना उचित नहीं है। वे पाँच कारणों से विहार कर सकते हैं-1. ज्ञान के लिए, 2. दर्शन के लिए, 3. चारित्र के लिए, 4. आचार्य/उपाध्याय काल कर गए या आचार्य/उपाध्याय के विश्वासपात्र होने से अत्यन्त गुप्त कार्य करने तथा 5. आचार्य या उपाध्याय की वैयावृत्त्य करने के लिए।

इन सूत्रों से स्पष्ट होता है कि संवत्सरी के पूर्व के कारणों में शरीर के ऊपर आपदा आने पर ही विहार का कथन है, जबकि संवत्सरी के बाद ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि के लिए विहार करने का अपवाद है। संवत्सरी के पूर्व तक विशिष्ट वर्षा, नदियों का उफान, कुंथु आदि प्राणियों की विशेष उत्पत्ति से विहार के प्रसंग में जीवों की अधिक विराधना की संभावना रहती है। जीवरक्षा के लिए ही चौमासे का मंगलमय विधान है, इसलिए इसका पहला भाग विशेष महत्त्व का हो गया। दशवै.-3/12 **''वासासु पडिसंलीणा''**, आचारांग श्रुतस्कंध द्वितीय के तीसरे अध्ययन में ईर्याध्ययन आदि के विधान वर्षा में जीव-रक्षण के लिए विशेष सजगता प्रदान करने वाले हैं, यही पांच कारण इसी के पूर्व सूत्र में 5 महानदियों को पार करने के संदर्भ में कहे गए, जिन्हें पार करने का बृहत्कल्प 4/32 में निषेध किया गया, जिन्हें पार करना विशेष विराधना का कारण होता है फिर भी संयमजीवन के आधारभूत, भौतिक जीवन के रक्षण के लिये, इन अपवादिक कारणों में उन नदियों को पार करने की छूट दी गई और उसी संयम के आधार पर भौतिक पिण्ड की रक्षा के लिए संवत्सरी के पूर्व के काल में विहार का अपवाद बताया गया। जैसे बृह. 1/39 में आर्य क्षेत्र से बाहर जाने का निषेध किया, पर साथ ही कहा गया- **''णो से कप्पइ एत्तो बाहिं तेण परं जत्थ णाणदंसणचरित्ताइं उस्सप्पंति।।''**

ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि के लिए आर्य क्षेत्र से बाहर जाने के समान संवत्सरी से बाद में विहार करने का अपवाद बताया गया, क्योंकि इसमें वर्षा कुछ मंद पड़ जाती है, आवागमन सुलभ हो जाता है, इसलिए रास्तों पर प्रथम काल की तरह विराधना की ज्यादा संभावना नहीं रहती। इस काल के विभाग को समझने के लिए हमें आर्य क्षेत्रों एवं उनमें वर्षा काल के समय को देखना अनिवार्य हो जाता है।

साढ़े पच्चीस आर्य देश

प्राचीन देश	वर्तमान नाम	राजधानियाँ	वर्तमान परिचय
1. मगध	बिहार में गया और पटना जिले का मध्य भाग	राजगृह	राजगिरि
2. अंग	बिहार में भागलपुर व मुंगेर जिलों के बीच का भाग	चम्पा	भागलपुर के पास 'नाथनगर'

3. बंग	पूर्वी बंगाल	ताम्रलिप्ति	'तामलुक' मिदिनापुर जिले में रूपनारायण नदी के पश्चिमी किनारे पर
4. कलिंग	उड़ीसा	कांचनपुर	भुवनेश्वर
5. काशी	उत्तर प्रदेश	वाराणसी	बनारस
6. कौशल	उत्तर प्रदेश	साकेत नगर	अयोध्या
7. कुरु	दिल्ली-मेरठ का प्रदेश	गजपुर	
8. कुशार्त	पश्चिमी उत्तरप्रदेश	शौरिपुर	आगरा-दिल्ली के बीच 'बटेश्वर'
9. पांचाल	पश्चिमी उत्तरप्रदेश	काम्पिल्यपुर	फर्रूखाबाद जिले का कंपिल स्थान
10. जांगल	पश्चिमी उत्तरप्रदेश	अहिच्छत्रा नगरी	बरेली जिले का रामनगर स्थान
11. सौराष्ट्र	गुजरात राज्य	द्वारावती	द्वारका नगरी
12. विदेह	बिहार	मिथिला नगरी	वर्तमान 'तिरहुत'
13. वत्स	उत्तरप्रदेश	कौशाम्बी	इलाहाबाद से पश्चिम की तरफ 30 मील दूर
14. शांडिल्य	उत्तरप्रदेश	नंदीपुर	यमुना के तट पर
15. मलय	बिहार	भद्दिलपुर	हजारी बाग जिले का अदिया गांव
16. मत्स्य	अलवर, भरतपुर व जयपुर रियासत का कुछ भाग	विराट नगर	बैराठ
17. वरण	पश्चिमी उत्तरप्रदेश	अच्छा नगरी	बुलन्द शहर
18. दशारण	भोपाल राज्य से पूर्व मालव प्रदेश	मुक्तिकावती	नर्मदा नदी के किनारे पर
19. चेदी	मध्य भारत	सौक्तिकावती	बुन्देलखण्ड का उत्तरी भाग
20. सिंधु सौवीर	पंजाब	वीतमय	मेरा नाम का गांव
21. सूरसेन	पश्चिमी उत्तरप्रदेश	मथुरा	मथुरा
22. भंग	बिहार	पावापुरी	पावापुरी
23. पुरिवर्त	उत्तरप्रदेश	मासानगरी	

24. कुणाल	उत्तरप्रदेश	श्रावस्ती	सहेट महेट
25. लाढ	पश्चिमी बंगाल	कोटिवर्ष	दिनानपुर जिले का वानगढ़ स्थान
25॥. कैक्य अर्ध	उत्तरप्रदेश श. पेशावर के पास	श्वेताम्बिका	नेपाल की तलहटी में

आर्यावर्त - 20^0 से 32^0 -33^0 उत्तरी अक्षांश

21 जून को 20^0 पर लगभग 13 घंटे 13 मिनिट का दिन–लगभग 16½ मुहूर्त्त का दिन
10 घंटे 47 मिनिट की रात– लगभग 13½ मुहूर्त्त की रात

22 दिसम्बर को 20^0 पर लगभग 13½ मुहूर्त का दिन, 16½ मुहूर्त्त की रात।

21 जून को 33^0 पर लगभग 14 घंटे 24 मिनिट का दिन- 18 मुहूर्त्त का दिन
9 घंटे 36 मिनिट की रात- 12 मुहूर्त्त की रात

22 दिसम्बर को 33^0 पर 12 मुहूर्त्त का दिन, 18 मुहूर्त्त की रात।

आर्य क्षेत्र की गणना लगभग 20^0 से 33^0 के बीच ही है। हिमालय की तलहटी में लगभग 35^0 तक भी आर्य क्षेत्र गिना जाए तो स्पष्ट हो जाता है कि भगवती शतक 5 उद्देशक 1 का कथन **'उक्कोसए अट्ठारसमुहूत्ते दिवसे'** उत्कृष्ट 18 मुहूर्त का दिवस **'जहन्निया दुवालसमुहुत्ता राइ'** जघन्य 12 मुहूर्त्त की रात लगभग 21 जून को और **'जहण्णाए दुवालसमुहुत्ते दिवसे'** जघन्य 12 मुहुर्त्त का दिवस **'उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई'** उत्कृष्ट 18 मुहूर्त्त की रात्रि लगभग 22 दिसम्बर को यह कथन आर्य देशों की ऊपरितन सीमा के लिए किया गया है।

वहाँ मेरुपर्वत के चारों दिशाओं में इसी प्रकार का कथन है। 35^0 अक्षांश पर अर्थात् लगभग हिमालय के नीचे ये स्थिति भारत में जम्बू, श्री नगर में, भारत के बाहर काबुल, बैरूत, अल्जीरिया मोराक्को का ऊपरी भाग, अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन के नीचे चार लिस्टन, अक्लहामा सिटी, लॉस एन्जिलिस, तिब्बत, हिरोशिमा (जापान) और शेष पर्वतीय या समुद्री भागों में होता है। वर्तमान के शेष भौगोलिक क्षेत्रों में यह दिनमान कम या अधिक ही होगा। श्रीलंका के नीचे भूमध्य रेखा पर 12 ही महीनों 15 मुहूर्त्त का दिन और 15 मुहूर्त्त की रात्रि होती है और उसके ऊपर 10^0 अक्षांश पर मदुराई, सेलम वहाँ उत्कृष्ट दिन लगभग 16 मुहूर्त्त से कुछ कम और जघन्य रात 14 मुहूर्त्त से कुछ अधिक होती है।

भारतवर्ष का आर्यक्षेत्र लगभग 20^0 से $32-33^0$ तक आ जाता है। इस आर्याखंड में 7 जून से 7 जुलाई के बीच प्रायः वर्षा प्रारंभ हो जाती है। पांचों महानदियों के जो नाम बताए गए वे सब आर्यावर्त में ही है और इसीलिए प्रथम भाग 1 महीना 20 दिन= 50 दिन तक ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि विशेष कारणों से भी अपवाद न देकर विहार का निषेध किया गया, केवल शरीर पर आपत्ति आने पर विहार का अपवाद ठाणांग 5/2 में दिया गया। संयम के लिए चौमासा, संयम में सदा सर्वदा सजगता रखनी ही है, चौमासे में प्रतिसंलीनता द्वारा विशेष सजगता, चौमासे के प्रथम भाग में और भी विशेष सजगता। अप्काय, उसके आश्रय से उत्पन्न हुए वनस्पति व अन्य त्रस जीवों की रक्षा में सर्वाधिक महत्त्व प्रथम के 50 दिन का है।

महाभारत में भी इसे ही आर्यावर्त कहा गया है।

वर्तमान में अयन गणना को सायन और अयन रहित गणना को निरयन रूप से संबोधित करके दो ज्योतिष विधियों का प्रचलन है। सायन विधि में सूर्य सदा 21 जून को कर्क राशि में व 22 दिसंबर को मकर राशि में प्रवेश करता है। एक वर्ष में लगभग 48 विकला का अंतर पडने से 75 वर्ष में सायन से निरयन का अतंर 1 अंश का हो जाता है। वर्तमान में यह अतंर 24 अंश 1 कला 54 विकला का है। इससे यह फलितार्थ निकलता है (75×24=1800) 1800 वर्ष पहले से निरयन की गणना प्रचलित हुई है। इसी कारण 22 दिसंबर को आने वाली मकर संक्रान्ति 24 दिन बढकर 14 जनवरी के अंतिम सिरे पर पहुँच चुकी है। अब कतिपय वर्षो के बाद 15 जनवरी को आना शुरू हो जाएगी।

इस आर्यावर्त में 12 घडी से 18 घडी तक ही दिनमान बताया गया है। 22 दिसंबर को 12 घडी का (अर्थात् 9 घंटा 36 मिनिट) दिन तो 18 घडी की रात्रि (अर्थात् 14 घंटा 24 मिनिट) और 21 जून को 18 घडी का दिन तो 12 घडी की रात्रि। वर्तमान में सूर्य का आर्द्रा नक्षत्र में प्रवेश 22/23/24 जून को तथा चौमासा 1 जुलाई से 29 जुलाई तक लगता है। सायन गणना से 24 दिन का अंतर पडने से आर्द्रा नक्षत्र 22-23 जून के स्थान पर 29-30 मई को होगा तथा चातुर्मास 7 जून से 31 जुलाई तक प्रारंभ होगा। आगम लेखन तक प्राय: यहीं तारिखें आयेंगी। यदि हम इस आर्यावर्त के विविध क्षेत्रों में मानसून आने के सामान्य समय को देखें तो इसी काल के बीच में पूरे आर्यावर्त में वर्षाऋतु प्रारंभ हो जाती है। मुबंई आदि महाराष्ट्र क्षेत्र में 7 जून से 11 जून, उड़ीसा, कलकत्ता आदि में भी जून के प्रथम सप्ताह, सूरत, अहमदाबाद आदि में 17 जून से 22 जून, जोधपुर, जयपुर आदि राजस्थान में 22 जून से 26 जून, उत्तर प्रदेश, बिहार में भी यही 15 जून से 20 जून, दिल्ली, पंजाब, हरियाणा आदि में 27 जून से 3 जुलाई के आसपास अर्थात् श्रावण मास में (सायन पद्धति से) सर्वत्र वर्षाऋतु का प्रारंभ हो जाता है। यदि वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ आदि महीने बढते है तो चातुर्मास 25 जून के बाद प्रारंभ होता है और यदि सावण, भादवा, आसोज आदि बढते है तो 12 जून-13 जून के पूर्व में प्रारंभ हो जाता है। इन दोनों ही स्थितियों में संवत्सरी के पूर्व का काल महत्त्वपूर्ण होता है, इसीलिए जीवरक्षा में प्रवृत्त साधु साध्वियों को ज्ञान, दर्शन, चारित्र का विशेष लाभ होने पर भी प्रारंभ के 1 महीने 20 दिनों में विहार का निषेध किया गया, उन्हें अपवाद में नहीं गिनाया। आषाढ मास की वृद्धि होने पर 20 दिन में और शेष में 1 मास 20 दिन का जो उल्लेख मिलता है वह निर्युक्तिकार श्री भद्रबाहुस्वामी प्रणीत श्री बृहत्कल्पसूत्रनिर्युक्ति का पाठ-"**अभिवड्ढियंमि वीसा, इयरेसु सवीसइमासो।**" ('हर्षहृदयदर्पणस्य'पृ.सं.19)

श्री जिनदासमहत्तराचार्य महाराज द्वारा श्री निशीथचूर्णि में फरमाया पाठ-

''अभिवड्ढियवरिसे वीसतिराते गते गिहिणातं करेंति तिसु चंदवरिसेसु सवीसतिराते मासे गते गिहिणातं करेंति जत्थ अधिमासगो पडति वरिसे तं अभिवड्ढिय वरिसं भण्णति जत्थ ण पडति तं चंदवरिसं सोय अधिमासगो जुगस्सगंते मज्झे वा भवति जइ अंते नियमा दो आसाढ़ा भवन्ति अह मज्झे दो पोसा सीसो पुच्छति कम्हा अभिवड्ढिय वरिसे वीसतिरातं चंदवरिसे सवीसतिमासो उच्यते जम्हा अभिवड्ढिय वरिसे वीसतिरातं चंदवरिसे सवीसतिमासो उच्यते जम्हा अभिवड्ढिय वरिसे गिम्हे चेव सो मासो अतिक्कंतो तम्हा वीसदिना अणभिग्गहियं तं करेंति इयरेसु तीसु चंदवरिसेसु सवीसति मास इत्यर्थः'' ('हर्षहृदयदर्पणस्य' पृ.सं.28)

अर्थात् अभिवर्द्धित वर्ष में आषाढ पूर्णिमा से 20 रात्रि व्यतीत होने पर श्रावण सुदी पंचमी को गृहिज्ञात पर्युषण करे और तीन चंद्रसंवत्सरों में 20 रात्रि सहित 1 मास व्यतीत होने पर भाद्रपद सुदी पंचमी को गृहिज्ञात पर्युषण पर्व करे। जिस वर्ष में अधिक मास आ पडा हो उसको अभिवर्द्धित वर्ष कहते हैं और जिस वर्ष में अधिक मास न आ पडा हो उसको चंद्रवर्ष कहते हैं। वह अधिक मास युग के अंत में और युग के मध्य भाग में होता है, यदि युग के अंत में हो तो निश्चित दो आषाढ मास होते हैं और युग के मध्य में हो तो निश्चित दो पौष मास होते हैं। शिष्य पूछता है किस कारण से अभिवर्द्धित वर्ष में 20वें दिन की श्रावण सुदी पंचमी की रात्रि को गृहिज्ञात पर्युषण है और चंद्र संवत्सर में 20 रात्रि सहित 1 मास यानी 50वें दिन की भाद्रपद सुदी पंचमी की रात्रि को गृहिज्ञात पर्युषण है? अभिवर्द्धित वर्ष में ग्रीष्म ऋतु में एक अधिक मास अतिक्रांत हो जाता है इसलिए 20 दिन तक गृहिअज्ञात पर्युषण है और 20वें दिन श्रावण सुदी पंचमी को गृहिज्ञात पर्युषण करे।

अभिधान राजेन्द्र कोष भाग 5 के ''पज्जोसवणाकप्प'' शब्द पृष्ठ 239 प्रथम कॉलम में भी ''अभिवड्ढियम्मि वीसा'' का प्रश्न इस प्रकार उठाया है तथा च कश्चित् ''अभिवड्ढिम्मि वीसा इयरे सुं सवीसइ मासो'' इति वचन बलेन मासाभिवृद्धौ विंशत्यादिनैरेव लोचादिकृत्यविशिष्टां पर्युषणां करोति, तदप्युक्तम् येन अभिवड्ढियम्मि वीसा इतिवचनं गृहिज्ञातमात्रापेक्षया अन्यथा आषाढमासिए पज्जोसविंति एस उस्सग्गो, सेसकालं पज्जोसविंताणं अववाउत्ति''

इस 20 दिन या 1 मास 20 दिन, गृहिज्ञात आदि की वार्ता चतुर्थ खंड में यथासमय होगी, यहाँ तो इतना सा प्रयोजन है कि ये सभी सूत्र समवेत स्वर में चातुर्मास के प्रथम भाग के विशेष महत्त्व को प्रतिपादित कर रहे हैं।

आषाढ मास बढने पर 6 जुलाई/7 जुलाई को चातुर्मास लगता है। उसके 20 दिन

बाद 26-27 जुलाई तथा उसके अगले वर्ष लगभग 11 दिन पहले 25-26 जून को चौमासा लगने पर 1 मास 20 दिन से 15 अगस्त के आसपास और उसके अगले वर्ष में 14-15 जून के आसपास चौमासा लगे, उसके 1 माह 20 दिन पश्चात् 5-6 जुलाई के आसपास फिर पौष मास की वृद्धि होने पर 3-4 जुलाई के आसपास चौमासा लगने पर चौमासा लगने के 20 दिन बाद अर्थात् 23-24 जुलाई को गृहिज्ञात करने की आज्ञा है, 18-19 अगस्त के आसपास संवत्सरी, उसके भी अगले वर्ष 16-17 जून के आसपास चौमासा लगने पर 15-16 अगस्त के आसपास संवत्सरी आ जाती है।

तपागच्छाधिपति धुरधंर आचार्य श्रीमान् क्षेमकीर्तिसूरिजी महाराज विरचित श्री बृहत्कल्पसूत्र निर्युक्ति के उक्त पाठ की टीका संबंधी पाठ, यथा- "अभिवर्द्धित वर्षे विंशतिरात्रे गते इतरेषु च त्रिषु चंद्रसंवत्सरेषु सविंशतिरात्रे मासे गते गृहिज्ञातं कुर्वन्ति" ('हर्षहृदयदर्पणस्य'पृ.20) (अभिप्राय अभी पूर्वपृष्ठ में आ ही चुका) ये सब आदित्य (ई.सन्) संवत्सर की तारीखें सायन पद्धति के आधार पर आती है।

आगम गणित के लुप्त होने पर-श्री तपागच्छ के श्री कुलमंडनसूरिजी महाराज विरचित श्री कल्पावचूरि का पाठ देना पडा-"**सा चंद्रवर्षे नभस्य शुक्लपंचम्यां कालकसूर्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटा कार्या यत्पुनरभिवर्द्धित वर्षे दिनविंशत्या पर्युषितव्यमित्युच्यते तत्सिद्धान्त टिप्पणानुसारेण तत्रहि युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ एव वर्द्धते नान्ये मासास्तानि च टिप्पनानि अधुना न सम्यग् ज्ञायन्तेऽतो दिनपंचाशतैव पर्युषणा संगतेति वृद्धाः।**"('हर्षहृदयदर्पणस्य' पृ.21) अर्थात् वह चंद्रसंवत्सर में भादवा सुदी पंचमी को श्री कालकाचार्य महाराज की आज्ञा से 49वें दिन चौथ अपर्वतिथि में भी लोकप्रसिद्ध की जाती है और जो अभिवर्द्धित वर्ष में आषाढ पूर्णिमा से 20 दिन बीतने से श्रावण शुक्ला पंचमी को गृहिज्ञात सांवत्सरिक कृत्ययुक्त पर्युषण पर्व करने की शास्त्र की आज्ञा है, अत: वह जैन सिद्धान्त टिप्पणे के अनुसार है, क्योंकि जैन टिप्पणे में 5 वर्ष का 1 युग के मध्य भाग में निश्चित पौष मास बढता है और युग के अंत में आषाढ मास ही बढता है, अन्य श्रावणादि मास नहीं बढते। उन जैन टिप्पणों का इस समय में सम्यग्ज्ञान नहीं है, इसलिए जैन टिप्पणे के अनुसार वर्षा चातुर्मास के बाहर पौष, आषाढ मास वृद्धि पर उसका अभाव होने से (आज) लौकिकानुसार चौमासे के अंदर श्रावण आदि मासों की वृद्धि होती है। इसलिए दूसरे श्रावण सुदी चतुर्थी को या प्रथम भाद्रपद सुदी चतुर्थी को 50वें दिन पर्युषण करना निश्चय संगत है, इस प्रकार श्रीवृद्ध प्राचीन आचार्यों का कथन है।

इसी प्रकार तपागच्छ के उपाध्याय श्री धर्मसागरजी, जयविजयजी,

विनयविजयजी इन तीनों ने अपनी रची कल्पसूत्र की टीकाओं में लिखा है कि- ''एतत्कृत्यविशिष्टा भाद्रपद सितपंचम्यां कालकाचार्यादेशाच्चतुर्थ्यामपि जनप्रकटा कार्या द्वितीया तु अभिवर्द्धितवर्षे चातुर्मासिकदिनादारभ्य विंशत्या दिनैः वयमत्र स्थिता स्म इति पृच्छतां गृहस्थानां पुरो वंदति सा तु गृहिज्ञातमात्रैव तदपि जैन टिप्पनकानुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ एव वर्द्धते नान्ये मासास्तट्टिप्पनकं चाधुना सम्यग् न ज्ञायतेऽतः पंचाशतैव दिनैः पर्युषणा संगतेति वृद्धाः।'' ('हर्षहृदयदर्पणस्य' पृ.26)

इन सब सूत्रों से 1 मास 20 दिन की महत्ता स्पष्ट है। अतः आगम के उल्लेख से दो सावन होने पर संवत्सरी भादवा में करने का और दो भादवा होने पर दूसरे भादवा में करने का जो द्वितीय मत उल्लेखित किया गया था, वह इन सूत्रों से बाधित प्रतीत होता है तथा दो सावण के होने पर दूसरे सावन में और दो भादवा के होने पर प्रथम भादवा को करने का पक्ष उचित प्रतीत होता है।

(विशेष:- इस प्रकार के कथन करने की विवशता क्यों हुई, इसकी समीक्षा आगे की जाएगी)

यहाँ तो इतना ही निष्कर्ष निकालना है कि पूरा वर्ष महत्त्वपूर्ण होते हुए भी हेमन्त ग्रीष्म से वर्षा में कुछ विशेषता है, पूरा वर्षावास उपयोगी होते हुए भी 'सविसइराए मासे' वाला प्रथम विभाग विशेष साधना के लिए है।

'गृहिज्ञात' शब्द से कतिपय टीकाकार केवल गृहियों को सूचित करने का कहते हैं-उन्हीं की परंपरा से कुछ सूत्र-तपागच्छ के श्री कुलमंडनसूरिजी अपनी रची हुई श्री कल्पावचूरि में लिखते हैं कि-''गृहिज्ञाता यस्यां तु सांवत्सरिकाऽतिचारालोचनं लुंचनं पर्युषणायां कल्पसूत्रकथनं चैत्यपरिपाटी अष्टमं सांवत्सरिकं प्रतिक्रमणं च क्रियते यया च व्रतपर्यायवर्षाणि गण्यंते।'' ('हर्षहृदयदर्पणस्य' पृ.21)

अर्थात् गृहिज्ञात पर्युषण करें जिसमें 1. सांवत्सरिक अतिचार का आलोचन 2. केशलुंचन 3. कल्पसूत्र कथन 4. भगवद्भक्ति 5. अष्टमतप 6. सांवत्सरिक प्रतिक्रमण किया जाता है तथा गृहिज्ञात पर्युषण से दीक्षा पर्याय वर्षो को गिनते हैं।

श्री कल्पसूत्र की संदेहविषौषधि टीका में श्री जिनप्रभसूरिजी ने लिखा है कि- ''गृहिज्ञाता तु यस्यां सांवत्सरिकाऽतिचारालोचनं लुंचन पर्युषणाकल्पसूत्रकर्षणं चैत्यपरिपाटी अष्टमंतपः सावंत्सरिक प्रतिक्रमणं च क्रियते यया च व्रतपर्यायवर्षाणि गण्यन्ते।'' ('हर्षहृदयदर्पणस्य' पृ.30)

गृहिज्ञात पर्युषण वह है कि जिसमें 1. सांवत्सरिक अतिचार का आलोचन,

2. केशलुंचन 3. पर्युषण कल्पसूत्र वांचना 4. भगवद्भक्ति 5. अष्टमतप 6. सांवत्सारिक प्रतिक्रमण करने में आता है और जिस गृहिज्ञात पर्युषण से दीक्षा पर्याय वर्षों को गिनते हैं।

तपागच्छ के श्री विनयविजयजी ने अपनी रची हुई कल्पसूत्र की सुबोधिका टीका में लिखा है कि-

गृहिज्ञाता तु द्विधा सांवत्सरिक कृत्यविशिष्टा गृहिज्ञातमात्रा च।
तत्र सांवत्सरिककृत्यानि सांवत्सरप्रतिक्रांतिर्लुंचनं चाष्टमं तपः।।
सर्वार्हद्भक्तिपूजा च संघस्य क्षामणं मिथः।।1।।

('हर्षहृदयदर्पणस्य' पृ.35)

गृहिज्ञात दो प्रकार का है विशिष्ट सांवत्सारिक कृत्य और गृहस्थियों को जानकारी कराना।

गृहिज्ञात पर्युषण में 1. सांवत्सरिक प्रतिक्रमण 2. केशलुंचन 3. अष्टमतप 4. भगवद्भक्ति 5. संघ के साथ क्षामणा- ये सांवत्सरिक कृत्य करने के हैं।

अर्थात् खरतरगच्छ और तपागच्छ दोनों परम्पराएँ पर्युषण में इन 5 कार्यों को करने का उल्लेख करती हैं। इन क्रियाओं को करने के लिए संवत्सरी पर्व का महत्त्व है।

अब देखना यह है कि तीर्थंकर भगवन्त को इनमें से कौनसे कार्य करना अनिवार्य है।

1. सांवत्सरिक आलोचन- जीतकल्प गाथा 21 में स्पष्ट है कि 13वें गुणस्थानवर्ती स्नातक दशविध प्रायश्चित्त में से केवल एक विवेक को करते हैं, आलोचन, प्रतिक्रमण आदि नहीं। छद्मस्थ अवस्था में ही तीर्थंकर कल्पातीत होते हैं, उनका जीवन निर्दोष होता है, अतः आलोचन, प्रतिक्रमण की कोई आवश्यकता ही नहीं होती। तथापि सांवत्सरिक पर्व की महत्ता से चित्त की विशेष निर्मलता के लिए प्रतिक्रमण हो सकता है।

2. लुंचन- समवायांग सूत्र के 34वें समवाय में **चोतीसं बुद्धाइसेसा पण्णत्ता तंजहा- आवट्ठिए केस-मंसु रोम-नहे....उवसमंति।** अर्थात् तीर्थंकर भगवन्तों के 34 अतिशय कहे गए हैं। जैसे- अवस्थित केश, श्मश्रु, रोम, नख होना अर्थात् नख और केश आदि का नहीं बढ़ना। इससे स्पष्ट है कि दीक्षा लेने के पश्चात् लोच का प्रसंग ही तीर्थंकरों को पैदा नहीं होता।

3. कल्पसूत्र- वाचन, भक्ति, प्रतिक्रमण आदि कोई भी कार्य वे नहीं करते।

अनशन आदि तप की आराधना सहज रूप से उनके द्वारा की जाती है। भगवान् महावीर के द्वारा आराधित पर्युषण में उपवास (छद्मस्थकाल में प्रतिक्रमण भी) का ही आराधन होता है। पश्चाद्वर्ती साधकों को शास्त्रवर्णित सभी क्रियाओं का संपादन इस तिथि

को करना है, इसी की प्रेरणा के लिए इस सूत्र की उपादेयता है।

(ग) इतिहास, कथानक, घटनाक्रमों से वर्षा ऋतु और वर्षा ऋतु में प्रथम प्रावृट् की महत्ता

(अ) त्रिषष्टिशलाका पुरुष चारित्र में सुन्दर आलंकारिक भाषा में वर्षा ऋतु के प्रारम्भ का वर्णन आया। धन्ना सार्थवाह के सार्थ को मार्ग अवरुद्ध होने से रुकना पड़ा, उसी काल में धर्मघोष अणगार प्रभृति संतों को घृतदान, धर्मोपदेश श्रवण करने से सम्यक्त्व की प्राप्ति और तेरहवें भव में प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव बनने का उल्लेख आया। महाविदेह क्षेत्र में भी वर्षा ऋतु की अन्य ऋतुओं में और प्रथम प्रावृट् की वर्षा ऋतु में प्रधानता है ही।

(आ) वाल्मिकी रामायण, तुलसीकृत रामचरित मानस, प्रवर्तक सूर्यमुनि जी की जैन रामायण से स्पष्ट है कि प्रतिवासुदेव रावण की मृत्यु विजयादशमी को नहीं हुई। श्रावण, भादवा की प्रधानता से इस मास में युद्ध होता ही नहीं था, युद्ध के लिए प्रयाण भी नहीं हुआ।

रामचरितमानस- **'लडे बहत्तर दिन संग्रामा, वानर राक्षस बिन विश्रामा।**
वसु दस दिन लडि सो महिधारा, भूता मधुसित रावण मारा।
चैत्र सुदि चौदस जब आई, मरो दशानन जग दुःखदाई।

भावार्थ- 72 दिन प्रारम्भिक लड़ाई, 18 दिन अंतिम लड़ाई, चैत्र शुक्ला चतुर्दशी रावण वध। विजयादशमी को विजय के लिए प्रयाण किया। चौमासे में भी प्रथम प्रावृट् का विशेष महत्त्व है।

(इ) कान्हड़ कठियाडे की लावणी के प्रसंग में वर्णन मिलता है कि श्रीपति सेठ ने वर्षाकाल में गीला ईंधन मिलने से जीव की विराधना ज्यादा होगी, इसीलिए अपने अनुचर चंपक को पूर्व में ही सूखी लकड़ियों को लाने की आज्ञा दी अर्थात् गृहस्थी भी सावण, भाद्रपद के माह में जीव हिंसा के प्रसंगों से बचने का प्रयास करते थे।

(ई) संघपति संघवी जी के नेतृत्व में तीर्थयात्रा पर संघ निकला था। वह तीव्र वर्षा से आगे नहीं बढ़ पाया और वीर निर्वाण 2000 के आसपास श्रीमद् लोकचन्द्र जी की ओजस्वी वाणी गूंजने लगी। (स्व. मरुधर केसरी जी के शब्दों में)-

उपदेश अब देने लगे हैं सिंह की सी नाद से
श्रोता सहस्रों आ सुने अति प्रेम से आह्लाद से।
मूर्तिपूजा शास्त्रसम्मत है नहीं सच मानिये।
अल्प से भी अल्प हिंसा धर्मघातक जानिये।

हिंसा धर्मघातक ही है। राग से बचने के लिए एक क्षेत्र में, एक स्थान पर रुकने का

निषेध कर विहार की प्रेरणा प्रदान करने वाले तीर्थंकर भगवन्त भी जीव हिंसा से बचने के लिए विहार स्थगित कर चातुर्मास करते हैं। हेमंत, ग्रीष्म से चातुर्मास प्रधान है- चातुर्मास में पिछले 70 दिन से पहले 50 दिन विशेष प्रधान हैं। उसमें जीव हिंसा की विशेष संभावना होने पर भी जब यति-प्रमुख ने संघवी जी से संघ को आगे बढ़ाने की प्रेरणा की और कहा कि धर्मकार्य में होने वाला आरम्भ भी धर्म ही है- तो **'आरंभे नत्थि दया'** के सूत्र से आत्मा जाग गयी-क्रांतिवीर लोकाशाह जी की क्रांति का सूत्रपात हो गया। इतिहास साक्षी है। पर यहाँ तो इतना ही पर्याप्त है- प्रथम भाग को महिमा मंडित कर रहा है यह प्रसंग भी।

(उ) बाजार के आरंभ-समारंभ, घर के आरंभ-समारंभ, सांसारिक भ्रमण, इन मासों में टाले जाते हैं।

(ऊ) आज भी प्रथम प्रावृट् अर्थात् संवत्सरी के पूर्व विज्ञ श्रावक-श्राविकाएँ अपने ग्राम नगर को छोड़कर बाहर गुरुओं के दर्शन को नहीं जाते, संवत्सरी पश्चात् ही जाते हैं।

स्पष्ट है वर्षा के बरसते पानी, नदी-नालों का उफान, त्रस जीवों की अधिक उत्पत्ति आदि-आदि कारणों से प्रथम भाग- 'सवीसइराए मासे' (1 माह 20 रात) का महत्त्व षट्काय रक्षक ऋषियों के लिए सर्वाधिक है।

(घ) अन्य आगमीय प्रमाणों से भी 50वें दिन का विशेष महत्त्व

निशीथ 2/58 **''जे भिक्खू वासावासियं सेज्जासंथारयं परं दसरायकप्पाओ उवाइणावेइ उवाइणावेंतं वा साइज्जइ।''** चातुर्मास के लिए लाए गए शय्या संस्तारक को चातुर्मास पश्चात् 10 रात्रि के उपरान्त रखने का प्रायश्चित्त कहा।

व्यवहार सूत्र के 8वें उद्देशक के दूसरे, तीसरे, चौथे सूत्र में 1. ऋतु बद्धकाल हेमंत, ग्रीष्म ऋतु के मास कल्प के लिए लाए शय्या संस्तारक 2. वर्षावास और 3. वृद्धावास स्थिरवास के लिए लाने वाले शय्या संस्तारक की अलग-अलग प्रक्रियाओं का विधि विधान हुआ।

उसमें से वर्षावास पश्चात् रखने का प्रायश्चित्त ऊपर निशीथ में बताया। आचारांग 2/3/1/4 में भी कहा- **''अह पुण एवं जाणिज्जा चत्तारि मासा वासावासाणं वीइक्कंता हेमंताण य पंचदसरायकप्पे परिवुसिए, अंतरा से मग्गा बहुपाणा जाव संताणगा, णो जत्थ बहवे समण जाव उवागया उवागमिस्संति य, सेवं णच्चा णो गामाणुगामं दूइज्जेज्जा।''** अर्थात् यदि साधु या साध्वी यह जाने कि वर्षाकाल के चार मास व्यतीत हो चुके हैं, अतः वृष्टि न हो तो (उत्सर्ग-मार्गानुसार) चातुर्मासिक काल समाप्त होते ही दूसरे दिन अन्यत्र विहार कर देना चाहिए। यदि कार्तिक मास में वृष्टि हो जाने से मार्ग आवागमन के योग्य न रहे तो हेमंत ऋतु के पांच या दस दिन

व्यतीत हो जाने पर वहाँ से विहार करना चाहिए। (इतने पर भी) यदि मार्ग बीच-बीच में अंडे, बीज, हरियाली यावत् मकड़ी के जालों से युक्त हो अथवा वहाँ बहुत से श्रमण-ब्राह्मण आदि आए हुए न हों, न ही आने वाले हों, तो यह जानकर साधु ग्रामानुग्राम विहार न करे।

उत्सर्ग मार्ग में मिगसर कृष्णा प्रतिपदा को शय्या संस्तारक लौटाकर चार माह का वर्षावास पूर्ण कर विहार करना ही है।

रूग्णावस्था आदि अपवाद से रुकने पर पुनः आज्ञा ली जा सकती है। पर यहाँ यह ध्वनित हुआ-वर्षा की अधिकता, पानी से मार्ग अवरुद्ध होने से 5-10 दिन रुकना पड़े, उसके पश्चात् तो शय्या संस्तारक को लौटाने का अवसर आ ही जाएगा, उसके उपरांत का प्रायश्चित्त कहा।

निशीथ 2/50 में- **''जे भिक्खू उडुबद्धियं सेज्जासंथारगं परं पज्जोसवणाओ उवाइणावेइ उवाइणावेतं वा साइज्जइ।''**

ऋतुबद्ध शय्या संस्तारक मासकल्प के लिए चातुर्मास पूर्व लाए गए-वर्षा आदि कारण से वहीं चातुर्मास करना पड़ गया-उसके लिए सवीसरात्रि मास-पर्युषण तक 50 दिन का अपवाद है। प्रश्न उठता है कि ऊपर 10 दिन का ही यहाँ 50 दिन का-क्यों? कारण स्पष्ट है यह प्रथम पावस-प्राबल्य वर्षा का काल है- तीव्र वर्षा, मार्ग अवरोध से रुकावट का काल है। ठाणांग 5/2 के विशेष अपवाद के अतिरिक्त यह विहार स्थगन का काल है।

इसी ईर्या अध्ययन का प्रथम सूत्र जो इसी खंड में दिया जा चुका है- **'अब्भुवगए खलु वासावासे अभिपवुट्ठे'** (पवुट्ठ-प्रावृट् कितना निकट का शब्द है- प्रथम 50 दिन- **पढमपाउसंसि-वासाणं सवीसइराए मासे**) पर इसी से आगे- **''से भिक्खू वा से ज्जं पुण जाणेज्जा गामं वा जाव रायहाणिं वा इमंसि खलु गामं वा जाव रायहाणिंसि वा णो महती विहारभूमी, णो महती वियारभूमी, णो सुलभे पीढ-फलग-सेज्जा-संथारए, णो सुलभे फासुए उंछे अहेसणिज्जे, बहवे जत्थ समण-माहण-अतिहि-किवण-वीणमगा उवागया उवागमिस्संति च, अच्चाइण्णा वित्ती, णो पण्णस्स णिक्खमण जाव चिंताए। सेवं णच्चा तहप्पगारं गामं वा णगरं वा जाव रायहाणिं वा णो वासावासं उवल्लिएज्जा।''**

वर्षावास करने वाले साधु या साध्वी को उस ग्राम यावत् राजधानी की स्थिति भलीभांति जान लेनी चाहिए। जिस ग्राम यावत् राजधानी में एकान्त में स्वाध्याय करने के लिए विशाल भूमि न हो, मल-मूत्र त्याग के लिए योग्य विशाल भूमि न हो, पीठ, फलक, शय्या एवं संस्तारक की प्राप्ति भी सुलभ न हो और न प्रासुक, निर्दोष एवं एषणीय आहार-

पानी ही सुलभ हो, जहाँ बहुत से श्रमण, ब्राह्मण, अतिथि, दरिद्र और भिखारी लोग (पहले से) आए हुए हों और भी दूसरे आने वाले हों, जिससे सभी मार्गों पर जनता की अत्यंत भीड़ हो, साधु-साध्वी को भिक्षाटन, स्वाध्याय, शौच आदि आवश्यक कार्यों से अपने स्थान से सुखपूर्वक निकलना और प्रवेश करना भी कठिन हो, स्वाध्याय आदि क्रिया भी निरुपद्रव न हो सकती हो, ऐसे ग्राम, नगर आदि में वर्षाकाल प्रारम्भ होजाने पर भी साधु-साध्वी वर्षावास व्यतीत न करें।

उस सूत्र का अपवाद यहाँ कह दिया (यहाँ रहने के लिए उवल्लिएज्जा कहा पज्जोसवेह नहीं) जिसे टीकाकारों ने विस्तार दे दिया। श्री भद्रबाहु स्वामी जी ने बृहत्कल्पसूत्र निर्युक्ति में-

एत्थउ पणगं पणगं, कारणीयं जाव सवीसइ मासो।
सुद्ध दसमी ठियाण, आसाढी पूणिमो सरणं।।1।।

"अत्रेति आषाढपूर्णिमायां स्थिताः पंचाहं यावदेव संस्तारकं डगलादि गृह्णन्ति रात्रौ च पर्युषणाकल्पं कथयन्ति ततः श्रावणबहुलपंचम्यां पर्युषणां कुर्वन्ति अथाषाढ पूर्णिमायां क्षेत्रं न प्राप्तं तत एवमेव पंचरात्रं वर्षावासयोग्यमुपधिं गृहीत्वा पर्युषणाकल्पं च कथयित्वा श्रावण बहुल दशम्यां पर्युषणयन्ति एवं कारणेन रात्रिदिवानां पंचकं पंचकं वर्द्धयता तावत्स्थेयं यावत् सविंशति रात्रोभासः पूर्णः। अथवा ते आषाढशुद्धदशम्यामेव वर्षाक्षेत्रे स्थितास्ततस्तेषां पंचरात्रेण डगलादौ गृहीते पर्युषणाकल्पे च कथिते आषाढपूर्णिमायां समवसरणं पर्युषणं भवति एष उत्सर्गः। अतः उद्धकालं पर्युषणमनुतिष्ठतां सर्वोऽप्यपवादः। अपवादोऽपि सविंशतिरात्रात् मासात् परतो नाऽतिक्रमयितुं कल्पते यद्येतावत्कालेऽपि गते वर्षायोग्यक्षेत्रं न लभ्यते ततो वृक्षमूलेऽपि पर्युषितव्यं।" (हर्षहृदयदर्पणस्य' पृ. 23-24)

आषाढ पूर्णिमा को स्थित हुए साधु पाँच दिन में चातुर्मासी के योग्य संस्तारक डगल आदि वस्तुओं को ग्रहण करे और रात्रि में भी कल्पसूत्र का कथन करे तो श्रावण वदी 5 को गृहिअज्ञात पर्युषण करे, आषाढ पूर्णिमा को योग्य क्षेत्र न मिला तो 5 रात्रियों में वर्षावास के योग्य उपधि को ग्रहण करके और श्रीकल्पसूत्र को पढकर श्रावण वदी 10 को गृहिअज्ञात पर्युषण करे। इस तरह कारण योग से 5-5 रात्रि दिनों के पंचक-पंचक वृद्धि से यावत् 20 रात्रि सहित एक मास पूर्ण हो वहाँ रहना अथवा वह साधु आषाढ शुक्ल 10 को चातुर्मासी योग्य क्षेत्र में स्थित हुए हो तो उनको 5 रात्रि करके डगलादि ग्रहण करने पर और श्रीकल्पसूत्र में कथन करने पर आषाढ पूर्णिमा को गृहिअज्ञात पर्युषण होता है, यह उत्सर्ग

मार्ग है। इसके उपरांत काल में पर्युषण के निमित्त स्थित हुए साधुओं का सभी अपवाद मार्ग है। अपवाद मार्ग में भी 20 रात्रि सहित एक मास अर्थात् 50वें दिन की रात्रि को पर्युषण किए बिना उल्लंघन करना नहीं कल्पता है। यदि उपर्युक्त काल भी बीत गया हो और वर्षा योग्य क्षेत्र न मिला तो वृक्ष के मूल में भी रहकर चन्द्र संवत्सर में 20 रात्रि सहित एक मास यानी 50वें दिन गृहिज्ञात सांवत्सरिक कृत्ययुक्त पर्युषण करे।

केरल में मानसून 15 मई के पश्चात् ही आता है- तमिलनाडू में 15 अक्टूबर के बाद नंबर लगता है। दूरवर्ती देशों में तो और भी विसंगति मिलेगी। आर्यक्षेत्र में यही वर्षाकाल है।

आर्द्रा से स्वाति तक 9 नक्षत्रों को वर्षा का माना गया, इनमें गाजबीज की अस्वाध्याय का निषेध नहीं किया गया। 18 मुहूर्त्त से 12 मुहूर्त्त तक दिन रात्रि का उत्कृष्ट जघन्यकालमान बताया, ये सब आर्य देशों की प्रधानता से ही कथन हुआ है। प्रायः आर्द्रा नक्षत्र के पश्चात् इन क्षेत्रों में वर्षा प्रारम्भ हो जाती है- आर्द्रा नक्षत्र आषाढ मास में सामान्यतः आता है (अभिवर्धित मास वैशाख, ज्येष्ठ होने पर आषाढ से 6-7 दिन पहले) प्रावृट् ऋतु के प्रारम्भ से वर्षा प्रारम्भ होने पर चातुर्मास काल प्रारम्भ हो जाता है एवं इसमें पानी, जीव-जन्तु की विशेष उत्पत्ति हो जाती है। 1 माह 20 दिन पश्चात् तक वर्षा ऋतु के 4 या 5 नक्षत्र बीत जाते हैं (कभी-कभी छह भी)। अतः हिंसा से बचने के लिए जिस चातुर्मास की व्यवस्था है विशेष हिंसा से बचने के लिए उसके दो विभाग कर प्रथम में विहार से बचने का विशेष जोर देने के लिए केवल भयादि कारण तथा स्थान प्रतिकूलता को ठाणांग 5/2, आचारांग 2/3/1 में गिनाया।

व्यवहार 8/1, ऋतुकाल में 'पज्जोसविए' रहने के लिए आया, अन्यथा निशीथ 2/50, ठाणांग 5/2, समवाय 70 आदि सभी जगह यह 'संवत्सरी' का द्योतक है। कल्पसूत्र के जिन सूत्रों की चर्चा अगले खंडों में आने वाली है उनमें भी संवत्सरी का ही द्योतक है। यद्यपि अनंत गम अनंत पर्यव से अनेक अर्थ हो सकते हैं पर प्रधानता वाले अर्थ को स्वीकार करने पर ही वाक्य का सही अर्थ ध्यान में लिया जा सकता है। आगम लेखन तक सविंशतिरात्रि मास पश्चात् और 70 दिन शेष रहते पर्युषण करने में कोई बाधा ही नहीं थी। लौकिक मास वृद्धि को आषाढ या पौष रूप में समझने का गणित उनके पास था। 4 माह का ही चौमासा था। प्रथम काल की विशेष प्रधानता एवं द्वितीय प्रधानता स्पष्ट बतलाई ही गई हैं आगम में। अतः प्रथम काल विशेष महत्त्वपूर्ण है।

आगम से 50वें दिन संवत्सरी आराधना कर 70वें दिन कार्तिक पूर्णिमा को चौमासी आराधना कर 4 माह का चौमासा कर मिगसर कृष्णा प्रतिपदा को विहार करना ही

द्योतित होता है। विवशता से 4 माह का नहीं कर पाने की स्थिति में भी प्रथम भाग की महत्ता अधिक होने से 50वें दिन संवत्सरी आराधना कर आगम आज्ञा की अनुपालना हमारा परम पुनीत कर्त्तव्य है। चौमासा लगने से 80वें दिन संवत्सरी करना कथमपि उपयुक्त नहीं हो सकता। लौकिक गणना से बढे हुए सावण-भादवा मास को गौण करने से 50वें दिन ही संवत्सरी करते हैं ऐसा मानना तीर्थंकर, गणधरों, पूर्वधरों, आचार्यों द्वारा वीर निर्वाण संवत् 1000 तक नहीं हुआ- उन्होंने चौमासे में लौकिक गणना से बढे मास को स्वीकार नहीं कर उसे पौष मास के रूप में बढाया। सांवत्सरिक आराधना आषाढ पूर्णिमा से तिथि क्षय को नगण्य पद्धति से मान 50वें दिन ही की।

लौकिक मास वृद्धि को नगण्य नहीं गिना। चौमासे में मास वृद्धि स्वीकार ही नहीं की। लौकिक सावण वृद्धि होने पर द्वितीय श्रावण शुक्ला पंचमी को लोकोत्तर (आगम) गणना से भादवा शुक्ला पंचमी मान 50वें दिन ही संवत्सरी की। लौकिक भादवा वृद्धि होने पर लोकोत्तर (आगम) गणना से लौकिक प्रथम भादवा शुक्ला पंचमी को भादवा शुक्ला पंचमी मान 50वें दिन संवत्सरी आराधना की।

लौकिक सावण वृद्धि होने पर-

प्रथम श्रावण मास को श्रावण मास
द्वितीय श्रावण मास को भाद्रपद मास
भाद्रपद मास को आश्विन मास
आश्विन मास को कार्तिक मास
कार्तिक मास को मार्गशीर्ष मास
मार्गशीर्ष मास को प्रथम पौष मास
प्रथम पौष मास को द्वितीय पौष मास माना

भाद्रपद वृद्धि में-

श्रावण मास को श्रावण मास
प्रथम भाद्रपद मास को भाद्रपद मास
द्वितीय भाद्रपद मास को आश्विन मास
शेष ऊपर के समान ही।

सावण, भादवा की तरह आश्विन आदि की वृद्धि को भी पूरी तरह गौण करके चौमासा 4 माह का, संवत्सरी 50वें दिन व फिर 70वें दिन पश्चात् लौकिक कार्तिक कृष्णा प्रतिपदा को लोकोत्तर मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपदा के रूप में स्वीकार कर विहार किया। अगले

खंडों में इसे अच्छी तरह स्पष्ट किया ही जा रहा है।

आगम की आज्ञा आराधकों को तीर्थंकर भगवंतों, गणधर भगवन्तों आदि की भांति 20 रात्रि सहित मास अर्थात् 50वें दिन ही संवत्सरी आराधना का कल्पसूत्र की सामाचारी का कथन उपयुक्त ही लगता है।

'नगण्य पद्धति आगमकारों ने स्वीकार की ही है' यह कथन युक्तियुक्त है, पर चौमासे के चार माह में केवल तिथि की नगण्यता और चौमासे में बढ़ने वाले महीनों को वहाँ नगण्य नहीं कर उन्हें अगला महीना मान चौमासे पश्चात् पौष को ही नगण्य किया। लौकिक पंचाग के द्वितीय श्रावण या प्रथम भाद्रपद में ही संवत्सरी की। हम 4 माह का चौमासा नहीं कर पा रहे, इस एक गलती के लिए दूसरी गलती और करें?

दशवैकालिक के चौथे अध्याय में 'आमुसिज्जा संफुसिज्जा' आदि से स्पष्ट है एक बार स्पर्श हो जाए तो दूसरी बार नहीं करे, चौमासी पूर्णिमा 70वे दिन नहीं करना एक गलती है, पर उससे बड़ी गलती है आषाढी पूर्णिमा से 50वें दिन संवत्सरी नहीं करना। समवायांग के पाठ से कल्पसूत्र के पाठ में पिछले अंश को छोड़ने का कारण पूरी तरह स्पष्ट हुआ।

समवायांग- **''समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे वइक्कंते सत्तरिएहिं राइंदिएहिं सेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइ।''**

कल्पसूत्र- **''समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ।''**

जो महापुरुष/महानुभाव इस 'पज्जोसवेइ' का अर्थ- 'वर्षावास करे' करते हैं, उनसे विनम्र अनुरोध है कि भगवती शतक 15, आवश्यक निर्युक्ति, तित्थोगाली पइण्णा, त्रिषष्ठि शलाका आदि मौलिक ग्रन्थ और इन्हीं के आधार से लिखे जैन धर्म के मौलिक इतिहास, तीर्थंकर चारित्र आदि में भगवान् के 42 चौमासो का उल्लेख आया, जिनमें आषाढ पूर्णिमा पश्चात् 50 दिन तो क्या, 1 दिन भी विलम्ब से चौमासे का कहीं कोई उल्लेख नहीं, तब 50वें दिन व्यतीत होने पर चौमासे में रहने का नहीं पर्युषण-संवत्सरी करने का उल्लेख ही स्पष्ट है।

चित्त परिशोधन का पवित्र दिन-पर्युषण

श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से 50वाँ दिन

आगम-गणित से भाद्रपद शुक्ला पञ्चमी

तृतीय खण्ड

लौकिक गणित-आगम गणित और पूर्वधर काल तक की संवत्सरी

(क) लौकिक गणना मानने की विवशता-

वर्तमान में चंद्रप्रज्ञप्ति और सूर्यप्रज्ञप्ति नामक दोनों उपांग प्राय: समान वर्णन वाले हैं। एक ही वर्णन वाले दो भिन्न-भिन्न उपांग कैसे हो सकते हैं ? जीवाजीवाभिगम की तरह इनका भी नाम चंद्रसूर्यप्रज्ञप्ति हो सकता था। डॉ. छगनशास्त्री जी का अनुमान है (जिनवाणी-आगम विशेषांक-पृ.301) कि इनमें से किसी एक प्रति के प्राथमिक पृष्ठ छोडकर प्रति के नष्ट हो जाने पर उस दूसरे शास्त्र की नकल कर उस प्रथम पृष्ठ के साथ छोड़कर रख दिया अर्थात् इनमें से किसी एक शास्त्र का वर्णन दुर्भाग्यवश हमारे समक्ष नहीं है। यह दुर्घटना श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण जी के पश्चात् ही घटित हुई है। संभवतया उसी से जैन टिप्पणक के लुप्त होने की नौबत आई। जैसे नक्षत्र मास, ऋतु मास, चंद्र मास और सूर्य मास के प्रत्येक युग में सामंजस्य के सूत्र समवायांग में उपलब्ध हैं, ऐसे ही लौकिक पंचांग के गणित से वर्तमान के लोकोत्तर (आगम गणित) के अंतर का समाधान उसमें रहा हुआ होगा ऐसी पूरी संभावना है, लौकिक से लोकोत्तर में क्या अंतर है उसे एक तालिका में देखा जा सकता है-(स्थूल दृष्टि वाले आगम गणित का प्रमाण दिया गया है)

(अ) 1. गणना (सभी गणना लगभग में)

	आगम गणित	लौकिक गणित	आगम से लौकिक का अंतर
1. तिथि	59 घटी 2 पल लगभग 23 घंटे 37 मिनिट	50 घटी से 67 घटी 30 पल तक 20 घंटे से 27 घंटे तक	-9घटी+7घटी 30 मि. -3घंटे 37 मि.+3 घंटे 23 मिनिट
2. नक्षत्र	6 नक्षत्र 15 मुहूर्त के, 15 नक्षत्र 30 मुहूर्त के, 6 नक्षत्र 45 मुहूर्त्त के चंद्रयोगी होते हैं।	प्रत्येक नक्षत्र 20 घटी से कम नहीं। और 27 घंटे से अधिक नहीं। (चंद्रयोगी होते हैं।)	
3. चंद्रमास	29 दिन 30 घटी 58	29 दिन 18 घटी से	-12 घटी 38 पल +

	पल 4 विपल	29 दिन 46 घटी तक	+15 घटी 2 पल
4. सूर्यमास	30 दिन 30 घटी	29 दिन 27 घटी से 31 दिन 27 घटी तक	- 1 दिन 3 घटी + 57 घटी
5. चंद्रवर्ष	354 दिन 11 घटी 37 पल	354 दिन 22 घटी 1 पल 22 विपल	+10 घटी 24 पल - 17 घटी 29 पल
6. सूर्यवर्ष	366 दिन	365 दिन 12 घटी 31 पल 34 विपल	
7. युग(5 वर्ष)	1830 दिन	1826¼ दिन	3 ¾ दिन

2. गणना से प्रभावित तथ्य-

1. तिथि	क्षय तिथि ही, वृद्धि तिथि नहीं	क्षय, वृद्धि दोनों प्रकार की तिथियाँ	जैसे-भगवती 5/1 में 18 मुहूर्त,12 मुहूर्त
2. क्षयमास	नहीं	जघन्य 19 वर्ष उत्कृष्ट 141 वर्ष में 1 क्षय मास	का कथन 35^0अक्षांश आर्यक्षेत्र के ऊपरी
3. अधिक मास	पौष और आषाढ	फाल्गुन से कार्तिक तक	बिंदु की अपेक्षा है उसी प्रकार
4. अधिक मास	प्रत्येक तीस मास के पश्चात् अधिक मास	28 मास से 35 मास के पश्चात् अधिक मास	ओघनिष्पन्न (सामान्य बिंदु विशेष या औसत से) आगम में
5. अधिक मास	पूर्णिमान्त	अमावस्यान्त (अमान्त)	कथन है। विभाग निष्पन्न (विशेष
6. अधिक मास	4 युग अर्थात् 20 वर्ष में 8 अधिक मास	19 वर्ष में 7 अधिक मास।	जघन्य-उत्कृष्ट बिंदु सहित) लौकिक में आया।

3. अन्य संदर्भित तथ्य

1. दिनमान	सब क्षेत्रों में एक समान एक सरीखा। जघन्य 12 मुहूर्त उत्कृष्ट 18 मुहूर्त	भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार का दिनमान	नीचे की तालिका में दिखाया गया है।
2. दिनमान	सब क्षेत्रों में दिनमान की	न्यूनाधिक दृष्टिगोचर	ऊपर कहे गए कथन

	हानि वृद्धि सरीखी होनी चाहिए		की यहां से भी पुष्टि होती है। परमार्थतः
3.	तिथि मानने से सूर्यग्रहण और चंद्रग्रहण के दिन अमावस्या और पूर्णिमा का अंतकाल नहीं आता है।	ग्रहण के मध्य काल में तिथि का अंतकाल होना चाहिए ऐसा नियम है।	आकाश में एक ही रूप होता है। आगम व लौकिक दोनों गणित उसी के दिग्दर्शक हैं, समान प्रायः है।

(आ) दिनमान–

आधुनिक भूगोल के अनुसार दिन की लंबाई सूचक तालिका -

उत्तरी गोलार्द्ध की ग्रीष्म ऋतु–विभिन्न स्थानों पर दिन की लम्बाई (21 जून)

अक्षांश	दिन की लंबाई	निकटतम स्थान
10^0	12 घंटा 35 मि.	कोलोन (9^0), त्रिवेन्द्रम (9^0), काराकास (10^0), त्रिचूर (11^0), केरल (11^0), त्रिचनापल्ली (11^0), मदुराई (10^0), सेलम (12^0), कोयम्बटूर (11^0)
20^0	13 घंटा 13 मि.	होनोलूलू (21^0), मैक्सिकोसिटी (19^0), मुम्बई (19^0), अकयाब (20^0), कोडाइकनाल (20^0), आदिस अबाबा (20^0), अकोला (21^0), कलकता (23^0), अहमदाबाद ($23\frac{1}{2}^0$),
30^0	13 घंटा 56 मि.	देहली (29^0), शिमला (31^0), न्यूयार्लियन्स (30^0), चुगकियांग (30^0), काहिरा (30^0), अमृतसर
40^0	14 घंटा 51 मि.	लिस्बन (39^0), वाशिंगटन (39^0), डेनपेयर (40^0) , पेकिंग (40^0), सिनसिनाटी (39^0),
50^0	16 घंटा 18 मि.	कीव (50^0), विनीयेग (50^0), वेनकूवर (49^0),
60^0	18 घंटा 30 मि.	बर्जन (60^0), हेलसिकी (60^0), लेलिनग्राद (60^0), ओखोटस्क (59^0),
$66^3/_2{}^0$	24 घंटे	हेपारान्डा (66^0), बर्योयानस्क (68^0), आर्केन्जल

		(65°), मेजेन
70°	65 दिन	बेरोपोइन्ट (71°), नार्विक, जेनमेयन, एमडर्मा, मुर्मुन्स्क
80°	134 दिन	स्पिट्सवर्जन (78°)
90°	177 दिन	समुद्री भाग

दक्षिणी गोलार्द्ध की ग्रीष्मऋतु-अधिकतम दिन की लंबाई (22 दिसम्बर)

अक्षांश	दिन की लंबाई	निकटतम स्थान
10°	12 घंटा 35 मि.	लिन्दी (10°), कृपांग (10°)
20°	13 घंटा 13 मि.	बुलवायो (22°), ब्लानकरी (20°), दूकीक (20°)
30°	13 घंटा 56 मि.	डर्बन (30°), गेराल्डटन (29°)
40°	14 घंटा 51 मि.	वेलिंग्टन (41°), बाहिया, ब्लेक(39°)
50°	16 घंटा 18 मि.	सान्ताक्रूज (50°)
60°	18 घंटा 30 मि.	द. आर्कनिज (61°)
66½°	24 घंटे	
70°	65 दिन	सेगेस्टीर (73°)
80°	134 दिन	लिटल अमेरिका (78°), मेकमुरडोसाउन्ड (78°)
90°	187 दिन	

1. क्लाइमेटोलाजी, ले. आस्टिनमिलर

विशेष- आगमनिष्ठ सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. जीवराज जी जैन ने जैन भूगोल का विज्ञान सम्मत भूगोल से मेल बिठाने का प्रयास किया, उसी प्रकार कोई शोधार्थी इस ज्योतिष का भी मेल बिठाने का प्रयास करेगा तभी कुछ समाधान हो सकेगा।

(इ)

विसमे समय-विसेसे, करणग्गह-चार-वार रिक्खाणं।
पव्वं तिहीण य सम्मं, पसाहगंविगलियं सुत्तं।।1।।
तो पव्वाइ विरोहं णाउं, सव्वेहिं गीयसूरिहिं।
आगममूलमिणंपिअ, तो लोइय टिप्पणयं पगयं।।2।।

भावार्थ– इस विषम समय में करण, ग्रह, चार, वार, नक्षत्र और पर्व तिथियों के सम्यक् प्रसाधक सूत्र नष्ट हो चुके हैं। इस प्रकार पर्वादि विरोधों को जानकर सन्नी गीतार्थ आचार्यों ने यह (लौकिक टिप्पणक) भी आगम मूलक ही हैं, ऐसा मानकर पर्वादि निर्णय में लौकिक टिप्पणक को ही प्रमाण रूप में स्वीकार किया।

अजमेर सम्मेलन (विक्रम संवत् 1990) में पाक्षिक पत्र के लिए लौकिक व लोकोत्तर मार्ग से अविरोधी मध्यम मार्ग का अनुसरण करने का निश्चित हुआ था–तद्यथा (प्रश्नाव नं.21) यह साधु सम्मेलन पक्खी, चौमासी, संवत्सरी आदि तिथि पर्व का निर्णय करने के लिए कॉन्फरेंस ऑफिस को सत्ता देता है कि ऑफिस निष्पक्ष एवं लौकिक तथा लोकोत्तर ज्योतिष शास्त्रज्ञ विद्वान् मुनियों और श्रावकों की, लौकागच्छीय विद्वान और अन्य विद्वानों की सलाह लेकर लौकिक और लोकोत्तर मार्ग का अविरोधी मध्यमश्रेणि का मार्ग अनुसरण करके पक्खी, चौमासी, संवत्सरी आदि तिथि पर्वो का सर्वदा के लिए निर्णय करें। जिसके अनुसार हम सब चलेंगे और उस निर्णय के विरुद्ध कोई पर्व करेंगे नहीं।

सूक्ष्म गणित के लुप्त होने से तथा ओघ निष्पन्न (सामान्य या औसत) को ही पूरा मान लेने से लौकिक गणना के अंतर में उन महापुरुषों को अपनी विवशता प्रकट करनी पड़ी। आगम में उपलब्ध शेष बचे सूत्रों से गहन अनुसंधान कर प्रयास किया जाता तो स्पष्ट हो जाता कि आगम की गणना और लौकिक गणना में कोई बहुत बडा अंतर नहीं है। आगमकार आकाश की घटनाओं, ग्रहों के संचरण से होने वाले काल के भेद को सूक्ष्मता से जानते थे, फिर भी आत्मसाधना के लिए, राग निवृत्ति के लिए उन्हें चातुर्मास में मास बढ़ाना कथमपि इष्ट नहीं था। चातुर्मास के ठीक पूर्व आषाढ मास की वृद्धि के साथ मध्य में 6 मास के अंतराल पर पौष मास की वृद्धि का कथन कर दिया। जघन्य उत्कृष्ट को औसत में कह दिया, कहीं-कहीं 1 बिन्दु का कह दिया जैसे सूर्य संवत्सर में 366 दिन। युग में कहीं 1800 दिन, कहीं 1830 दिन कह दिये। इन सभी को आगे विस्तार से देखने का प्रयास होगा। यहाँ तो इतना सा कहना है–सूक्ष्म गणित के लुप्त होने से लौकिक गणित को स्वीकार करना पड़ा, पर उसमें भी हम मास वृद्धि के आगमीय विधान का सुगमता पूर्वक पालन कर अपने पर्युषण को शुद्ध रख सकते हैं, निशीथ 10/36-37 के अनुरूप पर्युषण में पर्युषण की आराधना कर सकते हैं।

(ई) सिद्धसेन गणी जी की गाथा और अजमेर सम्मेलन की बात से पुनः प्रश्न खडा होता है कि आगम गणित से चातुर्मास काल में मासवृद्धि होती ही नहीं है, लौकिक पंचांगों से होती है तो जो लौकिक पंचांग आगम की गणित के अनुरूप है ही नहीं तो हम उन्हें माने ही क्यों?

चातुर्मास में होने वाली मास वृद्धि को गौण कर आषाढ और पौष के रूप में

स्वीकार करने का आगम या इतिहास से कोई प्रमाण हो तो विचार करने की संभावना हो सकती है, यदि केवल अपनी मति से उसे उठा रहे हैं तो कौन सुज्ञ विज्ञ उसे स्वीकार कर पाएगा? श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन स्वाध्यायी संघ गुलाबपुरा राजस्थान द्वारा 1960 में मुनि श्री कुन्दनमलजी म.सा.(बाद में प्रवर्तक पद को भी सुशोभित किया) द्वारा संपादित **'अधिकमासयंत्रम्'** नामक पुस्तक उपयोगी सिद्ध होती है, जिसमें विक्रम संवत् के प्रारंभ से 2501 वर्षीय अधिक मास, क्षयमास का लौकिक ज्योतिर्गणित यंत्र दिया हुआ है। 2501 वर्ष में कार्तिक 10 बार क्षय, मार्गशीर्ष 25 बार क्षय और पौष 9 बार क्षय इस प्रकार क्षय मासों की संख्या 44 होती है तथा 966 अभिवर्द्धित मास बताए गए हैं, चैत्र 68 अधिक, वैशाख 115 अधिक, ज्येष्ठ 169 अधिक, आषाढ 183 अधिक, श्रावण 167 अधिक, भाद्रपद 142 अधिक, आश्विन 71 अधिक, कार्तिक 25 अधिक, मार्गशीर्ष 5 अधिक एवं फाल्गुन 21 अधिक इस प्रकार सर्व अधिक मास 966 होते हैं। जिनमें से 44 अधिक मास तो 44 क्षय मासों की पूर्ति करने वाले हैं अर्थात् जिन वर्षों में क्षय मास हुए हैं उन वर्षों में अधिक मास भी हुए हैं। अवशेष 922 वास्तविक अधिक मास हैं।

19 साल में 7 मास बढने से यह गणित बिल्कुल सही होता है। प्रारंभिक 60 साल का लेखा देखें तो चौमासे में वर्द्धित होने वाले महीने इस प्रकार हैं-

विक्रम संवत् 3, 11, 22, 30, 41, 49, 60 में भाद्रपद मास

विक्रम संवत् 14, 33, 52 में श्रावण मास

इससे स्पष्ट होता है कि भादवा 1 बार 8 वर्ष में, 1 बार 11 वर्ष में, 19 वर्ष में 2 बार और श्रावण 19-19 वर्ष में 1-1 बार बढा है।

इस पुस्तक से ध्वनित होने वाले तथ्य-

1. आगम युग में लौकिक पंचांग से चातुर्मास में भी मासवृद्धि होती थी।
2. विक्रम संवत् के पूर्व भी इसी गणित के आधार से मासवृद्धि होती थी।
3. क्वचित् अपवादों को छोडकर प्रायः 19 साल बाद वही महीना बढता है। क्षय मास आने पर क्रम परिवर्तन हो सकता है।

वर्तमान के 30 वर्ष का लेखा-

1. विक्रम संवत् 2039, 2058 (ईस्वी सन् 1982, 2001) में आसोज मास की वृद्धि
2. विक्रम संवत् 2042, 2061 (ईस्वी सन् 1985, 2004) में सावण मास की वृद्धि
3. विक्रम संवत् 2045, 2056, 2064 (ईस्वी सन् 1988, 1999, 2007) में ज्येष्ठ मास की वृद्धि

4. विक्रम संवत् 2048, 2067 (ईस्वी सन् 1991, 2010) में वैशाख मास की वृद्धि
5. विक्रम संवत् 2050, 2069 (ईस्वी सन् 1993, 2012) में भादवा मास की वृद्धि
6. विक्रम संवत् 2053, 2072 (ईस्वी सन् 1996, 2015) में आषाढ मास की वृद्धि।

अब इसी गणित को भगवान महावीर स्वामी की दीक्षा दिवस से देखने का प्रयास किया जाए-42 वर्ष के संयम पर्याय में लौकिक पंचांगानुसार 19 वर्ष में 7 मास की वृद्धि से 38 वर्ष में 14 तथा 4 वर्ष में 2 के बढने की संभावना है, कुल 16 मास में से 7 मास चातुर्मास में बढे हैं। चौमासे में बढने वाले महीनों की संभावना इस प्रकार है-

भ.महावीर की दीक्षा का वर्ष	निर्वाण पूर्व	मास वृद्धि	
1	42	भाद्रपद	
9	34	भाद्रपद	कदाचित् क्रम परिवर्तन होने पर 2 भाद्रपद, 2 श्रावण, 2 आश्विन 6 माह तो न्यूनतम आयेंगे ही
12	31	श्रावण	
20	23	भाद्रपद	
28	15	भाद्रपद	
31	12	श्रावण	
39	4	भाद्रपद	

दीक्षा लेने के दिन से ही प्रथम वर्ष प्रारंभ हो जाता है। निर्वाण बाद ही गणना एक वर्ष पूरा होने पर होती है। अत: दीक्षा का प्रथम वर्ष निर्वाण पूर्व 42 कहलाता है।

भगवान महावीर स्वामी के प्रथम वर्षावास के संदर्भ में भगवती सूत्र शतक 15 का पाठ- ''तेणं कालेणं तेणं समएणं अहं गोयमा!तीसं वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता अम्मापिईहिं देवत्तगएहिं एवं जहा भावणाए जाव एगं देवदूसमादाय मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए। तए णं अहं गोयमा! पढमं वासं अद्धमासं अद्धमासेणं खममाणे अट्ठियगामं णिस्साए पढमं अंतरावासं वासावासं उवागए।'' जिसका अभिप्राय यह है कि अस्थिग्राम के इस प्रथम वर्षावास में 15-15 दिन के उपवास 8 बार किए। इस प्रकार यह प्रथम वर्षावास शांतिपूर्वक संपन्न हुआ। अस्थिग्राम का वर्षाकाल समाप्त कर मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपदा को भगवान ने मोराक सन्निवेश की ओर विहार किया।

भगवान महावीर स्वामी के प्रथम वर्षावास के समय लौकिक पंचांग से भादवा बढने पर भी 4 मास का ही चौमासा हुआ, उस बढे हुए भादवा का प्रभाव पौष मास के

बढाने पर संतुलित हो ही जाता है। अतः भगवान ने लौकिक प्रथम भाद्रपद-आगमीय भाद्रपद मास में प्रथम पर्युषण किया।

भगवान महावीर स्वामी के 12वें चातुर्मास से देखें (जैन धर्म का मौलिक इतिहास भाग 1, पृ.394 से) "कौशांबी से विहार कर प्रभु चंपानगरी पधारे और चातुर्मासिक तप करके उन्होंने वहीं स्वातिदत्त ब्राह्मण की यज्ञशाला में 12वां चातुर्मास पूर्ण किया।"

इस चौमासे में लौकिक पंचांग से 2 सावन आते हैं, उन्हें भी पौष मास के रूप में आगम गणित से अभिवर्धित मानने पर ही छद्मस्थकाल 12 वर्ष 13 पक्ष सही बैठ सकता है।

मिगसर कृष्णा दशमी को दीक्षा हुई। इस वर्ष के चौमासे के पश्चात्-

मिगसर कृष्णा 10 को 12 वर्ष पूर्ण उससे आगे
पौष कृ.10 को 1 महीना
माघ कृ.10 को 2 महीना
फाल्गुन कृ.10 को 3 महीना
चैत्र कृ.10 को 4 महीना
वैशाख कृ.10 को 5 महीना=10 पक्ष
वैशाख शु.10 को केवलज्ञान तक=1पक्ष
कुल 12 वर्ष 11 पक्ष

ये कुल 12 वर्ष 11 पक्ष ही हुए, अभिवर्धित मास के 2 पक्ष मिलाने पर ही 12 वर्ष 13 पक्ष छद्मस्थकाल बैठता है।

ठाणांग सूत्र के 9वें ठाणे का पाठ-"**अहं तीसं वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता मुंडे भवित्ता जाव पव्वइए दुवालससंवच्छराइं तेरस पक्खा छउमत्थपरियागं पाउणित्ता तेरसेहिं पक्खेहिं ऊणगाइं.....सव्वदुक्खप्पहीणे**" अर्थात् मैं 30 वर्ष में रहकर मुंडित यावत् 12 वर्ष 13 पक्ष छद्मस्थपर्याय को पालकर सर्व दुःखों का अंत करूंगा। तथा कल्पसूत्र में-"**तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे तीसे वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता साइरेगाइं दुवालस वासाइं छउमत्थपरियागं पाउणित्ता देसूणाइं...सव्वदुक्खप्पहीणे**" अर्थात् उस काल उस समय श्रमण भगवान महावीर 30 वर्ष तक गृहवास में रहकर, 12 वर्ष से भी अधिक समय तक छद्मस्थ पर्याय में रहे।

यह तभी संभव है जबकि मिगसर के पश्चात् मास वृद्धि मानी जाए और आगम गणित के अनुसार वह पौष मास बढेगा, लौकिक गणित में कभी पौष मास की वृद्धि है ही

नहीं और लौकिक गणित में साधना के 12वें वर्ष में श्रावण मास वृद्धि की संभावना विक्रम संवत् के यंत्र से बनती है अतः यह स्पष्ट हुआ कि तीर्थंकर भगवंत ने लौकिक पंचांग में चातुर्मास में बढने वाते महीने को पौष मास की वृद्धि के रूप में संतुलित किया और चातुर्मासिक विहार लौकिक कार्तिक कृष्णा प्रतिपदा आगमीय मिगसर कृष्णा प्रतिपदा को किया। छद्मस्थकाल के अंतिम चौमासे में मासवृद्धि अनिवार्य है। लौकिक पंचांग से वह श्रावण आता है-भगवान ने उस द्वितीय श्रावण शुक्ला पंचमी को भाद्रपद शुक्ला पंचमी मान आराधना की। कार्तिक कृष्णा प्रतिपदा (लौकिक) को मिगसर कृष्णा प्रतिपदा मान विहार किया। मिगसर कृष्णा दशमी (लौकिक कार्तिक कृष्णा दशमी) को दीक्षा के 12 वर्ष पूर्ण हुए। तदनन्तर पौष मास की वृद्धि से 12 वर्ष 13 पक्ष पूर्ण होने पर उन्हें केवलज्ञान हुआ।

(उ) वीर निर्वाण 470 से 584 तक के दश पूर्वी काल में बढने वाले महीने देखें-

(मुनिश्री कुन्दनमलजी म.सा.के 'अधिक मास यंत्रम्' पुस्तक के आधार से)

भाद्रपद-वि.सं. 3,11,22,30,41,49,60,68,87,106 में बढा	= कुल 10 बार
श्रावण-वि.सं. 14,33,52,79,98 में बढा	= कुल 05 बार
आश्विन-वि.सं. 76,95,114 में बढा	= कुल 03 बार
	18 माह

वी.नि. 470 से 584 तक ये 114 वर्ष दश पूर्वी काल है, उनमें चातुर्मास में 18 माह बढे। वी. नि. 470 तक भी 173 मास वृद्धि होती है-जिनमें 74 मास चातुर्मास में व 99 मास चातुर्मास पूर्व बढ़ना इसी पुस्तिका की गणना से अनुमानित है। उन 74 मास को भी उन केवली, श्रुतकेवली, दशपूर्वियों ने नहीं बढाया-पौष मास को बढा मान 50/70 दिनों में पर्युषण किया। चाहे लौकिक में वह द्वितीय श्रावण शुक्ला पंचमी हो या प्रथम भाद्रपद शुक्ला पंचमी-उन्होंने आगमीय गणना से उसे भाद्रपद शुक्ला पंचमी माना।

अब इसी पुस्तिका से दशपूर्वी के अंतिम 114 वर्ष देखें-

19 वर्ष में 7 माह बढ़ते हैं

114 वर्ष में $= \frac{114 \times 7}{19}$

114 वर्ष में = 42 माह बढ़ेंगे।

जिसमें चौमासे में 18 माह बढ़े हैं

चौमासे के अतिरिक्त 24 माह

विक्रम संवत् 114 (वी. नि. 584, ई.सन्57) दशपूर्वी काल अंतिम दशम पूर्वधर

वज्रस्वामी तक चौमासे में 18 बार मास वृद्धि : श्रावण 5 बार, भाद्रपद 10 बार इस तरह 15 बार बढने पर भी पौष वृद्धि के रूप में स्वीकार कर 1 मास 20 दिन व 70 दिन दोनों की यथावत् पालना की गई, ऐसा इतिहास से द्योतित होता है। तथा

(ऊ) सामान्य पूर्वधर काल में (विक्रम 114 से 530, वी. नि. 584 से 1000 तक) मास वृद्धि-

भाद्रपद–विक्रम संवत्- 125, 133, 152, 171, 190, 209, 228, 247, 293, 312, 331, 350, 369, 377, 388, 434, 453, 472, 491, 499, 510, 518, 529 = कुल 23 बार

श्रावण–विक्रम संवत्- 117, 136, 144, 155, 163, 174, 182, 193, 201, 220, 239, 258, 266, 277, 285, 296, 304, 315, 323, 334, 342, 361, 380, 399, 407, 426, 445, 464, 483, 502, 521 = कुल 31 बार

आश्विन–विक्रम संवत्- 179, 198, 217, 236, 255, 274, 288, 339, 358, 396, 415, 480 = कुल 12 बार

भाद्रपद	+	श्रावण	+	आश्विन		= कुल महीने
23	+	31	+	12		= 66 महीने

वी.नि. 584 से 1000 तक ये 416 वर्ष सामान्य पूर्वधर काल है, उनमें कुल 66 माह चातुर्मास में बढे।

∴ 19 वर्ष में 7 माह बढते हैं

416 वर्ष में $= \frac{416\times7}{19} \quad \frac{2912}{19}$

153 माह

19) 2912
 19
 101
 95
 62
 57
 5 +1 बार और = 154 माह वृद्धि

416 वर्ष में = 154 माह वृद्धि
 – 66 चातुर्मास में
 88 चातुर्मास के अतिरिक्त माह वृद्धि

इनमें विक्रम 179, 198, 320, 339, 461, 480, 526 में क्रमशः कार्तिक मिगसर इसी रूप में 4 बार कार्तिक व 3 बार मिगसर क्षय भी हुए।

पुस्तिका में 161 माह वृद्धि के 7 माह क्षय शुद्ध वृद्धि 154 बतायी गयी।

अनुपात बिल्कुल बराबर रहा 3 पौष : 4 आषाढ-66पौष : 88 आषाढ

विक्रम 114 से 530 (वी. नि. 584 से 1000, ई.स. 57 से 473) सामान्य पूर्वधर काल तक 31 बार श्रावण और 23 बार भादवा बढे (31+23=54), 54 माह जो चातुर्मास में बढे उन्हें पौष वृद्धि के रूप में स्वीकार कर संवत्सरी 50 वें दिन की।

फिर भी आगम युग में पौष बढाकर चौमासे में मास वृद्धि किए बिना विक्रम संवत् एवं ईस्वी सन् का तालमेल बना रहा।

वर्तमान युग में दीपावली आदि लौकिक पर्व के साथ में भगवान महावीर निर्वाण कल्याणक की तिथि मनायी जाने से एवं अन्यान्य बाधाओं से चातुर्मास 5 मास का किया जाने लगा तो भी संवत्सरी की आराधना 50 वें दिन करना पूरी तरह आगम सम्मत, युक्ति संगत सिद्ध होता है। जैसा कि चंद्रसूर्यप्रज्ञप्ति के विषय में कहा जा चुका है कि उनमें से किसी एक का लोप हो चुका है।

इस प्रकार यह निर्विवाद स्पष्ट हुआ कि युग और युग से दीर्घकालीन संवत्सर की गणना आदित्य संवत्सर से ही होती है। युग में ऋतुसंवत्सर 61, चंद्र संवत्सर 62 और नक्षत्र संवत्सर 67 करके उन सबका सामंजस्य बिठा लिया जाता है, वेदकालीन परंपरा भी इसी प्रकार की थी।

वेदकालीन परंपरा-('अधिक मास यंत्रम्' पृष्ठ-5 'मुनि श्री कुंदनमलजी म.सा.')

वेदों के ज्योतिर्विभाग की रचना करने वालों के विषय में इतिहासकारों का मत है कि इस विभाग की रचना आचार्य लगध ने की है जो ईस्वी सन् से 1400 वर्ष पूर्व हुए हैं। उन महान आचार्य ने सौर वर्ष एवं युग का वर्णन करते हुए कहा है कि:-

"त्रिंशत्यह्नां सषट् षष्टिरब्दः षट् ऋतवोऽयने।
मासा द्वादश सूर्याः स्युरेतत्पंच गुणं युगम्।।"

-यजुर्वेद ज्योतिष, श्लोक 27

उक्त श्लोक में सौर वर्ष का वर्णन करते हुए आचार्य कहते हैं कि सौर वर्ष 366 दिन का होता है और ऐसे सौर वर्ष में 6 ऋतु, 2 अयन एवं 12 मास होते हैं तथा ऐसे 5 सौर वर्षों का एक युग होता है।

हमारे आगमों के वर्णन के अनुरूप वहाँ भी औघिक सामान्य कथन ही है, पर उसकी गणना की सूक्ष्मता-विभाग-निष्पन्नता से वे पंचांग बनाते थे, आज तक बन रहे है।

मुनिश्री कुंदनमलजी म.सा. के शब्दों में-' भारतीयों के धार्मिक पर्वो का आधार चान्द्र तिथि एवं चान्द्र मास है जो कि सौर तिथि एवं सौर मास से लंबाई में छोटा होता है, इधर ऋतु अयन वगैरह का आधार ज्योतिर्गणितानुसार सूर्य माना गया है। अस्तु भारतीय

पंचांगकारों ने धार्मिक पर्वों के आधारभूत चांद्र तिथि मास को प्रधानता दी है, चूंकि विश्व का हित धर्म में ही संनिहित है, लेकिन ऋतु एवं सौर तिथि मास से भी इसका (चान्द्र तिथि मास का) संबंध विच्छेद न हो अर्थात् दोनों पद्धतियों का निर्वाह साथ-साथ होता रहे इसी लक्ष्य को मध्य नजर रखते हुए भारतीय पंचांगकारों ने चान्द्र सौर (Luni Solar)वर्ष को मान्यता प्रदान की है। अर्थात् चान्द्र वर्ष एवं सौर वर्ष के संमिश्रण को स्थान दिया गया है अत: दोनों के मध्य में जो अंतर रहा हुआ है उस अतंर को निकालने के लिये भारतीय ज्योतिर्वेत्ताओं ने अधिक मास की रचना की है।

(ख) गणना में 1 वर्ष तक के अंतर की संभावना-

भगवान महावीर का निर्वाण कार्तिक कृष्णा अमावस्या को हुआ। वर्तमान में यह तिथि 17 अक्टूबर से 15 नवंबर तक आती है। पूर्व में वर्णित किया जा चुका है कि निरयन पद्धति से सायन पद्धति में 25 दिन का अंतर पड़ रहा है अर्थात् उस समय यह तिथि लगभग 22 सितंबर से 20 अक्टूबर तक आना संभावित है। औसत रूप से इसे 5-6 अक्टूबर कह सकते हैं। कोई यह पूछे कि ई.सन् तो बाद में शुरू हुआ पहले यह तारीखें कहाँ थी तो विनम्र निवेदन है-

(अ) 'भारत पर सिकंदर द्वारा आक्रमण'- आचार्य स्थूलभद्र के आचार्यत्वकाल में लगभग वीर निर्वाण सं. 200 तदनुसार ईसा पूर्व 327 में भारतवर्ष के उत्तर-पश्चिमी प्रदेशों पर यूनान के शाह सिकंदर ने एक प्रबल सेना लेकर आक्रमण किया..... बैबिलोन पहुंचते-पहुंचते सिकंदर की ई.पूर्व जून 323 में मृत्यु हो गई, इस प्रसंग में - जैन धर्म का मौलिक इतिहास भाग-2 पृष्ठ 419

"In June 323 B.C. Alaxender died at Babylon & no permanent incumbent in philip's place could ever be appointed (V.A. Smith's Ashoka P.I. Cambridge History, P.428-1-23-8)" ईसा से 323 वर्ष पूर्व सिकंदर ॲलेक्झेंडर बैबीलौन में मृत्यु को प्राप्त हुआ और उस फिलिप्स राज्य पर हमेशा राज्य करने वाला कोई नहीं रहा अर्थात् जनवरी, फरवरी महीने ईसा से पूर्व भी चलते थे।

(ब) भगवान महावीर का निर्वाण विक्रमादित्य से 470 वर्ष पूर्व हुआ।

विक्रम का संवत् चैत्र शुक्ला एकम को लगता है।

वर्तमान में वह 17 मार्च से 15 अप्रैल तक आता है।

25 दिन घटाने पर 22 फरवरी से 20 मार्च तक आना संभावित है।

(स) ई.सन् 1 जनवरी को ही लगता है।

भ.महावीर का निर्वाण	विक्रम पूर्व	ईसा पूर्व (B.C.)
निर्वाण संवत्सर 0	470	527
निर्वाण पश्चात् 1 जनवरी को 0	470	526
निर्वाण पश्चात् चैत्र शुक्ला प्रतिपदा 0	469	526

शून्य को पहला भी बोलने में आ जाता है, इसी प्रकार पूर्व की, आगे की इन सारी गणनाओं में लगभग 1 वर्ष का अंतराल रह सकता है।

जैसे शून्य का 470 या 469 विक्रम पूर्व और 527 या 526 ईसा पूर्व दोनों में समावेश हो जाता है। उसी प्रकार इतना सा अंतर सभी गणनाओं में रह सकता है।

(ग) आगम की मासवृद्धि-लौकिक पंचांग की मासवृद्धि-
विभिन्नता अथवा समानता?

(अ) मास वृद्धि नहीं मानने से मुस्लिम के संवत् आगे बढते जा रहे हैं और त्यौहार बदल बदल कर 12 ही मास में आ जाते हैं-मक्का से मुहम्मद साहब को भागना पडा, उसे 'हिजरत' कहते हैं। 20 जून 622 ई.सन् की यह बात है (नेट पर यह तारीख 20 जुलाई 622 मिलती है)। (सर्व सेवा संघ की पुस्तक से) (जैन धर्म का मौलिक इतिहास भाग 4 पूर्व पीठिका पृष्ठ 58 से 64 पर भी विवेचन है।)

	हिजरत	वी.नि.	विक्रम	ईस्वी
	0	1149	679	622
वर्तमान में	1432	2538	2069	2012
कुल वर्ष बीते	1432	1390	1390	1390

इस वर्ष हिजरत से 1390 वर्ष पूर्ण हुए- अतः हिजूरत भी 1390 होना चाहिए, पर हिजूरत का वर्ष 1390 न होकर 1432 चल रहा है-

1432-1390=42 वर्षों का अंतर है। क्यों? वे मास वृद्धि नहीं करते

19 वर्षों में महीने बढ़ते हैं = 7

1 वर्ष में महीने बढ़ते हैं = 7/19

1390 वर्षों में महीने बढ़ेंगे = 7/19×1390 = 9730/19 = 512 महीने बढ़े

512/12 = 42 वर्ष 8 मास बढे

19 वर्ष में 7 माह वृद्धि के औसत से

32 वर्ष 6 माह 25 दिन में 12 महीने बढ़ते हैं।

प्रत्येक लगभग 32 ½ वर्ष पश्चात् मुस्लिम त्यौहार 1 वर्ष पहले खिसक जाएगा/

खिसक जाता है।

जो महीने बढाते हैं-वे 1432 हिजरत से 42 वर्ष कम-1390 वर्ष ही आगे बढ पाए। पर यहां यह स्पष्ट ध्यान में लेना है कि ईस्वी (आदित्य वर्ष) विक्रम या वीर निर्वाण (चंद्र वर्ष) लंबी दूरी पर भी बराबर ही चलते हैं।

मुस्लिम समाज में मास वृद्धि नहीं होने से प्रत्येक अभिवर्धित वर्ष में 1 महीना पहले होने से उनके त्यौहार ईद, मोहर्रम बदल बदलकर 12 ही मास में आते हैं।

(आ) आगम सम्मत मास वृद्धि-लौकिक पंचांग के अनुरूप ही-इतिहास से स्पष्ट-

(अ) आगम गणना से	युगमध्य में	पौष बढ़ता है
	युगान्त में	आषाढ़ बढ़ता है

5 वर्ष में 2 मास बढ़ते हैं

20 वर्ष में 8 मास बढ़ेंगे।

(ब) लौकिक से 19 वर्ष में 7 माह बढ़ते हैं-

380 वर्ष में देखें-

आगम	**लौकिक**
20 वर्ष में= 8 मास	19 वर्ष में = 7 मास
1 वर्ष में = 8/20	1 वर्ष में = 7/19
380 वर्ष में=8/20×380= 152 मास	380 वर्ष में= 7/19×380= 140 मास

380 वर्षों में आगम गणना और लौकिक गणना में 12 मास अर्थात् 1 वर्ष का अंतर पड़ता है।

वी. नि. 1140 तक 3 वर्ष का अंतर हो जाना सिद्ध होता है, अर्थात् विक्रम 673, ईस्वी 616 में वी. नि. 1140 ही होगा। जो 3 वर्ष कम है, जबकि उस समय वी. नि. 1143 ही था।

स्पष्ट है अतीत में लुप्त हुए चंद्रप्रज्ञप्ति अथवा सूर्यप्रज्ञप्ति में यह गणित था। वार्षिक लौकिक मास वृद्धि और आगम मास वृद्धि में कोई अतंर नहीं था। अतंर था तो मात्र नाम का।

जैसे मुस्लिम गणना में मास वृद्धि नहीं होने से वह 42 वर्ष आगे बढ गया, वैसे ही विक्रम संवत् वीर निर्वाण संवत् से प्रत्येक 32 1/2 वर्ष में 1 महीना पीछे खिसकता जाएगा।

विक्रम संवत्, वीर निर्वाण संवत् और ईस्वी सन् का तालमेल बराबर बना हुआ है,

जिसे हम केवलिकाल, श्रुतकेवलिकाल, दशपूर्वधर काल और सामान्य पूर्वधर के काल के द्वारा देखते हैं-

	केवलिकाल	स्वर्गवास तिथि वीर निर्वाण	विक्रम संवत्	ईस्वी सन्
1.	श्री सुधर्मास्वामी जी	वी.नि. 20	वि.पू. 450	ई.स.पू.507
2.	श्री जंबूस्वामी जी	वी.नि. 64	वि.पू. 406	ई.पू. 463
श्रुतकेवलिकाल				
3.	श्री प्रभवस्वामी जी	वी.नि. 75	वि.पू. 395	ई.पू. 452
4.	श्री शय्यंभव स्वामी जी	वी.नि.98	वि.पू. 372	ई.पू. 429
5.	श्री यशोभद्र स्वामी जी	वी.नि. 148	वि.पू. 322	ई.पू. 379
6.	श्री संभूत विजय जी	वी. नि. 156	वि.पू. 314	ई.पू. 371
7.	आ.श्री भद्रबाहु स्वामीजी	वी.नि. 170	वि.पू. 300	ई. पू. 357
दशपूर्वधर काल				
8.	आचार्य स्थूलभद्रजी	वी.नि. 215	वि.पू. 255	ई.पू. 312
9.	आर्य महागिरी जी	वी.नि. 245	वि.पू. 255	ई.पू. 282
10.	आर्य सुहस्ती जी	वी.नि. 291	वि.पू. 179	ई.पू. 236
11.	आर्य बलिस्सह जी	वी.नि. 329	वि.पू. 141	ई.पू. 198
12.	आर्य स्वाति जी	वी.नि. 336	वि.पू. 134	ई. पू. 191
13.	श्री श्यामाचार्य जी	वी.नि. 376	वि.पू. 94	ई.पू. 151
14.	आर्य षांडिल्य जी	वी.नि. 414	वि.पू. 56	ई.पू. 113
15.	आर्य समुद्रजी	वी.नि. 454	वि.पू. 16	ई.पू. 73
16.	आर्य मंगुजी	-	(विक्रम संवत् प्रारम्भ)	
17.	आर्य धर्म जी	वी.नि. 494	वि. 24	ई.पू. 33
				(ईसा मसीह की मृत्यु उपरान्त)
18.	आर्य भद्रगुप्त जी	वी.नि. 533	वि. 63	ईस्वी 6
19.	आर्य वज्र जी	वी. नि. 584	वि. 114	ई 57
20.	आर्य रक्षित जी	वी.नि. 597	वि. 127	ई. 70

सामान्य पूर्वधर 9 1/2

21.	आर्य नंदिल जी	-	-	-
22.	आर्य नागहस्ती जी	-	-	-
23.	आर्य रेवतिनक्षत्र जी	वी.नि. 640-650	वि. 170-180	ई. 113-123
24.	आचार्य सिंह	वी.नि. 826	वि. 356	ई. 299
25.	स्कन्दिलाचार्य	वी.नि. 840	वि. 370	ई. 313
26.	आचार्य हिमवंत	-	-	-
27.	श्री नागार्जुनाचार्य	वी. नि. 904	वि. 434	ई. 377
28.	श्री गोविन्दाचार्य	-		
29.	आचार्य भूतदिन्न	वी.नि. 983	वि. 513	ई. 456
30.	श्री लौहित्याचार्य	-		
31.	श्री दूष्यगणी	-		
32.	देवर्द्धि क्षमाश्रमण	वी. नि. 1000	वि. 530	ई. 473

इतिहास से स्पष्ट है कि आगमकार भी लौकिक गणना की भाँति ही मासवृद्धि करते हैं। बढे हुए मास के नाम में अन्तर हो सकता है, 5 महीने बाद तक बढा सकते हैं।

(इ) प्रश्न यह भी उपस्थित होता है चंद्रसूर्यप्रज्ञप्ति में एक के विलुप्त होने का अनुमान क्यों किया जा रहा है, सूक्ष्म गणित के विच्छेद होने से आगमिक गणना का विच्छेद क्यों कहा जा रहा है? लौकिक गणना के 1826¼ दिन के युग की अपेक्षा आगम गणना के 1830 दिन को मानने से 3¾ दिन का ही तो अंतर पडता है, फिर क्यों लौकिक गणना स्वीकार की जाय? गणना से नभमंडल में चलने वाले चंद्रसूर्यादि प्रभावित नहीं होते हैं, जैसे-

(1) सूक्ष्म गणना से शुक्ला द्वितीया को पश्चिम दिशा में दिखने वाला बालचंद्र द्वितीया को ही दिखेगा कोई 4 दिन बाद द्वितीया मानकर आकाश को देखे तो दूज का नहीं आकाश मंडल के बीच छट्ठ का चंद्रमा ही दिखेगा, फिर बालचंद्रादि की अस्वाध्याय सही रूप से नहीं पल सकेगी।

(2) पूर्णिमा की रात्रि को पूरा चंद्र रात भर आकाश में चमककर चला जाएगा और 4 दिन बाद जबकि लगभग पौने 3 घंटे, 3 घंटे के बाद चंद्रमा उदित होगा तब पंचांग में भले ही पूर्णिमा हो, आकाश में पूर्णिमा नदारद मिलेगी, इसी तरह की समस्या अमावस्या आदि पर्वों में आएगी। अत: पक्खी, चौमासी, संवत्सरी सारे पर्वों का धर्मध्यान अस्त-व्यस्त हो जाएगा। 4 पूर्णिमा एवं अगले दिन की प्रतिपदा की अस्वाध्याय की पालना सही रूप से नहीं हो सकेगी।

(3) समुद्र में ज्वार भाटा अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा को ही देखने में आता है। इन सब कारणों से सूक्ष्म गणित को मानना अनिवार्य हो जाता है।

(ई) अगला प्रश्न पुनः यह खड़ा होता है ये गणना तो बहुत बाद में शुरू हुई है, पहले कैसे काम चलता होगा?

(1) चक्रव्यूह में फंसाकर जयद्रथ ने अभिमन्यु को मार डाला, अर्जुन ने संकल्प कर लिया कि कल सूर्योदय तक जयद्रथ का वध नहीं करूँगा तो अग्नि में प्रवेश कर लूंगा। अगले दिन जयद्रथ युद्धभूमि में आया ही नहीं, गुप्तरूप से कहीं छुपा दिया गया। अंधकार सा होने से युद्ध विराम करके दोनों तरफ के महारथी रुक गए। पांडव सेना में कोहराम मच गया। अर्जुन के चिता प्रवेश की तैयारी शुरू हो गयी, लकडी बिछाकर अर्जुन उस पर बैठा, इसे देखने के कुतुहल से जयद्रथ भी सामने आ गया इतने में धीरे-धीरे पूरा उजाला हो गया, वासुदेव श्री कृष्ण ने अर्जुन को ललकारा, धनुष बाण उसके हाथ में संभलाया और जयद्रथ का वध हो गया।

इस प्रसंग में वहाँ वर्णन मिलता है-अर्जुन की चिता प्रवेश के प्रसंग में सभी पांडव पक्ष के लोग चिंतातुर भले ही हों श्रीकृष्ण पूर्ण आश्वस्त थे, क्योंकि वे पूर्वरात्रि में ही ज्योतिषी के पास जाकर आए थे और उस ज्योतिषी ने आज की अमावस्या को होने वाले खग्रास सूर्यग्रहण की उन्हें जानकारी करा दी थी। ग्रहण के कारण अंधकार होते ही युद्ध विराम हुआ और ग्रहण के अंत में जयद्रथ का वध। वैदिक मान्यता के अनुसार महाभारत का काल 5000 वर्ष पूर्व माना जाता है अर्थात् तब भी यह गणना थी।

(2) प्रत्येक तीर्थंकर के जन्म का समय भी ज्योतिषी की गणना में श्रेष्ठ ही होता है।

(3) ज्ञाताधर्मकथांग 8वें अध्याय (मल्ली भगवती में) अरणक के प्रसंग में भी 'जुत्तो पूसो विजओ मुहुत्तो' ज्योतिषी गणना का विवेचन है।

(4) जीवाजीवाभिगम सूत्र तीसरी प्रतिपत्ति-'**रयणियरदिणयराणं णक्खत्ताणं महग्गहाणं च चारविसेसेण भवे सुहदुक्खविहीमणुस्साणं**।।3।।' अर्थ-(कर्मों के कारण) रजनीकर, दिनकर, नक्षत्र और महाग्रहादि की चाल के निमित्त से जीव को सुख दुःख होता है।

पर मासवृद्धि की गणना में इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इसलिए लौकिक पंचांग के गणित को स्वीकार करते हुए चौमासे में बढे हुए महीनों को आगमकालीन परंपरा के अनुसार पौष माह की वृद्धि के रूप से स्वीकार कर हम चौमासे को पुनः 4 महीने का कर सकें तो बहुत अच्छा है, उस दशा में 50-70 दोनों की पालना विधिवत् हो ही जाती है।

यदि उस गलती को न सुधार सकें तो भी संवत्सरी को शुद्ध रखते हुए लौकिक विवशतावश यदि 5 महीने का चौमासा ही करें तो भी बढे हुए सावण, भादवा आदि मासों को लौकिक पंचांग की मान्यतानुसार यहीं पर गौण करके आगम की मान्यतानुसार पौष मास की वृद्धि के रूप में स्वीकार कर आषाढ की पूर्णिमा से 50वें दिन संवत्सरी करें। संवत्सरी महापर्व को तो अशुद्ध दिन(आगम के अनुसार अपर्युषण) नहीं ही करें।

(घ) वि. सं. 01 से 41 तक बढने वाले मासों का उदाहरण सहित अवलोकन–

स्थूल से सूक्ष्म में जाने का तरीका लुप्त होने से निश्चय में उस तरीके का वर्णन संभव नहीं, पर संभावना कर सकते हैं कि लौकिक गणना की मासवृद्धि के अनुरूप ही आगम की गणना निकटवर्ती पौष या आषाढ बढाने की रही। यदि केवल आगम की गणना से चलते तो 380 वर्ष में संवत्सरी पूरे 12 माह में प्रत्येक भिन्न-2 ऋतु में मुस्लिम समुदाय के त्यौहार की तरह भ्रमण करती रहती।

(अ) चातुर्मास भी 12 माह में बदलते रहते, इसकी अनुमानित एक झाँकी–

क्र.	वि.सं.	लौकिक गणित (चैत्र कृष्णा अमावस्या वर्ष पूर्ण, चैत्र शुक्ला प्रतिपदा को प्रारम्भ) मास वृद्धि	आगम गणित युग: चैत्र शुक्ला से आषाढी पूर्णिमा तक	आगम गणित युग: चौमासा लगने से श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से चैत्र अमावस्या	माह	लौकिक पंचाग से चौमासा कितने माह पश्चात् लगना/उतरना
01	02-	–	1	2	–	
02	03	भादवा	2	3	पौष	1 माह पूर्व चौमासा पूर्ण
03	06	आषाढ	5	–	आषाढ	
04	08	–	–	8	पौष	
05	09	वैशाख	–	–		
06	11	भादवा	10	–	आषाढ	1 माह पश्चात् श्रावणी पूर्णिमा को चौमासी उतरते बराबर
07	13	–	–	13	पौष	
08	14	श्रावण	–	–		1 माह पश्चात् श्रावणी

					पूर्णिमा को चौमासा उतरते कार्तिक पूर्णिमा बराबर
09 16	-	15	-	आषाढ	1 माह पश्चात् श्रावणी पूर्णिमा को चौमासा उतरते मिगसर पूर्णिमा को पूर्ण
10 17	ज्येष्ठ	-	-		
11 18	-	-	18	पौष	
12 20	चैत्र	-	-		
13 21	-	20	-	आषाढ	1 माह पश्चात् श्रावणी पूर्णिमा को चौमासा
14 22	भादवा	-	-	-	1 माह पश्चात् श्रावणी पूर्णिमा को चौमासा बराबर उतरते
15 23	-	-	23	पौष	24-1 माह पश्चात् श्रावणी पूर्णिमा
16 25	आषाढ	-	-		उतरते बराबर
17 26	-	25	-	आषाढ	1 माह पश्चात् श्रावणी पूर्णिमा प्रारम्भ
18 28	वैशाख	-	28	पौष	27- 1 माह पश्चात् मिगसर पूर्णिमा पूर्ण 28- बराबर
19 30	भादवा	-	-	-	29- 1 माह पश्चात् श्रावणी पूर्णिमा 30- 1 माह पश्चात् श्रावणी पूर्णिमा उतरते बराबर
20 31	-	30	-	आषाढ	31- 1 माह पश्चात् श्रावणी पूर्णिमा
21 33	श्रावण	-	33	पौष	32-1 माह पश्चात् श्रावणी पूर्णिमा 33- 1 माह पश्चात्

						श्रावणी पूर्णिमा, उतरते बराबर
22	36	ज्येष्ठ	35	-	आषाढ	34- 1 माह पश्चात् 35- 1 माह पश्चात्
23	38	चैत्र	-	38	पौष	36- 1 माह पश्चात् 37- 1 माह पश्चात् 38- बराबर लगना
24	41	भादवा	40	-	आषाढ	39- 1 माह पश्चात् 40- 1 माह पश्चात् 41-2 माह पश्चात् भादवा पूर्णिमा को चौमासा प्रारम्भ भादवा बढने से 1 माह पश्चात् मिगसर पूर्णिमा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रत्येक युग में दो माह की वृद्धि करने से 7 युग 35 वर्ष में 7 बार पौष व 7 बार आषाढ 14 माह बढाने से-17 बार चौमासा एक माह पश्चात् श्रावणी पूर्णिमा को लगता। विक्रम संवत् 41 को दो माह पश्चात् भादवा पूर्णिमा को लगता। आगे चलते-2 तीन माह, चार माह बढता-बढ़ता जाता और वर्षावास वर्षाकाल के स्थान पर हेमंत और ग्रीष्म में भी लगने लग जाता। अत: आगम युग में भी आगमीय गणना से चौमासा मेल ही नहीं खा सकता था।

वी. नि.470 से लेकर वी. नि. 584 तक आचार्य श्री धर्म, आचार्य भद्रगुप्त, आचार्य श्रीगुप्त और आचार्य वज्र इन 4 दशपूर्वियों का युगप्रधान आचार्य के रूप में विचरण था। शास्त्र की भाषा में इन्हें आगमविहारी कहा जाता है, वे निश्चय सम्यग्दृष्टि ही होते हैं। इनके जीवन का विस्तृत वर्णन जैन धर्म का मौलिक इतिहास भाग 2 में उपलब्ध है। जिसकी सूची पूर्व में भी प्रस्तुत की जा चुकी है। चातुर्मास का मुख्य उद्देश्य ही जीव रक्षण है और यदि प्रत्येक युग में 2 महीने ही बढाए जाएं तो चातुर्मास उठने के दिनों में चौमासा बिठाने की नौबत आएगी, जो कभी भी नहीं हो सकता।

इससे पूरी तरह स्पष्ट हुआ कि आगम गणित से भी लौकिक गणित की तरह 19 वर्ष में 7 मास वृद्धि का कोई ना कोई विधान उन महापुरुषों के पास था। हम संभावित विधानों की चर्चा अगले बिंदु में करने का प्रयास कर रहे हैं, अभी तो इतना ही निर्मित हुआ

कि मुस्लिम संप्रदाय की तरह मास वृद्धि के विषय में आगम की गणित और लौकिक गणित में सामंजस्य करने के सूत्र उस समय विद्यमान थे। वो कोई अधिक भेदवाले नहीं थे-हम आज भी पौष और आषाढ की वृद्धि को बडी ही सुगमता से पालकर सामंजस्य बिठा सकते हैं।

(आ) यदि चातुर्मास में बढने वाले महीनों को पौष के रूप में तथा पौष बाद बढने वालों को आषाढ माना जाए तो उसकी तालिका-(विक्रम संवत् 35 तक)

लौकिक गणित				आगम गणित		
क्र.	वि.सं.	मास वृद्धि	चैत्र शु. से आषाढी पूर्णिमा तक	श्रावण कृ. प्रतिपदा से चैत्र अमावस्या	मासवृद्धि	मासवृद्धि -
1.	1	-	0	1	चंद्र	
2.	2	-	1	2	चंद्र	
3.	3	भादवा	2	3	अभिवर्धित	पौष
4.	4	-	3	4	चंद्र	
5.	5	-	4	5	चंद्र	
6.	6	आषाढ़	5	6	अभिवर्धित	आषाढ़
7.	7	-	6	7	चंद्र	
8.	8	-	7	8	चंद्र	
9.	9	वैशाख	8	9	अभिवर्धित	आषाढ़
10.	10	-	9	10	चंद्र	
11.	11	भादवा	10	11	अभिवर्धित	पौष
12.	12	-	11	12	चंद्र	
13.	13	-	12	13	चंद्र	
14.	14	श्रावण	13	14	अभिवर्धित	पौष
15.	15	-	14	15	चंद्र	
16.	16	-	15	16	चंद्र	
17.	17	ज्येष्ठ	16	17	अभिवर्धित	आषाढ़
18.	18	-	17	18	चंद्र	
19.	19	-	18	19	चंद्र	

20.	20	चैत्र	19	20	अभिवर्धित आषाढ़
21.	21	-	20	21	चंद्र
22.	22	भादवा	21	22	अभिवर्धित पौष
23.	23	-	22	23	चंद्र
24.	24	-	23	24	चंद्र
25.	25	आषाढ़	24	25	अभिवर्धित आषाढ़
26.	26	-	25	26	चंद्र
27.	27	-	26	27	चंद्र
28.	28	वैशाख	27	28	अभिवर्धित आषाढ़
29.	29	-	28	29	चंद्र
30.	30	भाद्रपद	29	30	अभिवर्धित पौष
31.	31	-	30	31	चंद्र
32.	32	-	31	32	चंद्र
33.	33	श्रावण	32	33	अभिवर्धित पौष
34.	34	-	33	34	चंद्र
35.	35	-	34	35	चंद्र
36.	36	ज्येष्ठ	35	36	अभिवर्धित आषाढ़

इस तालिका में लौकिक गणितानुसार माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ मास की वृद्धि को आगम गणितानुसार आषाढ मास की वृद्धि तथा श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मिगसर मास की वृद्धि को आगम गणितानुसार पौष मास की वृद्धि मानने से स्पष्ट होने वाले तथ्य-

1. प्रत्येक चातुर्मास आषाढी पूर्णिमा को ही लगा।
2. वि. सं. 3, 11, 22, 30 को भादवा तथा वि. सं. 14, 33 को श्रावण वृद्धि होने से लौकिक पंचांग से चौमासा 1 माह पूर्व पूरा हुआ।
3. संवत्सरी प्रत्येक वर्ष आषाढी पूर्णिमा से 50वें दिन व कार्तिक पूर्णिमा से 70वें दिन पहले हुई।
4. वि. सं. 14, 33 में दो श्रावण में दूसरे श्रावण शुक्ला पंचमी व वि.सं. 3, 11, 22, 30 में दो भादवा होने पर लौकिक प्रथम भादवा शुक्ला पंचमी को हुई, पर आगम मास से भादवा शुक्ला पंचमी को ही हुई।

पाक्षिक पर्व के निर्णय में सामान्य नियम–

3 पक्खी 15 दिन की करने पर 1 पक्खी 14 दिन की की जाती है।

कभी 2 पक्खी 15 दिन की करने पर 1 पक्खी 14 दिन की करनी पड़ती है।

कभी 4 पक्खी 15 दिन की करने पर 1 पक्खी 14 दिन की

तो कभी-कभी 5 पक्खी 15 दिन की करके 1 पक्खी 14 दिन की करनी पड़ती है।

सामान्यत: आदित्य मास (ईस्वी) 1 मास 30 दिन का, 1 मास 31 दिन का होता है, पर जुलाई, अगस्त दो महीने लगातार 31 दिन के होते हैं। दिसंबर व जनवरी पुन: 2 महीने 31 दिन के आते हैं और फरवरी में 2 दिन की कटौती करके 28 दिन कर दिए जाते हैं। प्रत्येक चौथे वर्ष में फरवरी 29 दिन की करनी पड़ती है।

आगम में भी ऐसे वर्णन बहुलता से मिल सकते हैं। जैसे-(1.) सामान्यत: पृथक्त्व को 2 से 9 तक गिना जाता है, कहीं 2 से 99 तक गिनना होता है। (2.) सामान्य से अनाहारक 2 समय का बताया जाता है तो भगवती शतक 7 उद्देशक 1 में 3 समय का भी अनावश्यक कह दिया गया।

ठीक इसी प्रकार सामान्यत: 2 चंद्र संवत्सर के पश्चात् 1 अभिवर्धित

और 1 चंद्र संवत्सर के पश्चात् 1 अभिवर्धित

अर्थात् 1 युग में 2 अभिवर्धित संवत्सर के लिए यह नियम है।

पर 7 युग में 1 अभिवर्धित मास कम करना होता है। इस अभिवर्धित मास के 2½ वर्ष अर्थात् 30 मास को किसी न किसी में बढाना ही होगा।

अत: ऊपर की गणना में मासवृद्धि 30 माह (2.5 वर्ष) या 36 माह (3वर्ष) के अंतराल से हुई 3 बार 6-6 माह बढने से 1 1/2 वर्ष संतुलित हुए। इसे अगले खंडों में और स्पष्ट किया जाने वाला है।

(इ) लौकिक गणना की मास वृद्धि को आषाढ़-पौष में गिनने का श्रेष्ठ तरीका-

पौष और आषाढ माह की वृद्धि में लौकिक पंचांग से होने वाली वृद्धि को किस प्रकार समायोजित किया जा सकता है-इसके तीन विकल्प हो सकते हैं-

(अ) पौष से पिछले 3 मास और आगे के 2 मासों की पौष में गणना करके आषाढ के पहले के 3 मास और आगे के 2 मास आषाढ की वृद्धि के रूप में स्वीकार करने पर-

वी. नि.470 से वी.नि.584 तक दशपूर्वीकाल में (शुद्ध वृद्धि-क्षय की पूर्ति वाले मास को छोडकर)

(आश्विन मास 3 बार बढे वि. सं. 76, 95, 114)

आसोज, कार्तिक, मिगसर, पौष, माघ, फाल्गुन मासों की पौष में और चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ, सावण, भादवा मासों की गणना आषाढ में करने पर 114 वर्ष में (वी. नि. 470 से वी. नि. 584 तक) 42 में से सिर्फ 4 मास पौष वृद्धि के रूप में और 38 मास आषाढ की वृद्धि में जाएंगे अतः इन दोनों में संतुलन नहीं है।

(आ) पौष और पौष से आगे बढने वाले 5 महीने को पौष वृद्धि के रूप में और आषाढ, आषाढ से आगे बढने वाले 5 महीने को आषाढ वृद्धि के रूप में स्वीकार करने पर 28 बार आषाढ की वृद्धि आती है और सिर्फ 14 बार पौष की वृद्धि-

अतः इसमें भी संतुलन बराबर नहीं है।

तथा 19 बार चौमासा लौकिक चौमासे से विलंब से लगता है। प्रथम प्रावृट् अधिक वर्षा का काल ग्रीष्म काल के रूप में आ जाता है। अतः यह विकल्प भी उतना उपादेय नहीं बन पाता।

(इ) आषाढ के बाद की वृद्धि को पौष की वृद्धि में गिनना और पौष के बाद की वृद्धि को आषाढ की वृद्धि में गिनना। इसमें 18 महीने पौष वृद्धि के रूप में और 24 महीने आषाढ वृद्धि के रूप में आ रहे हैं, यह तो सुनिश्चित है कि उस समय चातुर्मास 4 महीने के ही होते थे (भगवान महावीर के अनेक चातुर्मास का वर्णन आगम में मिलता है, जो पूर्व में दिया जा चुका है पृ 80-81)

अतः चौमासे में बढने वाले महीने को पौष की वृद्धि के रूप में स्वीकार करना अधिक औचित्यपूर्ण, युक्तिसंगत लगता है। क्षय मास के अधिकार से यह पूरी तरह पुष्ट हो जाता है।

और उस दशा में पूर्व के दोनों खंडों में वर्णित 50वें दिन की महत्ता ही स्पष्टतया वर्णित होती है।

अतः पूर्वधरकाल में भी

चित्त परिशोधन का पवित्र दिन–पर्युषण

श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से 50 वाँ दिन

आगम गणित से भाद्रपद शुक्ला पंचमी

चतुर्थ खंड

वीर निर्वाण 1000 से उत्तरवर्ती काल में पर्युषण

(क) अंधकार का गहरा गर्त एवं शिथिलाचार का तांडव

भगवान् महावीर का शासनकाल सूर्य की भांति ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशमान हो रहा था, कुछ समय बीतने पर अंधकार का आवरण छाने लगा। फिर भी हमारा सद्भाग्य है कि उस ज्ञान प्रकाश की कुछ किरणें आज भी हमें प्रकाशित कर रही हैं। पर उस अंधकार के आवरण में संस्कृति में परिवर्तन होने लगा जिसे नवांगी वृत्तिकार अभयदेव सूरि ने इन विकृतिजन्य परम्पराओं के विरोध में अपने स्वरों को शब्दों में सशक्त अभिव्यक्ति देते हुए कहा- **देवड्ढि खमासमणजा परं-परं भावओ वियाणेमि।**
सिढिलायारे ठविया दव्वओ परंपरा बहुहा।।

अर्थात् देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण पर्यन्त भाव परम्परा रही, यह मैं जानता हूँ। उनके पश्चात् भगवान् महावीर के धर्मसंघ में शिथिलाचारियों ने अनेक प्रकार की द्रव्य परम्पराएँ स्थापित कर दी।

ज्यों-ज्यों शिथिलाचार का प्रादुर्भाव हुआ, आगम के स्वाध्याय का अभाव होने लगा, उद्यतविहारी भगवान् की आज्ञा पालने में उद्यत नहीं रह पाए, वस्तीवास, चैत्यवास, भट्टारक आदि नवीन-नवीन परम्परा उद्भूत होने लगी। उस युग में वह सूक्ष्म गणित कहीं लुप्त हो गया कि जो चौमासे को 4 महीने का ही रखकर हेमंत में पौष और ग्रीष्म में आषाढ मास की वृद्धि करने वाला था, चातुर्मास 4 महीने के स्थान पर 5 महीने के होने लगे। संक्रमण काल की इस बेला में कल्पसूत्र की समाचारी का निर्माण हुआ, जिसमें शुद्धता के लिए एक प्रयास हुआ।

समवायांग सूत्र का स्पष्ट उद्घोष है कि-''**समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे वइक्कंते सत्तरिएहिं राइंदिएहिं सेसेहिं वासावासं पज्जोसवेइ।**'' अर्थात् श्रमण भगवान् महावीर ने वर्षा के 1 महीना 20 रात बीतने और 70 दिन शेष रहने पर पर्युषण किया। इससे श्रमण भगवान् महावीर के (तिथि क्षय अपवाद सहित) 120 दिन के चौमासे की बात स्पष्ट ध्वनित होती है। अब जब चौमासा 5 मास का अर्थात् 150 दिन का करने लगे तो समवायांग सूत्र की पालना सम्भव नहीं रह सकी, एक गलती प्रारम्भ हो गयी, कार्तिक चौमासी अशुद्ध हो गयी।

विहार की आज्ञा भगवान् ने क्यों फरमायी? दशवैकालिक सूत्र से समाधान मिलता है कि-**"गामे कुले वा नगरे व देसे, ममत्तभावं ण कहिं पि कुज्जा।"**

साधु गांव कुल नगर या देश में किसी भी पदार्थ पर ममत्व भाव नहीं रखे।

मोह-ममता के बंधनों को तोड़कर निकलने वाले साधक पुनः कहीं राग के घेरे में न बंध जाएं। अतः उनकी सुरक्षा के लिए भगवान् ने विहार की आज्ञा दी। आत्मविहार के लिए बाह्य विहार का उपदेश करते हुए जीव रक्षा की प्रधानता से वर्षावास में उस विहार को भी स्थगित कर एक स्थान पर रहने का, प्रतिसंलीनता का विधान दिया। उस वर्षा में भी प्रथम प्रावृट् की प्रधानता से क्षेत्रज्ञ तीर्थंकरों ने पड़ौसी समाज में चौमासे में मास वृद्धि होने पर भी चौमासे में मास बढ़ाने का विधान नहीं किया। सामान्यतः स्वाति नक्षत्र सायन विधि से लगभग 28 सितम्बर के पश्चात् आर्य क्षेत्र में मेघों का बरसना बंद प्रायः हो जाता है, कदाचित् क्वचित् अपवाद रूप बरसने पर मिगसर में भी रुकने का अपवाद प्रभु ने फरमा ही रखा है, उस अपवाद को छोड़कर सूर्य के स्वाति नक्षत्र में प्रवेश के पश्चात् सायन गणित से अक्टूबर मास के मध्य से निरयण गणित से 25 दिन पश्चात् नवम्बर माह के मध्य तक 4 महीने का चातुर्मास पूर्ण करके विहार का ही आदेश है, विहार की ही आज्ञा है।

अंतिम पूर्वधर देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण के स्वर्गगमन के पश्चात् पूर्वगतश्रुत विच्छिन्न हुआ, जैसाकि गौतमस्वामी जी की पृच्छा का समाधान करते हुए भगवान् महावीर स्वामी ने भगवती सूत्र शतक 20 उद्देशक 8 में फरमा ही दिया था कि- **'गोयमा! जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे ममं एगं वाससहस्सं पुव्वगए अणुसज्जिस्सइ।'** हे गौतम! इस जम्बूद्वीप के भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में मेरा पूर्वगतश्रुत एक हजार वर्ष तक (अविच्छिन्न) रहेगा।

1000 वर्ष पश्चात् पूर्व के ज्ञान का लोप, भस्मग्रह का विशेष प्रभाव, विदेशी आक्रमणों का दौर, राजनैतिक टकराव का चरम, सामाजिक पतन आदि अनेकानेक कारणों (जिसका विस्तृत विवेचन जैन धर्म का मौलिक इतिहास भाग 3, 4 में उल्लिखित है।) से स्वमति कल्पित अनेक प्रकार की परम्पराएँ उत्पन्न होने लगीं। तब कल्पसूत्र की समाचारी के प्रथम सूत्र का-**तेणं कालेणं तेण समएणं समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ।**

अर्थात् उस काल उस समय श्रमण भगवान् महावीर ने वर्षा ऋतु का बीस रात्रि सहित एक मास व्यतीत होने पर अर्थात् आषाढ़ी चातुर्मासी होने के पश्चात् 50 दिन व्यतीत होने पर पर्युषण किया, पर कई महापुरुष अर्थ करने लगे चौमासे में रहे, पर यहाँ संवत्सरी को सही रूप से आराधित करने के लिए समवायांग सूत्र के पीछे के अंश को छोड़कर प्रथम

अंश को इस रूप में रख दिया है।

'वासावासं पज्जोसवेइ' के अर्थ की गहराई, शब्द के भाव को जानने के लिए भगवान् महावीर स्वामी का वर्णन जैन धर्म का मौलिक इतिहास भाग-1, पृष्ठ 365 से देखें। प्रभु साधना के प्रथम वर्ष में 'कोल्लाग' सन्निवेश से विहार कर 'मोराक' सन्निवेश पधारे। कुलपति की प्रार्थना को स्वीकार करते हुए भगवान् कुछ समय के लिए आसपास के ग्रामों में घूम कर पुनः वर्षावास के लिए वहीं आ गए और एक पर्णकुटी में रहने लगे। संयोगवश उस वर्ष पर्याप्त रूप से वर्षा नहीं होने के कारण कृषि तो दरकिनार घास, दूब, वल्लरी, पत्ते आदि भी बराबर अंकुरित नहीं हुए। परिणामतः भूखों मरती गायें आश्रम की झोपड़ियों के तृण खाने लगीं। अन्यान्य कुटियों में रहने वाले परिव्राजक गायों को भगा कर अपनी-अपनी झोपड़ी की रक्षा करते, पर भगवान् महावीर सम्पूर्ण सावद्य कर्म के त्यागी और निस्पृह होने के कारण सहज भाव से ध्यान में खड़े रहे। उनके मन में न कुलपति पर राग था और न गायों पर द्वेष। वे पूर्ण निर्मोही थे। किसी को पीड़ा पहुँचाना उनके साधु हृदय को स्वीकार नहीं हुआ। अतः वे इन बातों की ओर ध्यान न देकर रात-दिन अपने ध्यान में ही निमग्न रहे।

जब दूसरे तापसों ने कुलपति से कुटी की रक्षा न करने के सम्बन्ध में महावीर की शिकायत की तो मधुर उपालम्भ देते हुए कुलपति ने महावीर से कहा- 'कुमार! ऐसी उदासीनता किस काम की? अपने घोंसले की रक्षा तो पक्षी भी करता है, फिर आप तो क्षत्रिय राजकुमार हैं। क्या आप अपनी झोंपड़ी भी नहीं संभाल सकते?" महावीर को कुलपति की बात नहीं जंची। उन्होंने सोचा- 'मेरे यहाँ रहने से आश्रमवासियों को कष्ट होता है, कुटी की रक्षा का प्रश्न तो एक बहाना मात्र है। महल छोड़कर पर्णकुटी में बसने का क्या मेरा यही उद्देश्य है कि आपद्ग्रस्त जीवों को जीने में बाधा दूँ? और ऐसा न कर सकूँ तो अकर्मण्य तथा अनुपयोगी सिद्ध होऊँ। मुझे अब यहाँ नहीं रहना चाहिए।' ऐसा सोचकर उन्होंने वर्षाऋतु के पन्द्रह दिन बीत जाने पर वहाँ से विहार कर दिया।

ऐसा वर्णन आवश्यक निर्युक्ति आदि में आया। पर इसमें भी स्थान नहीं मिलने से अथवा वर्षा की पराधीनता से 50 दिन वर्षावास में रहने का उल्लेख नहीं है, उनकी अप्रीति के लिए स्थान बदलने का उल्लेख आपवादिक कारण के रूप में स्वीकार करने में कोई बाधा नहीं है। आज भी चातुर्मास में रहे हुए निर्ग्रन्थ 4 दिशाओं में 2 कोस के मर्यादित क्षेत्र के 4-5 मकान खुले रखते ही हैं, पर उसे विहार नहीं माना जाता।

भगवान् तो मोराक सन्निवेश से विहार कर अस्थिग्राम में प्रथम वर्षावास को पूर्ण कर मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपदा को पुनः मोराक सन्निवेश पधारे। यह वर्णन भगवती सूत्र शतक

15 में इस प्रकार है-

तेणं कालेणं तेणं समएणं अहं गोयमा! तीसं वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता अम्मापिईहिं देवत्तगएहिं एवं जहा भावणाए जाव एगं देवदूसमादाय मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए। तए णं अहं गोयमा! पढमं वासं अद्धमासं अद्धमासेणं खममाणे अट्ठियगामं णिस्साए पढमं अंतरावासं वासावासं उवागए।

जिसका अभिप्राय यह है कि अस्थिग्राम के वर्षाकाल में 15-15 दिन के उपवास 8 बार किए और प्रथम वर्षावास किया।

यहाँ सूत्र में '**वासावासं उवागए**' का भाव यह है कि-वर्षावास के लिए आए।

साधना के दूसरे वर्ष में प्रभु ने नालन्दा में वर्षाकाल भर के लिए मास-मास का दीर्घ तप स्वीकार कर रखा था। साधना के तीसरे वर्ष में प्रभु चंपा पधारे वहाँ चातुर्मास में दो-दो मास के उत्कट तप, चतुर्थ वर्ष में पृष्ठ चंपा में 4 मास का दीर्घ तप, पंचम वर्ष में भद्दिला में चातुर्मासिक तप की आराधना, छठे वर्ष में भद्रिका में भी चातुर्मासिक तप, सातवें वर्ष में आलंभिया में चातुर्मासिक तप, आठवें वर्ष राजगृह पधारे, वहाँ चातुर्मासिक तप, नवम वर्ष में अनार्य देश, दशम वर्ष में श्रावस्ती में विविध प्रकार की तपस्या, ग्यारहवें वर्ष में वैशाली में चातुर्मासिक तप तथा केवलज्ञान के पश्चात् राजगृह में वर्षावास पश्चात् अंतिम चातुर्मास हस्तिपाल राजा की रज्जुशाला में किया। उस वर्ष निर्ग्रन्थ प्रवचन का प्रचुर प्रचार एवं विस्तार हुआ और अनेक भव्यात्माओं ने निर्ग्रन्थ धर्म की श्रमण दीक्षा अंगीकार की। इस प्रकार वर्षाकाल के 3 महीने बीते। चौथे महीने में कार्तिक कृष्णा अमावस्या के प्रातःकाल 'रज्जुग सभा' में भगवान् के मुखारविन्द से अंतिम उपदेशामृत की अनवरत वृष्टि हो रही थी। सभा में काशी, कोशल के नौ लिच्छवी, नौ मल्ल एवं अठारह गणराजा भी उपस्थित थे।

जैन धर्म का मौलिक इतिहास भाग 1 से भगवान् महावीर के चातुर्मास एवं चातुर्मास काल के तप का लेखा-जोखा देखा, जिससे दो बातें स्पष्ट हो रही हैं कि (1) इन 42 वर्षावास के समय में कई बार महीने बढ़े हैं पर चातुर्मास 4 महीने की अवधि का ही रहा तथा (2) 50 दिन बाद में वर्षावास रहे, ऐसा कहीं पर वर्णन नहीं आया है।

अतः स्पष्ट हुआ कि यहाँ '**पज्जोसवइ**' का अभिप्राय पर्युषण करना, संवत्सरी करना ही है। श्रमण परम्परा में जैन और बौद्ध दो परम्पराएँ प्रमुखतः गिनी जाती हैं। निकटवर्ती परम्परा में पर्युषण के लिए 'पर्येषण' शब्द उपलब्ध होता है। क्या होता है पर्येषण? पर्येषण इसलिए कि 'परियोदपनं' चित्त को परिपूर्ण रूप से शुद्ध करना। यह होता है

पर्येषण। गवेषणा, अन्वेषणा, पर्येषणा माने पूर्ण रूप से सच्चाई की छानबीन करना, खोज करना। पूर्ण रूप से सच्चाई की खोज कैसे हो सकती है? पुस्तकों से नहीं, प्रवचनों से नहीं, वह स्वानुभूति से होती है। सत्य का प्रत्यक्ष दर्शन हो तो सम्यक् हुआ, अन्यथा सम्यक् नहीं हुआ। स्वानुभूति हुई तो सम्यक् हुआ। मैला है तो मैला है, यह सच्चाई जाने तो सम्यक् हुआ। सारा मैल दूर करके पूर्णतया निर्मल हुआ यानी परियोदपनं हुआ, यह जान लेना सम्यक् हुआ। यही पर्येषणा हुई।

छद्मस्थ अवस्था में भगवान् कषाय कुशील नियण्ठे में होते हैं, 6-7 वें गुणस्थानवर्ती होते हैं। उनके तपस्या की चर्चा अभी ऊपर कर दी गई। चातुर्मास काल में मास-मास, दो-दो मास, 4-4 मास के तप करते तो संवत्सरी का तप तो आता ही था। केशलुंचन की क्रिया उनके करने की आवश्यकता नहीं रहती, क्योंकि केश नहीं बढ़ना भी उनके चौंतीस अतिशय में एक अतिशय था।

भगवान् कषाय कुशील नियंठे में होने से अप्रतिसेवी होते, उन्हें दोष नहीं लगता फिर भी सांवत्सरिक प्रतिक्रमण करना उनकी पर्युपासना है।

अनुयोगद्वार सूत्र में भाव आवश्यक में बताया- **जे णं इमे समणे वा, समणी वा, सावओ वा, साविया वा, तच्चित्ते, तम्मणे, तल्लेसे, तदज्झवसिए, तत्तिव्वज्झवसाणे, तदट्ठोवउत्ते, तदप्पियकरणे, तब्भावणाभाविए, अण्णत्थ कत्थइ मणं अकरेमाणे उभओ कालं आवस्सयं करेइ। से त्तं लोगुत्तरियं भावावस्सयं।**

अर्थात् दत्तचित्त और मन की एकाग्रता के साथ शुभ लेश्या एवं अध्यवसाय से सम्पन्न, यथाविधि क्रिया को करने के लिए तत्पर अध्यवसायों से सम्पन्न होकर, तीव्र आत्मोत्साह पूर्वक उसके अर्थ में उपयुक्त होकर शरीरादि को नियोजित कर, उसकी भावना से भावित हो जो श्रमण, श्रमणी, श्रावक, श्राविका अन्यत्र मन को संयोजित किए बिना उभयकाल प्रतिक्रमण करते हैं, वह लोकोत्तरिक भावावश्यक है।

चित्त की विशेष निर्मलता पर्युषण और निर्मलता का साधन आवश्यक (प्रतिक्रमण) अतः भगवान् ने 50वें दिन पर्युषण किया, यही अर्थ संगत है।

भगवान् को केवली पर्याय में 10 प्रायश्चित्तों में केवल विवेक प्रायश्चित्त होता है। स्नातक के लिए केवल विवेक प्रायश्चित्त का कथन है, प्रतिक्रमण का नहीं। कल्पसूत्र का दूसरा सूत्र भी 50 दिन की महत्ता को दिग्दर्शित कर रहा है-

से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ? जतो णं पाएणं अगारीण

अगाराइं कडियाइं उक्कंपियाइं छन्नाइं लित्ताइं घट्ठाइं मट्ठाइं संपधूमियाइं खाओदगाइं खातनिद्धमणाइं अप्पणो अट्ठाए कयाइं परिभोत्ताइं परिणामियाइं भवंति से एतेणऽट्ठेणं एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते वासावासं पज्जोसवेति।

प्रश्न– हे भगवन्! किस कारण से इस प्रकार कहा जाता है कि भगवान् महावीर ने वर्षाऋतु का बीस रात्रि सहित एक मास व्यतीत होने पर पर्युषण किया?

उत्तर– कारण यह है कि प्रायः उस समय गृहस्थों के गृह चारों ओर से चटाई आदि से आच्छादित होते हैं। चूने आदि से पोते हुए होते हैं, घास आदि से ढंके हुए होते हैं, चारदीवारी से सुरक्षित होते हैं, घिसघिसाकर विषम भूमि को सम किए हुए व मुलायम बनाए हुए होते हैं, सुवासित धूपों से सुगंधित किए हुए होते हैं। पानी निकलने के लिए परनाले आदि बनाए हुए होते हैं, घरों के बाहर नालियां आदि खुदवाई हुई होती हैं। वे घर, गृहस्थ स्वयं के लिए अच्छा करता है। वे घर, गृहस्थ के उपयोग में लिए हुए होते हैं। स्वयं के रहने के लिए वह उन्हें साफ कर जीव-जंतु रहित बनाता है एतदर्थ यह कहा जाता है कि श्रमण भगवान् महावीर ने वर्षाऋतु के बीस रात्रि सहित एक मास व्यतीत होने पर पर्युषण किया।

तीव्र वर्षा के पश्चात् घरों को सुव्यवस्थित किया जाता है। जो प्रथम प्रावृट् अर्थात् 'सवीसइराए मासे' की महिमा को ही द्योतित कर रहा है। जब वर्षा का जोर 50 दिन पश्चात् कम होता है तब लोग अपने अस्त व्यस्त हुए घर, प्रांगण को व्यवस्थित करते हैं। ये सारे कार्य प्रथम प्रावृट् की पूर्णता के द्योतक हैं। 50 दिन का महत्त्व है। अतः भगवान् महावीर स्वामी ने 50वें दिन पर्युपासना की, पर्युषण-संवत्सरी से आत्मसाधना की, ऐसा द्योतित होता है। कल्पसूत्र में समाचारी के तीसरे सूत्र में गणधरों की चर्चा दर्शायी- **जहा णं समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे वीइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ तहा णं गणहरा वि वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसविंति।** जैसे श्रमण भगवान् महावीर ने वर्षा ऋतु के बीस रात्रि सहित एक मास व्यतीत होने पर वर्षावास को पर्युषित किया वैसे ही गणधरों ने भी वर्षा ऋतु के बीस रात्रि सहित एक मास व्यतीत होने पर वर्षावास को पर्युषित किया।

गणधरों के शिष्यों की रूपरेखा कल्पसूत्र 'सामाचारी' के अगले सूत्र में देखे-

जहा णं गणहरा वासाणं जाव पज्जोसवेंति तहा णं गणहरसीसा वि वासाणं जाव पज्जोसविंति।

जैसे गणधरों ने वर्षाऋतु के बीस रात्रि सहित एक मास व्यतीत होने पर वर्षावास को पर्युषित किया, वैसे ही गणधरों के शिष्यों ने भी वर्षा ऋतु के बीस रात्रि सहित एक मास

व्यतीत होने पर वर्षावास को पर्युषित किया।

भगवान् महावीर स्वामी की परम्परा को गणधरों ने, गणधरों के शिष्यों ने अक्षुण्ण रखा। आगे की परिपाटी में स्थविर भगवंतों ने भी इसका ही निर्वहन किया, कल्पसूत्र 'सामाचारी' के अगले सूत्र में- **जहा णं गणहरसीसा वासाणं जाव पज्जोसर्विति तहा णं थेरा वि वासाणं जाव पज्जोसर्विति।** जेसे गणधरों के शिष्यों ने वर्षाऋतु के बीस रात्रि सहित एक मास व्यतीत होने पर वर्षावास को पर्युषित किया वैसे ही स्थविरों ने भी वर्षाऋतु के बीस रात्रि सहित एक मास व्यतीत होने पर वर्षावास को पर्युषित किया।

स्थविरों की परम्परा को सुरक्षित रखने का कार्य आगे श्रमण निर्ग्रन्थों ने किया- कल्पसूत्र 'सामाचारी' के अगले सूत्र में- **जहा णं थेरा वासाणं जाव पज्जोसर्विति तहा णं जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति एए वि णं वासाणं जाव पज्जासर्विति।** जैसे स्थविरों ने वर्षाऋतु के 20 रात्रि सहित एक मास व्यतीत होने पर पर्युषित किया वैसे ही आजकल के श्रमण निर्ग्रन्थ करते हैं और आगे का सूत्र- **जहा णं जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसर्विति तहा णं अम्हं पि आयरियउवज्झाया वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेंति।** जिस प्रकार श्रमण निर्ग्रन्थों ने किया वैसे ही हमारे भी आचार्य, उपाध्याय वर्षाऋतु के बीस रात्रि सहित एक मास व्यतीत होने पर पर्युषण करते हैं, पर्युपासना करते हैं।

यहाँ कल्पसूत्र में '**वासावासं पज्जोसवेंति**' सूत्र वर्षावास को पर्युषित किया पर्युषण किया, संवत्सरी की, पर्युपासना की ऐसा अभिप्रेरित हो रहा है। ऊपर भगवान् महावीर के चातुर्मास के इतिहास को उठाकर देखा चातुर्मास हर स्थान पर चार महीने के ही किए, किन्तु 1 महीने 20 दिन पश्चात् रहने का वर्णन नहीं है। वर्षावास रुकने का वर्णन आगम में जहाँ आया वहाँ '**वासावासं उवल्लिएज्जा**' सूत्र भी मिलता है। इस सूत्र का अर्थ 'वर्षाकाल व्यतीत करना चाहिए, स्पष्ट ही है। निशीथ सूत्र में भी 'वासावासं पज्जोसवियंसि' वर्षावास में पर्युषण करने के अर्थ में ही आया है।

कल्पसूत्र की सामाचारी अध्ययन का अभिप्राय यही है कि भगवान् महावीर स्वामी ने 20 रात्रि सहित एक मास व्यतीत होने पर वर्षावास को पर्युषित किया, 50वें दिन संवत्सरी की और आगे गणधरों ने, गणधर शिष्यों ने, स्थविरों ने, श्रमण निर्ग्रन्थों ने और वर्तमान में आचार्य, उपाध्याय भी इसी परम्परा को अक्षुण्ण रखते हुए चातुर्मास के 50वें दिन संवत्सरी की आराधना-साधना करते हैं। विशेष बल देने के लिए इस शैली में 7-8 सूत्रों का कथन करना पड़ा।

शिथिलाचार, वस्तीवास, एक स्थान पर निवास, आगम गणित का लोप होने से तथा दूसरों के प्रभाव से 5 महीने के चातुर्मास होने लगें, तब संवत्सरी के विषय में समस्या का प्रादुर्भाव हुआ पर निशीथ 10/43,44 में- **जे भिक्खू अपज्जोसवणाए पज्जोसवेइ पज्जोसवेंतं वा साइज्जइ।।43।। जे भिक्खू पज्जोसवणाए ण पज्जोसवेइ ण पज्जोसवेंत वा साइज्जइ।।44।।**

जो भिक्षु अपर्युषण में पर्युषण करता है तथा पर्युषण में पर्युषण नहीं करता है (उसके लिए प्रायश्चित्त का विधान दिया)

चातुर्मास चार महीने का नहीं कर पा रहे हैं पर पर्युषण में पर्युषण करने के जिनवचनों की, आर्षवाणी की परिपालना में समुद्यत बनने के लिए दो सावण हो तो दूसरे सावण में, दो भाद्रपद हो तो पहले भाद्रपद में संवत्सरी की आराधना-साधना कर आत्मोत्कर्ष में आगे बढ़ ही सकते हैं।

(ख) आराधन काल में भिन्नता- सही के लिए निकला, गलती पर चल पड़ा

नंदीसूत्र- **इच्चेइयं दुवालसंगं गणिपिडगं ण कयाइ णासी, ण कयाइ ण भवइ, ण कयाइ ण भविस्सइ, भविं च भवइ य भविस्सइ य, धुवे, णियए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए, णिच्चे।** अर्थात् सिद्धान्त ध्रुव, नित्य, शाश्वत, अक्षय, नियत होते हैं। सिद्धान्त त्रैकालिक सत्य होते हैं, परिवर्तित नहीं होते, पर कभी शास्त्रार्थ में, कभी वाद-विवादों में, कभी परम्पराओं में सिद्धान्त शुद्ध रूप में नहीं टिक पाते हैं। मिथ्याभिनिवेश वस्तुतः महान् अनर्थों का मूल है। जैन धर्म का मौलिक इतिहास भाग 2 (पृष्ठ 562-563-564) में रोहगुप्त के प्रसंग को उठाकर देखें- वीर नि.सं. 544 में रोहगुप्त से त्रैराशिक दृष्टि की उत्पत्ति बताई गई है।

अंतरंजिका नगरी के बाहर भूतगुहा नामक एक चैत्य था। एक समय वहाँ श्रीगुप्त नामक आचार्य अपने शिष्य समूह के साथ पधारे। उस समय अंतरंजिका में राजा बलश्री का राज्य था। आचार्य श्रीगुप्त के अनेक शिष्यों में से रोहगुप्त नाम का एक बड़ा बुद्धिमान शिष्य था। वह ग्रामान्तर से आचार्य श्री की सेवा में अंतरंजिका पहुँचा। मार्ग में उसने एक परिव्राजक को देखा जो अपने पेट पर लोह का पट्टा बांधे और हाथ में जामुन की टहनी लिए हुए था। लोगों से पूछने पर ज्ञात हुआ कि ज्ञानाधिक्य के कारण पेट कहीं कट न जाय, इसलिए उस संन्यासी ने अपने पेट पर लोह का पट्टा बांध रखा है। पेट पर लोहे का पट्टा रखने के कारण उसकी पोट्टसाल के नाम से प्रसिद्धि हो गई। परिव्राजक अपने हाथ में जामुन की डाली को धारण किए मानो इस बात की ओर संकेत कर रहा था कि समस्त जंबूद्वीप में उसके साथ वाद करने वाला कोई प्रतिवादी नहीं है। शास्त्रार्थ करने के लिए

विद्वानों का आह्वान करते हुए वह ढिंढोरा पिटवा रहा था।

रोहगुप्त ने परिव्राजक द्वारा की गई घोषणा को सुना और परिव्राजक के अतिशय गर्व को देखकर ढिंढोरा रोका। उसने कहा- "मैं परिव्राजक के साथ शास्त्रार्थ करूंगा।" परिव्राजक ने सोचा कि यह श्रमण बड़े कुशल होते हैं अतः इन्हीं के सिद्धान्त को मैं अपनी ओर से पूर्वपक्ष के रूप में प्रस्तुत करूँ। इस प्रकार सोच कर वह बोला-"संसार में दो राशियाँ हैं- जीव राशि और अजीव राशि।"

रोहगुप्त ने प्रतिपक्ष में कहा- "नहीं राशियाँ तीन होती हैं- जीव, अजीव और नोजीव।" जीव अर्थात् चेतना वाले प्राणी, अजीव घटपटादि जड़ पदार्थ और नो जीव- छिपकली की कटी हुई पूंछ।

संसार में अन्य भी तीन प्रकार के पदार्थ होते हैं। दंड के भी तीन भाग होते हैं- आदि, मध्य और अन्त। लोक भी ऊर्ध्वलोक, अधोलोक और मध्यलोक- इस प्रकार तीन होते हैं। इसलिए यह कहना ठीक नहीं है कि राशियाँ दो ही होती हैं।

इस प्रकार थोड़ी ही देर के शास्त्रार्थ में रोहगुप्त के प्रबल तर्कों से परिव्राजक पराजित हुआ। रोहगुप्त ने गुरु की सेवा में अपने विजय की सारी घटना सुनायी। तीन राशियों की प्ररूपणा की, बात सुनकर आचार्य श्रीगुप्त ने कहा- "वत्स! उत्सूत्र प्ररूपणा कर विजय प्राप्त करना उचित नहीं। सभा से उठते ही तुम्हें यह स्पष्टीकरण कर देना चाहिए था कि हमारे सिद्धान्त में तीन राशियाँ नहीं हैं। मैंने तो केवल वादी की बुद्धि को पराभूत करने के लिए ही तीन राशियों की प्ररूपणा की है। वस्तुतः राशियाँ दो ही हैं। जीव राशि और अजीव राशि। अब भी समय है, तुम तत्काल राजसभा में जाकर सत्यव्रत की रक्षा के लिए स्पष्टीकरण के साथ वास्तविक स्थिति रख दो। गुरु की आज्ञा को अनसुनी कर रोहगुप्त राजसभा में जाने के लिए उद्यत नहीं हुआ और अपनी बात को सही प्रमाणित करने का प्रयास करते हुए कहा- "मैंने तीन राशियों की बात कह दी तो इसमें मुझे कौनसा दोष लग गया ?राशियाँ तीन हैं ही।

अपने विचारों का आग्रह इतना अधिक हो गया कि रोहगुप्त को आखिर श्रमणसंघ से बहिष्कृत कर दिया गया।

कहीं कुछ ऐसा ही संवत्सरी की तिथि के साथ तो नहीं हुआ ?

(ग) बढ़ गया चातुर्मास- अपर्युषण में पर्युषण की आश

'लोगे लिंग पओयणं' उत्तराध्ययन 23/32 लोक में लिंग का प्रयोजन है, अभी भौतिक जगत में Brand का विशेष महत्त्व है। इसको यदि अध्यात्म क्षेत्र में देखें तो वी.नि. 609 (विक्रम संवत् 139, ईस्वी सन् 82) में अलग हुए बोटिक (दिगम्बर) मत वालों ने

श्वेत वस्त्र, मुखवस्त्रिका, रजोहरण को छोड़कर पिच्छी के द्वारा अपनी अलग साख बनायी। वी.नि. 882 के पश्चात् उदित हुई चैत्यवासी परम्परा ने मुखवस्त्रिका के डोरे को तथा चद्दर बांधने की शैली को अलग रूप में अपनाकर अपनी अलग साख बनायी। वी.नि. 1817 में बनी तेरापंथी परम्परा वालों ने भी मुखवस्त्रिका के मोड़ को बदलकर अपनी अलग साख बनायी क्या ऐसे ही संवत्सरी के साथ घटित हुआ? यह भी एक विशेष महत्त्व का बिंदु बन जाता है।

1. वी.नि. 609 अलग हुए बोटिक (दिगम्बर) मत ने पंचमी से पर्व का प्रारम्भ किया, 8 की जगह 10 दिवसीय बनाया और अनंत चतुर्दशी को महिमामंडित किया। प्रथम के स्थान पर द्वितीय भाद्रपद आदि को माना।
2. वी.नि. 882 के पश्चात् अलग हुए चैत्यवासियों ने अपवाद में स्वीकार की चतुर्थी को महत्त्व देकर अपनी विशेष साख बनायी।
3. खरतरगच्छ के पश्चात् उदित होने वाले तपागच्छ ने चौथ को कायम रखते हुए भी मास वृद्धि में दो सावन होने पर भादवा और दो भादवा होने पर दूसरे भादवा में संवत्सरी करने का अलग रूख अपनाया।
4. पाँचों क्रियोद्धारकों के अधिकतम अनुयायियों के द्वारा दो सावन होने पर द्वितीय श्रावण व दो भाद्रपद होने पर प्रथम भाद्रपद में संवत्सरी की आराधना किए जाने पर मेवाड़ व मालवा वालों ने तपागच्छ की भांति दो सावन होने पर भादवा व दो भादवा होने पर दूसरे भादवा में संवत्सरी का आराधन किया। यदि हम इन्हें तालिका के रूप में प्रस्तुत करें तो तथ्य सुस्पष्ट हो जाते हैं-

(शुद्ध परम्परा में चार मास का वर्षावास-50वें दिन ही संवत्सरी होती है)

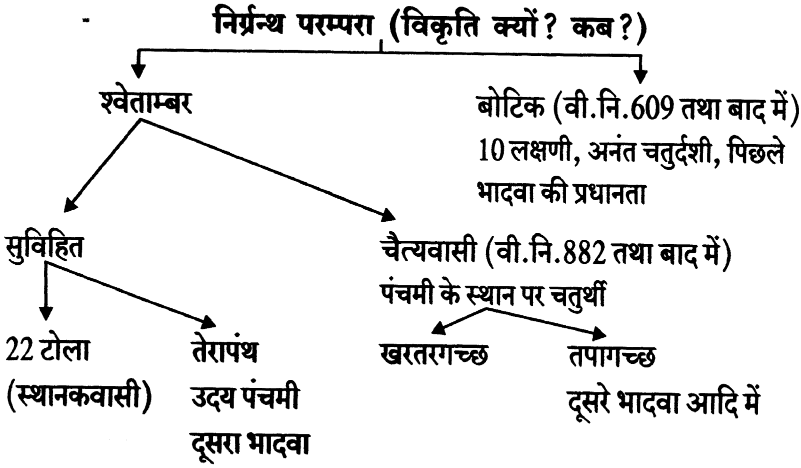

5 क्रियोद्धारक

1. श्री जीवराज जी

- श्री अमरसिंहजी
  - श्री जेठमलजी
  - श्री पुष्करमुनिजी
  - श्री देवेन्द्रमुनिजी
- श्री शीतलदासजी
  - मेवाड़
- श्री दीपचन्दजी
  - श्री नानकराम जी
  - श्री पन्नालाल जी

2. श्री लवजी ऋषि

- श्री कहानऋषिजी
  - खंभात सम्प्रदाय
    - श्री कांतिऋषिजी
  - श्री अमोलकऋषिजी
    - श्री आनंदऋषिजी
- श्री हरिदासजी
  - श्री सोहनलालजी
  - श्री मयारामजी
  - श्री आत्मारामजी

3. श्री धर्मसिंहजी

- दरियापुरी 8 कोटी सम्प्रदाय श्री विरेन्द्रजी

4. श्री धर्मदासजी

- 22 प्रमुख
  - 21 शेष गुजरात मारवाड़ आदि अनेक परम्पराएँ
  - श्री रामचन्द्रजी मालवा और खींचन सम्प्रदाय

5. श्री हरजी

- दिवाकर परम्परा
- समता संघ

श्री शीतलदासजी की मेवाड़ और श्री रामचन्द्रजी की मालवा आदि के अनुयायियों की 4-5 परम्परा दो सावन होने पर भादवा और दो भादवा होने पर दूसरे भादवा में संवत्सरी पर्व का आराधन करते हैं। शेष सभी 50वें दिन के आगमिक विवेचन को महत्त्व देते हैं। संभवतया तपागच्छ के विशेष प्रभाव से इन परम्पराओं को उस प्रकार पर्व आराधन का प्रसंग उपस्थित हुआ, ऐसा श्रुत परम्परा से सुना जाता है।

'णिग्गंथं पावयणं पुरओ काउं विहरइ' की जो विशुद्ध परम्परा लोंकाशाह आदि महापुरुषों ने दी है जिसके आलोक में पुरानी परम्परा का अवलोकन कर परिमार्जन किया जा सके, इसी परिप्रेक्ष्य में परम्पराओं की विविध मान्यता यहाँ प्रस्तुत करने का

प्रयास हुआ। लोंकागच्छ 8 पाट के बाद में नहीं चल पाया; कालान्तर में श्री जीवराज जी म.सा. आदि महापुरुषों ने पुनः शुद्ध परम्परा को प्रतिष्ठापित किया। विक्रम संवत् 1531 (वी.नि.2001) में भस्मग्रह का प्रभाव समाप्त होने के पश्चात् क्रांतिवीर लोकाशाह जी द्वारा शुद्ध धर्म प्ररूपणा करना पूर्व महापुरुषों द्वारा मान्य है। 75 वर्ष से 100 वर्ष तक उनके 8 पाट चले हो तो 1625-1630 के आसपास तक शुद्ध परमपरा रह सकती है। श्री जीवराज जी म.सा. के लिए पीपाड़ में लोकागच्छ के यति तेजराजजी के पास में 1653 में दीक्षा का उल्लेख मिलता है और 1666 में पृथक् धर्मप्रभावना का उल्लेख ग्रंथों में उपलब्ध होता है। लवजी ऋषि की यति दीक्षा 1692 और क्रियोद्धार 1694 का उल्लेख उपलब्ध होता है। बस इसी के पश्चात् धर्मदासजी, धर्मसिंहजी, हरजी ऋषि का क्रियोद्धार माना जाता है। उस समय विद्यमान 80-90 साल की आयुष्य वाले किन्हीं भी वृद्धों से उन महापुरुषों को लोकागच्छ की परम्पराओं की जानकारी होना संभावित है और संभवतया इसीलिए उन्होंने 50वें दिन संवत्सरी करना आगम सम्मत मानकर के आराधना की, करवायी।

अतः **'महाजनो येन गतः स पंथा'**, **'पणया वीरा महावीहिं'** के अनुरूप दो श्रावण होने पर दूसरे श्रावण और दो भादवा होने पर पहले भादवा में सांवत्सरिक पर्व मनाना उचित, युक्तिसंगत एवं महापुरुषों द्वारा आसेवित है।

(घ) पर्युषण से जुड़े कतिपय शब्द-वाक्यांशों की समीक्षा

कालचक्र के निरन्तर परिवर्तन के साथ पंचम आरे का प्रभाव बढ़ता जा रहा था। जिनशासन की शुद्ध परम्पराएँ लुप्त होती जा रही थीं। गिने-चुने संवेग-निर्वेद सम्पन्न आत्मसाधक आगम के अनुरूप अपनी चर्या को अवश्य चला रहे थे, पर बहुसंख्यक तो भेषधारी के रूप में ही जैन श्रमण कहला रहे थे, इसका विस्तृत विवेचन 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास भाग 3, 4 में देखा जा सकता हे। इसका कुछ अंश यहाँ दिया हा रहा है- "देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण के स्वर्गवास के अनंतर चैत्यवासियों की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई सर्वस्व संहारकारिणी बाढ से अपनी-अपनी परम्परा की, अपने-अपने गणगच्छ आम्नाय अथवा सम्प्रदाय की रक्षा हेतु जैन धर्म के विशुद्ध मूल स्वरूप एवं आगमानुसारी विशुद्ध श्रमणाचार तथा श्रावकाचार में विश्वास रखने वाली श्रमण-परम्परा की विभिन्न इकाइयों ने भी चैत्यवासियों द्वारा प्रचलित की गई और कालान्तर में अत्यधिक लोकप्रियता प्राप्त की हुई अनेक नूतन मान्यताओं को अपना लिया। उन मान्यताओं का आगमों में तो कहीं उल्लेख तक नहीं था। अतः उन नूतन मान्यताओं को प्रामाणिकता का परिधान पहनाने के लिए निर्गूढ आंतरिक उद्देश्य से अभिनव भाष्यों, वृत्तियों, टीकाओं आदि की रचना का कार्य अंतिम पूर्वधर देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण के स्वर्गारोहण के लगभग अर्द्धशती

पश्चात्‌अनेक विद्वान्‌ आचार्यों एवं श्रमणों ने अपने हाथ में लिया। यह उल्लेखनीय एवं विचारणीय है कि आज जितने भी भाष्य उपलब्ध होते हैं, वे सब के सब आर्य देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण के उत्तरवर्ती काल की कृतियाँ है। इसी प्रकार चूर्णियाँ, अवचूर्णियाँ एवं विशेष चूर्णियाँ भी देवर्द्धिगणि से उत्तरवर्ती काल की रचनाएँ हैं।

यह तो एक निर्विवाद तथ्य है कि आगमों के पारिभाषिक और गंभीर अर्थ को समझने में व्याख्या साहित्य, निर्युक्ति, चूर्णि, अवचूर्णि, विशेष चूर्णि, भाष्य, टीका, विवरण, वृत्ति, विवृत्तिदीपिका, पंजिका, टब्बा, क्वनिका, भाषा, टीका आदि ग्रन्थ बड़े ही उपयोगी हैं, किन्तु इनमें से अनेक ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर अनेक ऐसी अभिनव मान्यताओं को समाविष्ट कर लिया गया है, जिनका मूल आगमों में कोई स्थान नहीं, कोई उल्लेख तक नहीं।

उन नवीन मान्यताओं को आगमों के व्याख्या साहित्य में स्थान देने का दुष्परिणाम यह हुआ कि शिथिलाचार को प्रोत्साहन मिलने के साथ-साथ अध्यात्ममूलक जैन धर्म के मूल विशुद्ध स्वरूप में अनेक प्रकार की विकृतियाँ उत्पन्न हुईं और कालांतर में वे विकृतियाँ धर्म के अभिन्न अंग के रूप में जैन संघ में रूढ हो गईं, घर कर गई। इसी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति से खिन्न हो नवांगी वृत्तिकार अभयदेवसूरि को आगम अष्टोत्तरी नामक अपनी रचना में कहना पड़ा-

देवड्ढि खमासमण जा, परम्परं भावओ वियाणेमि।
सिढिलायरे ठविया, दव्वेण परम्परा बहुहा।।

अर्थात्‌ देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण पर्यन्त भाव परम्परा रही, यह मैं जानता हूँ। उनके पश्चात्‌ प्रभु महावीर के धर्मसंघ में शिथिलाचारियों ने अनेक प्रकार की द्रव्य परम्पराएँ स्थापित कर दीं। निर्युक्ति, चूर्णि, भाष्य आदि आगम-व्याख्या-ग्रन्थों के माध्यम से शिथिलाचार के साथ पनपी हुई अनेक प्रकार की विकृतियाँ कालांतर में लोकप्रिय एवं बहुजन सम्मत भी बन गई, पर विशुद्ध श्रमणाचार का पालन करने वाले एवं आगम में प्रतिपादित धर्म के विशुद्ध स्वरूप पर श्रद्धा एवं निष्ठा रखने वाले श्रमणोत्तमो नें समय-समय पर उन विकृतियों का विरोध प्रकट किया। व्रस्तीवास बढ़ता जा रहा था, नयी-नयी समस्या मुंह बाएँ खड़ी थी, उस समय कुछ शब्द उठे, कुछ सूत्रों के अर्थ पकड़ने का सामर्थ्य क्षीण होने से अनंत गम, अनंत पर्यव वाली जिनवाणी को हृदयगंम कर उसके अनुरूप आचरण में परिवर्तन सा होने लगा, जैसे-

1. अभिवड्ढियंमि वीसा, इयरेसु सवीसइमासो
2. गृहीज्ञात

3. गृहीअज्ञात

4. क्षये पूर्वा तिथिः कार्या, वृद्धौ कार्या तथोत्तरा।

आदि शब्द प्रयोग में आने लगे।

1. अभिवड्ढियंमि वीसा, इयरेसु सवीसइमासो- श्री भद्रबाहुस्वामी प्रणीत श्री बृहत्कल्पसूत्र निर्युक्ति का पाठ, जिसका भावार्थ यह है कि अभिवर्धित वर्ष में जैन टिप्पने के अनुसार आषाढी पूर्णिमा से 20 रात्रि बीतने पर श्रावण शुदि 5 को श्री पर्युषण पर्व करना चाहिए और चन्द्र संवत्सर में 20 रात्रि सहित 1 मास यानी 50 दिन बीतने पर भाद्रपद शुदी पंचमी को पर्युषण पर्व करें।

आगम आज्ञा स्पष्ट है चाहे समवायांग का कथन लें या कल्पसूत्र का; आचारांग का कथन व अथवा ठाणांग 5/2 का, प्रथम प्रावृट '**सवींसइराए मासे**' श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से 50वें दिन भाद्रपद शुक्ला पंचमी को ही पर्युषण करना, संवत्सरी मनाना, फिर ये कथन क्यों किया गया? इसी से कल्पना करनी पड़ी कि गृहस्थों को सूचना करना, गृहिज्ञात कार्य करना। पूर्व में विवेचन कर आए हैं छद्मस्थ अवस्था में भगवान् चौमासे की आज्ञा लेकर वहाँ ठहरते हैं निरन्तर तपश्चरण में चातुर्मास को पूर्ण करते हैं, उनके प्रत्येक पारणक पर देवों द्वारा दिव्यवृष्टि होती है, जिससे जनसामान्य को ज्ञात हो जाता है कि भगवान् यहां आए। । वे इस गृहिज्ञात में क्या ज्ञात कराएंगे? वे तो छद्मस्थ अवस्था में प्रायः उपदेश करते नहीं, वार्ता करते नहीं। केवली पर्याय में समय-समय पर उनकी देशना चलती रहती है। अतः केवलज्ञान होने के पश्चात् विराट् श्रमण-श्रमणी परिवार, देवों का आगमन आदि से गृहिज्ञात/ गृहिअज्ञात की चर्चा करना बेमानी सा लगता है।

उसके पश्चात् केवलिकाल, श्रुतकेवलिकाल, दशपूर्वधर और सामान्य पूर्वधर के काल को भी हम तृतीय खंड में देख आए हैं, उन सभी के समय में चातुर्मास 4 महीने का ही था, संवत्सरी 50 वें दिन ही मनायी गई थी। बीसवें दिन का कोई प्रसंग ही नहीं।

कल्पसूत्र की स्थविरावली उसका स्पष्ट कथन कर ही रही है, जिसे हम इसी खंड के पूर्व भाग में देख चुके हैं।

अभिवर्धित वर्ष में कब पर्युषण की साधना करें? इसके समाधान में श्री जिनदास महत्तराचार्य महाराज ने श्री निशीथचूर्णि में ऐसा लिखा है कि- **अभिवड्ढिय वरिसे 20 वीसतिराते गते गिहिणातं करेंति तिसु चंदवरिसेसु सवीसतिराते मासे गते गिहिणातं करेंति जत्थ अधिमासगो पडति वरिसे तं अभिवड्ढियवरिसं भण्णति जत्थ ण पडति तं चंदवरिसं सोय अधिमासः . जुगस्सगंते मज्झे वा भवति जइ अंते नियमा दो आसाढा भवन्ति अह मज्झे दो पोसा। सीसो पुच्छति कम्हा**

अभिवड्ढिय वरिसे वीसतिरातं चंदवरिसे सवीसतिमासो उच्यते जम्हा अभिवड्ढिय वरिसे गिम्हे चेव सो मासो अतिक्कंतो तम्हा वीसदिना अणभिग्गहियं तं करेंति इयरेसु तीसु चंदवरिसेसु सवीसति मास इत्यर्थः।।

अर्थात् अभिवर्धित वर्ष में आषाढ पूर्णिमा से 20 रात्रि व्यतीत होने पर श्रावण सुदी पंचमी को गृहिज्ञात पर्युषण करे और तीन चन्द्र संवत्सरों में 20 रात्रि सहित 1 मास व्यतीत होने पर भाद्रपद सुदी पंचमी को गृहिज्ञात पर्युषण पर्व करे। जिस वर्ष में अधिक मास आ पड़ा हो उसको अभिवर्धित वर्ष कहते हैं और जिस वर्ष में अधिक मास न आ पड़ा हो उसको चन्द्रवर्ष कहते हैं। वह अधिक मास युग के अंत में और युग के मध्य भाग में होता है यदि युग के अंत में हो तो निश्चित दो आषाढ़ मास होते हैं और युग के मध्य भाग में हो तो निश्चित दो पौष मास होते हैं। शिष्य पूछता है कि किस कारण अभिवर्धित वर्ष में 20वें दिन की श्रावण सुदी पंचमी की रात्रि को गृहिज्ञात पर्युषण है और चन्द्र संवत्सर में 20 रात्रि सहित 1 मास यानी 50वें दिन की भाद्रपद सुदी पंचमी की रात्रि को गृहिज्ञात पर्युषण है? उत्तर- अभिवर्धित वर्ष में ग्रीष्म ऋतु में वह एक अधिक मास अतिक्रांत हो जाता है अतः 20 दिन पर्यन्त गृहिअज्ञात पर्युषण हैं और बीसवें दिन श्रावण सुदी पंचमी को गृहिज्ञात पर्युषण करें और तीन चन्द्रवर्षों में बीस रात्रि सहित 1 मास पर्यन्त गृहिअज्ञात पर्युषण है और पचासवें दिन भाद्रपद सुदी पंचमी को गृहिज्ञात पर्युषण करें। ('हर्षहृदयदर्पणस्य' पृ. 28)

पर यह बात युक्तिसंगत नहीं है। यदि पौष का महीना बढ़ता है तो उस अभिवर्धित वर्ष में चौमासा सायन के हिसाब से 7 जून से 12 जून के आसपास लग जाएगा तब 'अभिवड्ढियंमि बीसा' अभिवर्धित वर्ष में (सप्तमी विभक्ति 'अभिवड्ढियंमि' अतः अभिवर्धित वर्ष में) 20 अहोरात्रि का कथन पूरी तरह निराधार होगा। यदि आषाढ का महीना बढ़ता है तो अभिवर्धित वर्ष आषाढ की पूर्णिमा को पूरा हो चुका। अभिवर्धित वर्ष के अगले वर्ष में ही चातुर्मास जुलाई के प्रथम सप्ताह में लगता है और अभिवर्धित वर्ष का अगला वर्ष चन्द्र संवत्सर ही होगा। अतः आगम सम्मत कालगणना में यह कथन महत्त्वहीन है। अभिवर्धित वर्ष में गृहिज्ञात 20वें दिन होना संभव ही नहीं- युग संवत्सर मानें तो उसमें प्रथम-द्वितीय चन्द्र वर्ष, तृतीय अभिवर्धित पौष माने, चतुर्थ चन्द्र तथा पंचम अभिवर्धित वर्ष युगान्त होने से आषाढ इसमें गृहिज्ञात होगा चौथे या छठे चन्द्रवर्ष में ही। क्योंकि तृतीय मे पौष बढा तो अगले वर्ष के चातुर्मास में 20वें दिन गृहिज्ञात, पर तब चतुर्थ चन्द्र वर्ष प्रारम्भ हो जाएगा। आषाढ बढ़ता है तो उस समय युगान्त होने से चातुर्मास तो छठे चन्द्र संवत्सर में ही लगेगा। अतः यह सूत्र उपादेय सिद्ध नहीं हो पाता है।

यदि लौकिक पंचाग की कालगणना स्वीकार कर ली गई, उसमें चैत्र शुक्ला

प्रतिपदा से नया वर्ष लग गया, इधर के (आगम पंचाग के) सूक्ष्म गणित से अनभिज्ञता हो गयी। युग के आदि, मध्य को छोड़कर और किसी वर्ष में चौमासे में मास वृद्धि हुई (हमारी आगम मूलक गणना भी उसी के अनुरूप थी, जिसे पूर्व में काफी स्पष्ट किया जा चुका है और अगले खंड में और विवेचन किया जाने वाला है) उसे छोड़कर चौमासा 4 महीने का ही रखा, जो लौकिक पंचांग से श्रावण मास पूरा होने पर द्वितीय श्रावण कृष्णा प्रतिपदा (2 सावन होने पर) अथवा प्रथम भादवा कृष्णा प्रतिपदा (दो भादवा होने पर) को लगा, उस स्थिति में अभिवर्धित वर्ष में 20 अहोरात्रि में संवत्सरी करने का प्रसंग आयेगा।

यह प्रसंग भी प्रथम प्रावृट् अर्थात् 50वें दिन का ही महत्त्व बता रहा है। बाद में और अधिक विडंबना खड़ी होने पर इस पाठ को भी गौण करना पड़ा-देखते हैं श्री तपागच्छ के श्रीकुलमंडनसूरिजी महाराज विरचित श्री कल्पावचूरि का पाठ-

सा चन्द्रवर्षे नभस्य शुक्लपंचम्यां कालकसूर्यादेशाच्चुतर्थ्यामपि जनप्रकटा कार्या यत्पुनरभिवर्द्धितवर्षेदिनविंशत्या पर्युषितव्यमित्युच्यते तत्सिद्धान्तटिप्पनानुसारेण तत्र हि युगमध्ये पौषो युगान्ते चाषाढ एव वर्द्धते नान्ये मासास्तानि च टिप्पनानि अधुना न सम्यग् ज्ञायन्तेऽतो दिनपंचाशतैव पर्युषणा संगतेति वृद्धाः। (हर्षहृदयदर्पणस्य पृ. 21-22)

अर्थात् वह गृहिज्ञात सांवत्सिरक कृत्ययुक्त पर्युषणा चन्द्र संवत्सर में 50वेकं दिन भाद्रपद शुक्ला पंचमी को पूर्वकाल में की जाती थी। वह श्री कालकाचार्य महाराज की आज्ञा से 49वें दिन चौथ अपर्वतिथि में भी लोकप्रसिद्ध की जाती है और जो अभिवर्धित वर्ष में आषाढ पूर्णिमा से 20 दिन बीतने पर श्रावण शुक्ला पंचमी को गृहिज्ञात सांवत्सरिक कृत्ययुक्त पर्युषण पर्व करने की शास्त्र की आज्ञा है, अतः वह जैन सिद्धान्त टिप्पणे के अनुसार है, क्योंकि जैन टिप्पणे में 5 वर्ष के1 युग के मध्य भाग में निश्चित पौष मास बढता है और युग के अन्त मेंआषाढ मास ही बढता है, अन्य श्रावणादि मास नहीं बढ़ते। उन जैन टिप्पणों का इस समय में सम्यग् ज्ञान नहीं है यानी जैन टिप्पणे के अनुसार चातुर्मास के बाहर पौष, आषाढ मास की वृद्धि होती थी उस जैन टिप्पणे के ज्ञान के अभाव से लौकिक टिप्पणे के अनुसार वर्षा/चातुर्मास के अन्दर श्रावण आदि मासों की वृद्धि होती है, अतः दूसरे श्रावण सुदी चतुर्थी को अथवा प्रथम भाद्रपद सुदी चतुर्थी को 50वें दिन पर्युषण करना निश्चय सम्मत है। तो इसी बात की पुष्टि श्री विनयविजय जी के श्रीकल्पसूत्र सुबोधिका टीका से होती है- **केवलं गृहिज्ञाता तु सा यत् अभिवर्धितवर्षे चातुर्मासिकदिनादारभ्य विंशत्या दिनैर्वयमत्र स्थिता स्म इति पृच्छतां गृहस्थानां पुरो वदन्ति तदपि जैन टिप्पनकाऽनुसारेण यतस्तत्र युगमध्ये पौषो**

युगान्ते चाषाढ एव वर्द्धते नान्ये मासास्तट्टिप्पनकं तु अधुना सम्यग् न ज्ञायते अतः पंचाशतैव दिनैः पर्युषणा युक्तेति वृद्धाः। ('हर्षहृदयदर्पणस्य' पृ. 36)

अर्थात् अभिवर्धित वर्ष में आषाढ़ी पूर्णिमा (चातुर्मासिक दिन) से 20वें दिन श्रावण सुदी पंचमी को गृहिज्ञात सांवत्सरिक कृत्य विशिष्ट पर्युषण करे और पूछने वाले गृहस्थों के समक्ष साधु कहे कि यह पर्युषण जैन टिप्पणे के अनुसार है, क्योंकि जैन टिप्पने में युग के मध्यभाग में पौष और युगान्त में आषाढ मास ही बढता है, अन्य मास नहीं बढते। वह जैन टिप्पणा वर्तमान काल में सम्यक् प्रकार से जानने में नहीं आता है, अतः लौकिक टिप्पणे के अनुसार दूसरे श्रावण सुदी चतुर्थी को या प्रथम भाद्रपद सुदी चतुर्थी को 50वें दिन पर्युषण करना युक्त है।

2. गृहिज्ञात-गृहिअज्ञात - कल्पसूत्र की टीकाएँ विक्रम की 14वीं शताब्दी से मिलती हैं। (कल्पसूत्र : श्री देवेन्द्रमुनि जी म.सा., पृ. 16-17)। सबसे पहली टीका विक्रम संवत् 1364 की बता रखी है। 470 वर्ष के वीर निर्वाण का अंतर जोड़ें तो 1834 वी.नि. के आसपास की टीकाएँ सिद्ध होती है। जबकि इसके पूर्व 11वीं शताब्दी में वी.नि. के 16वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही चालुक्यराज दुर्लभसेन की सभा में शुद्ध धर्म की प्ररूपणा के लिए वर्द्धमान सूरि ने शंखनाद किया था। इसके पूर्व के पृष्ठ में बताया जा चुका है कि तपागच्छ और खरतरगच्छ के विभाजन के पश्चात् जिस-जिस की जैसी मान्यता रही वह अपने साहित्य में उसी की पुष्टि करता चला गया। अतः कल्पसूत्र की टीकाओं में प्रयुक्त शब्द 'गृहिज्ञात' और 'गृहिअज्ञात' भी विवादास्पद रहा, कोई गृहिज्ञात में केवल गृहस्थ को सूचित करना मानते हैं तो कोई सांवत्सरिक कृत्य। जैसे तपागच्छ के श्री कुलमंडनसूरिजी ने श्री कल्पावचूरि में 'सांवत्सरिक कृत्य' अर्थ किया, पाठ इस प्रकार- "गृहिज्ञाता यस्यां तु सांवत्सरिकाऽतिचारालोचनं लुंचनं पर्युषणायां कल्पसूत्रकथनं चैत्यपरिपाटी अष्टमं सांवत्सरिकं प्रतिक्रमणं च क्रियते यया च व्रतपर्यायवर्षाणि गण्यंते। अर्थात् गृहिज्ञात पर्युषण करें जिसमें सांवत्सरिक अतिचार का आलोचन, 1. केशलुंचन, 2. कल्पसूत्र कथन, 3. भगवद् भक्ति, 4. अष्टम तप, 5. सांवत्सरिक प्रतिक्रमण किया जाता है तथा गृहिज्ञात पर्युषण से दीक्षा पर्याय वर्षों को गिनते हैं।

पूर्व के पृष्ठों में विवेचन किया जा चुका है कि चाहे समवायांग सूत्र का पज्जोसवेइ हो, चाहे ठाणांग का, चाहे निशीथ का, ये तीनों पर्युषण से सम्बन्धित ही हैं, कल्पसूत्र का अर्थ भी यही द्योतित कर रहा है। इसका विवेचन इसी खंड में हुआ है। अतः गृहिज्ञात का अभिप्राय सांवत्सरिक आवश्यक कृत्य अधिक उपयुक्त लगता है।

पर ये शब्द आगम में स्पष्ट रूप से आए नहीं और यदि इनको इस विचार श्रेणि में

नहीं भी लिया जाए तो कोई विशेष प्रभाव पड़ने वाला नहीं। पिछले अनेक वर्षों की चर्चाओं में इन्हें बहुत महत्त्व मिला। कालचूला को लेकर भी अनेक पृष्ठ लिखे गये। उसे भी गौण प्रायः कर, यहाँ संक्षेप में ही उनका कथन किया गया है।

3. क्षये पूर्वा तिथिः कार्या वृद्धौ कार्या तथोत्तरा- यह उक्ति तत्त्वार्थसूत्र के रचयिता उमास्वाति जी के नाम से प्रख्यात की गई है। आवश्यक निर्युक्ति की टीका में हरिभद्रसूरि जी ने तत्त्वार्थसूत्र के अनेक सूत्रों का प्रयोग किया है। इससे स्पष्ट है कि विक्रम की 8वीं शताब्दी वी.नि. की 13वीं शताब्दी तक तत्त्वार्थसूत्र बहुत लोकप्रिय हो चुका था, तत्त्वार्थ सूत्र की प्रस्तावना में (तत्त्वार्थ सूत्र-पंडित सुखलाल संघवी-प्रस्तावना पृ. 9) तथा औपपातिक सूत्र की प्रस्तावना में (औपपपातिक सूत्र- श्री मधुकरमुनि जी म.सा., प्रस्तावना पृ. 1) श्री देवेन्द्रमुनि जी शास्त्री ने भी इसका उल्लेख किया है। इसके अनुसार उमास्वाति जी का समय विक्रम की 4थी-5वीं शताब्दी, वी.नि. की 8वीं-9वीं शताब्दी के आसपास अनुमानित किया जाता है। उस समय पूर्वधरों की विद्यमानता में यह संवत्सरी संबंधी विवाद था ही नहीं, अतः उनके द्वारा इस प्रकार कहा जाना संभव नहीं लगता।

उमास्वाति जी की रचना के रूप में तत्त्वार्थसूत्र के साथ 'प्रशमरति प्रकरण' आज भी उपलब्ध है (जो उनकी रचना है या नहीं विवादास्पद है) और तत्त्वार्थसूत्र की स्वोपज्ञ टीका आदि मिलती है। इनमें तो कहीं भी इस कथन का उल्लेख नहीं हुआ। फिर यह उनके किस ग्रंथ में आया।

तत्त्वार्थसूत्र दिगम्बर परम्परा में भी बहुमान्य है। पूज्यपाद की सर्वार्थसिद्धि, अकलंक देव की राजवार्तिक इसी की टीकाएँ हैं। वहाँ पर भी यह देखने को नहीं मिलता।

श्राद्धविधिग्रंथ में तपागच्छ के श्रीरत्नशेखरसूरिजी म.सा. द्वारा तथा अभिधान राजेन्द्र कोष भाग 4 में इस उक्ति को उमास्वाति जी का वचन मानने का प्रघोष सुनने में आता है-

उमास्वातिवचःप्रघोषश्चैवंश्रूयते।।
क्षये पूर्वा तिथिः कार्या वृद्धौ कार्या तथोत्तरा।
श्री महावीर निर्वाणे भव्यैर्लोकानुगैरिह।।1।।

पर ऊपर देख चुके हैं इतिहास के पृष्ठों से यह बात युक्तिसंगत नहीं है कि उमास्वाति जी का यह कथन है।

इस कथन का प्रयोग करने वाले दो भादवा होने पर दूसरे भादवा में संवत्सरी करने का सूचन करते हैं, जबकि आगम विधानों से दो भादवा होने का प्रसंग ही नहीं आ सकता। अतः उक्त कथन यहाँ पर लागू नहीं हो सकता। फल्गु मास, शून्य मास अथवा नगण्य मास

जिस लौकिक पंचांग से गिना जाता है वे भी इस कथन को मान्य नहीं कर सकते, क्योंकि मास वृद्धि होने पर कृष्ण पक्ष के पर्वों को प्रथम पक्ष में ही मनाते हैं, द्वितीय पक्ष में नहीं। उदाहरणार्थ- इस वर्ष भादवा महीने की वृद्धि होने पर श्री कृष्ण जन्माष्टमी प्रथम भाद्रपद के कृष्ण पक्ष में अष्टमी शुक्रवार 10 अगस्त को ही मनायी जाएगी। उनका तो नियत है-

उदाहरणार्थ-1. प्रथम भाद्रपद कृष्ण पक्ष 3 अगस्त 2012-17 अगस्त 2012

2. प्रथम भाद्रपद शुक्ल पक्ष 18 अगस्त 2012-31 अगस्त 2012

3. द्वितीय भाद्रपद कृष्ण पक्ष 01 सितम्बर 2012-16 सितम्बर 2012 सूर्य संक्रान्ति परिवर्तन नहीं होने से फल्गु मास

4. द्वितीय भाद्रपद शुक्ल पक्ष 17 सितम्बर 2012-30 सितम्बर 2012

अतः यदि बढ़ने पर अगले में मनाने की उक्ति होती तो कृष्ण पक्ष के पर्व भी दूसरे भाद्रपद कृष्ण में मनाए जाते, पर ऐसा नहीं होता। आगम गणित अमान्त न होकर पूर्णिमान्त होता है, अतः अपेक्षा विशेष से ही वह मास नगण्य होता है किन्तु दैनिक, पाक्षिक प्रतिक्रमण, साधना के लिए नहीं। आगम गणित के अनुसार आषाढ और पौष महीना बढ़ने से संवत्सरी के पर्व निर्धारण में '**क्षये पूर्वा तिथिः कार्या वृद्धौ कार्या तथोत्तरा।**' का कोई महत्त्व भी नहीं। स्वयं श्राद्ध ग्रंथ में इसका प्रयोग करने वाले इसे भगवान् महावीर के निर्वाण कल्याणक से संबंधित कर रहे हैं।

जैसे उदय की परम्परा वाले सूर्य उदय को स्पर्श नहीं करने वाली तिथि को क्षयतिथि मानते हैं। कोई भी तिथि 20 घंटे से कम की हो ही नहीं सकती, इसलिए पूर्व के दिन 20 घंटा रहने से उस तिथि का कार्य पूर्व के दिन कर लेते हैं, उस तिथि से संदर्भित अनुष्ठानों को पूर्व की तिथि में करना युक्तिसंगत ही है। क्योंकि उसका कार्य उसी तिथि की घटी/घड़ी में सम्पन्न हो जाता है। पर बढ़ने वाली तिथि में ऐसा होना अनिवार्य नहीं, अपितु प्रायः अगली तिथि की घटियों में ही उसका कार्य होता है।

जैसे उदाहरणार्थ चैत्र शुक्ला 2069, 27 मार्च 2012 मंगलवार को पंचमी दिन भर है तथा अगले दिन 28 मार्च 2012 बुधवार को पंचमी 3 घटी 45 पल प्रातः 8.07 तक है।

अगले दिन यदि पंचमी के कार्य किए जाएंगे तो प्रायः छठ की घड़ी में होंगे।

ऐसी ही घड़ियाँ यदि भादवा शुक्ल पक्ष में आवे तो संवत्सरी दूसरी पंचमी को न करके पहली पंचमी को ही की जाएगी।

यदि कोई यह कहे कि स्थानकवासी परम्परा अस्त परम्परा से संबंधित है तब हम

इसी वर्ष की संवत्सरी को देख सकते हैं।

भाद्रपद शुक्ला 2068; 11 सितम्बर, गुरुवार, चतुर्थी, 31 घटी 43 पल, रात्रि 7 बजकर 2 मिनिट तक थी। इसके पश्चात् पंचमी लगी सूर्यास्त जोधपुर में 6.55 मिनिट पर बताया गया है अर्थात् सूर्यास्त के 7 मिनिट बाद तक चतुर्थी की घड़ी थी, अगले दिन 2 सितम्बर, शुक्रवार, पंचमी 24 घटी 28 पल, दोपहर 4 बजकर 09 मिनिट तक थी, सूर्यास्त 6 बजकर 54 मिनिट पर है, अस्त बिन्दु से पंचमी का क्षय हुआ 'क्षये पूर्वा तिथिः कार्या वृद्धौ कार्या तथोत्तरा' के अनुरूप पंचमी को होने वाला सांवत्सरिक प्रतिक्रमण 1 सितम्बर, गुरुवार, चतुर्थी को होना चाहिए वैसे भी सूर्यास्त के 7 मिनिट पश्चात् पंचमी की घड़ी आ ही गई। पंचमी के दिन प्रतिक्रमण के समय तो छठ की घड़ियाँ रहती हैं, फिर भी 'क्षये पूर्वा तिथिः कार्या वृद्धौ कार्या तथोत्तरा' की उक्ति को द्वितीय भाद्रपद में संवत्सरी मनाने के लिए प्रयुक्त करने वाली परम्परा ने इसी के चरण 'क्षये पूर्वा तिथि कार्या' का अनुपालन नहीं किया, अनेक बार चातुर्मासिक पर्वों पर भी ऐसा ही हुआ।

आज हम कहाँ खड़े हैं? (5 संवत्सरी होंगी इस बार)

1. प्रथम भाद्रपद शुक्ल पक्ष चतुर्थी, मंगलवार, 21 अगस्त 2012
2. प्रथम भाद्रपद शुक्ल पक्ष पंचमी, बुधवार, 22 अगस्त 2012
3. द्वितीय भाद्रपद शुक्ल पक्ष चतुर्थी, बुधवार, 19 सितम्बर 2012
4. द्वितीय भाद्रपद शुक्ल पक्ष पंचमी, गुरुवार, 20 सितम्बर 2012
5. द्वितीय भाद्रपद शुक्ल पक्ष चतुर्दशी, शनिवार, 29 सितम्बर 2012

जबकि आगम का उद्घोष एक ही है–

श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से 50वाँ दिन

आगम गणित से भादवा शुक्ला पंचमी

पंचम खंड

गणित की जटिल प्रक्रिया : गुरु कृपा का है शुक्रिया

(क) युग-स्वरूप, गणना, उपयोग-

(अ) प्राप्तव्य है मुक्ति, उसके लिए संयम अनिवार्य है। करनी है सामायिक तो उसके लिए आसन, मुँहपत्ति, पूँजनी आवश्यक है। पानी है मंजिल तो उसके लिए सीढ़ियाँ चढना आवश्यक है। वैसे ही यहाँ करनी है विशिष्ट गणना तो उसके लिए पहले सामान्य गणना भी करनी पड़ती है। जैसे कि अनुयोग द्वार में 3 प्रकार के पल्योपम बताए- उद्धार पल्योपम, अद्धा पल्योपम, क्षेत्र पल्योपम।

उत्सेधांगुल से एक योजन लम्बा, एक योजन चौड़ा, एक योजन ऊँचा एवं कुछ अधिक तिगुनी परिधिवाला एक पल्य हो। उस पल्य को 1, 2, 3, 4 यावत् 7 दिन के उगे हुए बालाग्रों से इस प्रकार ठसाठस भरा जाए कि फिर उन बालाग्रों को अग्नि जला न सके, वायु उड़ा न सके, न वे सड़-गल सकें, न उनका विध्वंस हो। ऐसे पल्य से बालाग्र उद्धार, अद्धा, क्षेत्र में कब निकाले जाएं इसको एक तालिका के माध्यम से देखें-

	उद्धार	अद्धा	क्षेत्र
व्यावहारिक पल्योपम	ऊपर वर्णित पल्य में से एक-एक समय में एक -एक बालाग्र निकालने पर पल्य खाली होने में जितना काल वह, व्यावहारिक उद्धार पल्योपम	पल्य में से 100-100 वर्ष पश्चात् 1-1 बालाग्र निकालने पर पल्य खाली होने का समय व्यावहारिक अद्धा पल्योपम	पल्य के जो आकाश प्रदेश बालाग्रों से व्याप्त हैं, उन प्रदेशों में से प्रति समय 1-1 आकाश प्रदेश निकालने पर पल्य खाली होने का समय
व्यावहारिक सागरोपम	10 कोडाकोडी पल्योपम =1 व्यावहारिक उद्धार सागरोपम	10 कोडाकोडी पल्योपम = 1 व्यावहारिक अद्धा सागरोपम	10 कोडाकोडी पल्योपम = 1 व्यावहारिक क्षेत्र सागरोपम
		सूक्ष्म को समझने के लिए	
प्रयोजन	केवल प्ररूपणा मात्र	केवल प्ररूपणा मात्र	प्ररूपणा मात्र

सूक्ष्म पल्योपम	1-1 समय में 1-1 बालाग्र के असंख्यात -असंख्यात खंड पल्य खाली होने का समय	100-100 वर्ष पश्चात् 1-1 बालाग्र के असंख्यात खंड निकालने में जितना समय	असंख्यात खंड वाले बालाग्रों के स्पृष्ट-अस्पृष्ट आकाश प्रदेशों को 1-1 समय 1-1 आकाश प्रदेश निकालने में जितना समय
सूक्ष्म सागरोपम	10 कोडाकोडी सूक्ष्म उद्धार पल्योपम = 1 सूक्ष्म उद्धार सागरोपम	10 कोडाकोडी सूक्ष्म अद्धा पल्योपम = 1 सूक्ष्म अद्धा सागरोपम	10 कोडाकोडी सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम = 1 सूक्ष्म क्षेत्र सागरोपम
प्रयोजन	द्वीप समुद्र का प्रमाण	4 गति के आयुष्य का प्रमाण	दृष्टिवाद में वर्णित द्रव्यों का मान

यहाँ पर सूक्ष्म उद्धार, सूक्ष्म अद्धा, सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम को सागरोपम के लिए दर्शाया तो व्यावहारिक उद्धार, अद्धा, क्षेत्र पल्योपम- सागरोपम को मात्र प्ररूपणा के लिए बताया जिसका अपना कोई महत्त्व नहीं और सबके अपने अलग-अलग प्रयोजन हैं।

ठीक, उसी प्रकार यहाँ गणना में भी अलग-अलग प्रयोजन होता है। प्रयोजन का उपयोग ठीक रीति से नहीं होने से यही कहा जाता है कि वर्तमान में आगम गणित लुप्त हो गई। इस खंड में यही देखने का प्रयास रहेगा कि लौकिक गणित आगम गणित की पोषक है-विरोधी नहीं।

(आ) सामान्य गणना

युग	वर्ष	ऋतु मास के दिन	सामान्य गणना का प्रयोजन
1	5	360×5= 1800 दिन	भिन्न-भिन्न तपस्या की गणना में उपयोगी आगे
20	100	1800×20=36000 दिन	की सारी गणना का आधार और कतिपय युग इसी गणना से।

(इ) विशेष गणना

पंच संवच्छरा पण्णत्ता, तं जहा- णक्खत्त संवच्छरे, जुगसंवच्छरे, पमाणसंवच्छरे, लक्खण संवच्छरे, सणिंचरसंवच्छरे' तथा

पमाणसंवच्छरे पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा- णक्खत्ते, चंदे, उऊ,

आदिच्चे, अभिवड्ढिए।

ठाणांग के 5/3/210 सूत्र का अर्थ है कि 5 प्रकार के संवत्सर होते हैं- 1. नक्षत्र 2. युग 3. प्रमाण 4. लक्षण 5. शनिश्चर। प्रमाण संवत्सर भी 5 प्रकार के कहे हैं- 1. नक्षत्र 2. चन्द्र 3. ऋतु 4. आदित्य 5. अभिवर्धित।

	एक वर्ष में	5 वर्ष =एक युग में (समवायांग सूत्र)
नक्षत्र मास	27 21/67 = 327 51/67 दिन	27 21/67×67 =1830 दिन
चन्द्र मास	29 32/62 = 354 12/62 दिन	29 32/62×62 =1830 दिन
ऋतु मास	30 = 360 दिन	30 × 61 = 1830 दिन
सूर्य मास	30 31/61 =366 दिन	30 31/61 ×60 = 1830 दिन

समवायांग सूत्र में नक्षत्र संवत्सर, चन्द्र संवत्सर, ऋतु संवत्सर तथा सूर्य संवत्सर का 1 युग में 5 वर्ष में सामंजस्य बिठाने का सूत्र है।

सूत्र में '**जुगसंवच्छरे पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा- चंदे चंदे अभिवड्ढिए चंदे अभिवड्ढिए।**' युगसंवत्सर पांच प्रकार के कहे गए हैं- 1 चन्द्र संवत्सर 2 चन्द्र संवत्सर 3 अभिवर्धित संवत्सर 4. चन्द्र संवत्सर 5. अभिवर्धित संवत्सर। चन्द्रप्रज्ञप्ति सूत्र (10/21) में इसके आगे का विवेचन है, जिसके भाव इस प्रकार हैं-

युगसंवत्सर-	चन्द्र	चन्द्र	अभिवर्धित	चन्द्र	अभिवर्धित	
पर्वसंवत्सर-	24	24	26	24	26	= 1241 पर्व

1 युग संवत्सर में 1241 पर्व बताए हैं।

1 युग के 1830 दिन

20 युग के (100 वर्ष) = 1830×20 = 36600 अहोरात्रि

1 युग में 62 चन्द्र मास अर्थात् 2 माह वृद्धि

20 युग में 20×2 = 40 माह वृद्धि

यह ओघ से कथन है, सामान्य कथन है।

जबकि कुछ अवमरात्रियाँ, कुछ अतिरात्रियाँ होती हैं। ठाणांग 6 में, उत्तराध्ययन में, चंदपण्णत्ती में इन्हें स्पष्ट किया गया है।

विशेष गणना का प्रयोजन- 1. विशिष्ट कालगणना का आधार 2. चन्द्रमास पर्वाराधन प्रतिक्रमण आदि में उपयोगी।

(ई) विशेषतर गणना- आगम गणित लुप्त होने से इसका प्रमाण देना संभव नहीं

20 युग = 100 वर्ष में→40 अधिक मास +1200 स्वाभाविक = 1240 मास

जबकि आकाश में 1236 बार या 1237 बार ही चन्द्रदर्शन होते हैं।

सूर्य संवत्सर=30 ½×12 =366 दिन; जबकि सूर्य संवत्सर में 365 ¼ दिन

100 वर्ष में =36600 दिन 100 वर्ष में =36525 दिन

36600-36525 = 75 दिन का अंतर पड़ जाता है 100 वर्ष में।

दूसरे तरीके- 1 युग में आगम गणित से 1830 दिन होते हैं,

लौकिक से 1826¼ दिन

5 वर्ष में = 3 ¾ दिन का अंतर पड़ जाता है

1 वर्ष में = 3/4 दिन का

100 वर्ष में = 75 दिन का अंतर

2 युग में = 10 वर्ष

3 ¾ ×2 = 7½ दिन का अंतर 10 वर्ष में

2 युग में 7½ दिन का अंतर। इनको व्यवस्थित करने के लिए 2½ वर्ष में मास वृद्धि के स्थान पर 3 बार 3-3 वर्ष मास वृद्धि करनी पड़ती है। 2 युग सम्वत्सरों के बीच 1-3 वर्ष का रखने पर 2-3-3 वर्ष 6 वर्ष पीछे रखे जाते हैं या बीच में 6 वर्ष पीछे 3 वर्ष।

अतः 2 युग के साथ में ऐसा करना पड़ता है।

युग संवत्सर	संशोधित	युग संवत्सर	संशोधित
चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र
चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र
अभिवर्धित-पौष	अभिवर्धित आषाढ	अभिवर्धित पौष	अभिवर्धित आषाढ 3 वर्ष में अभिवृद्धि
चन्द्र		चन्द्र	चन्द्र
अभिवर्धित-आषाढ		अभिवर्धित आषाढ	चन्द्र अभिवर्धित पौष में 2½ वर्ष में, पर अगली अभिवृद्धि
5 वर्ष	3 वर्ष में अभिवृद्धि	5 वर्ष	3 वर्ष में

अथवा युगसंवत्सर बीच में 5-6-5-3 वर्ष या 5-3-5-6 वर्ष में।

कभी-कभी अपवाद स्वरूप इन बीच के तीनों में आषाढ बढने का प्रसंग आ

जाता है, पर कभी-कभी बीच के छः में पौष और अगले युगसंवत्सर में पौष इस प्रकार 3 बार पौष वृद्धि हो जाती है। न्यूनतम 30 मास पर और अधिकतम 36 मास पर वृद्धि अवश्य होती है।

(उ) अनुयोगद्वार सूत्र में काल प्रमाण के वर्णन में- "असंखिज्जाणं समयाणं समुदयसमिइसमागमेणं सा एगा आवलिय त्ति पवुच्चइ। संखेज्जाओ आवलियाओ ऊसासो। संखेज्जाओ आवलियाओ नीसासो।

हट्ठस्स अणवगल्लस्स निरुवकिट्ठस्स जंतुणो।
एगे ऊसास-नीसासे एस पाणु त्ति वुच्चति।।
सत्तपाणूणि से थोवे, सत्त थोवाणि से लवे।
लवाणं सत्तहत्तरीए, एस मुहुत्ते वियाहिए।।2।।
तिण्णि सहस्सा सत्त य, सयाइं तेहुत्तरिं च ऊसासा।
एस मुहुत्तो भणिओ, सव्वेहिं अणंतणाणीहिं।।3।।

एएणं मुहुत्तपमाणेणं तीसं मुहुत्ता = अहोरत्तं, पण्णरस अहोरत्ता = पक्खो, दो पक्खा = मासो, दो मासा =उऊ, तिण्णि उऊ = अयणं, दो अयणाइं = संवच्छरे, पंच संवच्छराइं = जुगे।"

असंख्यात समयों के समुदाय समिति के संयोग से एक आवलिका निष्पन्न होती है। संख्यात आवलिकाओं का एक उच्छ्वास और संख्यात आवलिकाओं का एक निःश्वास होता है।

हृष्ट, वृद्धावस्था से रहित, व्याधि से रहित मनुष्य के एक उच्छ्वास और निःश्वास के 'काल' को प्राण कहते हैं।

ऐसे 7 प्राणों का = 1 स्तोक	30 मुहुर्त = एक दिन रात	3 ऋतु = 1 अयन
7 स्तोक का = 1 लव	15 दिन रात = 1 पक्ष	2 अयन = 1 वर्ष
77 लव = 1 मुहुर्त =	2 पक्ष = 1 मास	5 वर्ष = 1 युग
3773 उच्छ्वास निःश्वास	2 मास = 1 ऋतु	

तथा समवायांग सूत्र के 61,62,67 वें समवाय में-

पंचसंवच्छरियस्स णं जुगस्स रिउमासेणं मिज्जमाणस्स इगसट्ठिं उऊमासा पण्णत्ता।।61

पंचसंवत्सर वाले युग के ऋतु मासों से गिनने पर इकसठ ऋतु मास होते हैं।

पंचसंवच्छरिए णं जुगे बासट्ठिं पुण्णिमाओ बावट्ठिं अमावसाओ पण्णत्ताओ।।62

पंच सांवत्सरिक युग में 62 पूर्णिमाएँ और 62 अमावस्याएँ कही गई हैं।

पंचसंवच्छरियस्स णं जुगस्स णक्खत्तमासेणं भिज्जमाणस्स सत्तसट्ठिं णक्खत्तमासा पण्णत्ता।।67

पंच सांवत्सरिक युग में नक्षत्र मास से गिनने पर 67 नक्षत्रमास कहे गए हैं।

अनुयोगद्वार सूत्र-समवायांग सूत्र का अंतर

अनुयोगद्वार सूत्र	समवायांग सूत्र
5 वर्ष में 1800 दिन	5 वर्ष में 1830 दिन
5 वर्ष में 60 माह	5 वर्ष में 61 माह

जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र- 'पंचसंवच्छरिए णं भंते! जुगे केवइया अयणा केवइया उऊ एवं मासा पक्खा अहोरत्ता केवइया मुहुत्ता पण्णत्ता? गोयमा! पंचसंवच्छरिए णं जुगे दस अयणा तीसं उऊ सट्ठि मासा एवं बीसुत्तरे पक्खसए अट्ठारसतीसा अहोरत्त सया चउप्पण्णं मुहुत्तं सहस्सा णव मासा पण्णत्ता।' अर्थात् 5 संवत्सर के 1 युग में 10 अयन, 30 ऋतु , 60 मास, 120 पक्ष, 1830 अहोरात्र, 54900 मुहूर्त्त होते हैं।

औघिक दृष्टि से अनुयोग द्वार सूत्र में
युग तक की पुष्टि जंबूद्वीप में

समवायांग सूत्र ने उसे संशोधित करते हुए 60 की जगह 61 मास में बदला	जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र में 60 मास दिखाते हुए 1830 अहोरात्र, 54900 मुहूर्त्त कहे

1830 दिन

इस 1830 दिन को भी संशोधित करते हुए 1826 ¼ दिन में लाने का सूत्र 7 युग =35 वर्ष में 14 मास न बढ़ाकर 13 मास बढ़ाते हुए 2 ½ वर्ष के अंतराल से बढने वाले महीनों में 1-2 ½ वर्ष (30 महीने का), 13-2 ½ वर्ष (32 ½ महीनों) में वितरण करते हुए उसकी पूर्ति का सूत्र आज हमारे समक्ष नहीं है। आगे हम 35 वर्ष में 2 ½-2 ½ वर्ष के अंतराल से यदि मासवृद्धि करते हैं तो कैसी विडंबना खड़ी होती है और यदि युग के प्रारम्भ श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से युग के मध्य पौष मास तक बढ़ने वाले महीनों को युगमध्य में मान पौष माह को बढ़ावें और युगमध्य में माघकृष्णा प्रतिपदा से युगान्त आषाढ शुक्ला पूर्णिमा तक बढ़ने वाले महीनों को युगान्त में बढ़ालें तो प्रत्येक वर्षावास श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को लगने में कोई बाधा नहीं आती है।

(ऊ) प्रत्येक युग में 2 मास वृद्धि-संभव ही नहीं

यदि हम कुल 2500 वर्षों का लेखा करें तो

चातुर्मास में-	श्रावण 167 बार वृद्धि	
	भाद्रपद142 बार वृद्धि	
	आश्विन 71 बार वृद्धि	
	और कार्तिक 25 बार वृद्धि	

	कुल 405	561 चातुर्मास के पूर्व माह वृद्धि
44 क्षय मास	कार्तिक क्षय 10	34 मिगसर व पौष क्षय
	--------	--------
	395	527

शुद्ध माह वृद्धि

कुल 922 में 7 का भाग - 131	× 3 = 393	× 4 = 524
5 शेष -	2	3
	395	527

यह अनुपात 114 वर्षों में भी यही था 416 वर्षों में भी यही था, 2500 वर्षों में भी यही है।

			कुल
1. 19 वर्षों में	3 बार पौष	4 बार आषाढ वृद्धि	7 मास वृद्धि
2. 114 वर्षों में (वी.नि.470-584)	18 बार पौष	24 बार आषाढ वृद्धि	42 मास वृद्धि
3. 416 वर्षों में (वी.नि.584-1000)	66 बार पौष	88 बार आषाढ वृद्धि	154 मास वृद्धि
4. 2500 वर्षों में	395 बार पौष	527 बार आषाढ वृद्धि	922 मास वृद्धि

अधिक मास युग-युगान्तरों से चला आ रहा है। आकाश में नैसर्गिक रूप से चन्द्र-सूर्य आदि की यही चाल है, यही गति है। इसमें गणना में स्थूलता सूक्ष्मता से हमारे कथन में भिन्नता आ सकती है, पर इनकी स्थिति/चाल में नहीं। अतः 2500 साल में (5 वर्ष में 2 के अनुपात से) 1000 मास वृद्धि का कथन आकाश में सही नहीं उतर सकता 922 महीने ही बढ़ेंगे। 76 वर्ष 10 मास अधिक बढ़ाते हुए मुस्लिम वर्ग भले ही मास वृद्धि नहीं गिने-922 चन्द्र दर्शन की अधिकता से 76 वर्ष 10 मास अधिक बढ़ा ले, पर 1000 मास

बढ़ाकर 83 वर्ष 4 मास का अर्थात् 6 वर्ष 6 मास का लेखा-जोखा किसी भी पंचांग, धर्म, मत के गणित से नहीं बैठ सकता।

अतः प्रत्येक युग में 2 मास बढ़ाने का कथन संशोधन की आवश्यकता रखता है। सूक्ष्म गणना में वह हमारे पास था ही, आज विलुप्त है, पर लौकिक गणित से हम उसे निकाल सकते हैं।

विशिष्ट गणना- ऊपर की गणना में भी सूक्ष्म संशोधन अपेक्षित होने से 5-3-5-3 इस तरह 16 वर्ष का विक्रम के 2000 वर्ष में 190 वर्ष बाद अथवा 266 वर्ष बाद प्रसंग आता है। कभी ग्रहों की चाल में विषमता से 5-6-5-6 और उसके 19 वर्ष पश्चात् ही 5-3-5-3 का भी प्रसंग बना।

इस तरह प्रायः प्रत्येक 19 वर्ष में 2 बार युगसंवत्सर आते हैं। 3 बार चन्द्र-चन्द्र-अभिवर्धित के रूप में 3-3 वर्ष रह जाते हैं पूरे युग के 5 वर्ष नहीं बन पाते।

आकाश में उनकी गति तो नियमित रहती है, अंकों की पराधीनता में जकड़ी हमारी गणना को सुधारने के लिए यह संशोधन करना होता है। क्योंकि ¾ दिन को प्रत्येक वर्ष नहीं दिखाया जाता। अतः 4 वर्ष में फरवरी में 1 दिन बढाते हैं। इसी तरह अंकों के विभाग प्रत्येक वर्ष में नहीं दिखा सकते तब प्रत्येक युग संवत्सर के समापन में उनको संशोधित किया जाता है। इनके जोड़े भी 7 युग के 35-35 वर्षों के बने हुए हैं। जो हम तृतीय खांड में देख चुके थे कि 12 मास की वृद्धि लगभग 32 ½ वर्ष में हो जाती है। अतः आगम की सूक्ष्म गणित भले ही लुप्त हो चुकी हो, पर लौकिक गणित से चातुर्मास के पूर्व की मास वृद्धि को आषाढ के रूप में स्वीकार कर और आषाढ मास के बाद की मास वृद्धि को पौष मास वृद्धि के रूप में स्वीकार करने पर हम आगमीय गणना के बहुत निकट पहुँच सकते हैं।

इस प्रकरण से यह बात तो बिल्कुल स्पष्ट है कि आगमीय गणना से चातुर्मास 4 महीने का ही होगा, समवायांग के दोनों चरणों का आराधन प्रत्येक वर्ष में संभव है।

पूर्व के चर्चा पत्रों में उन्हें केवल चन्द्र संवत्सर के लिए मानकर अभिवर्धित वर्ष में गौण करना कहा गया, उसकी कोई आवश्यकता नहीं।

यदि हम लौकिक व्यवहार में आबद्ध होकर 5 माह का चातुर्मास मानने के लिए ही विवश हों तब कल्पसूत्र की 'सामाचारी' वाले पाठ से 'सविसइराए मासे' 50वें दिन संवत्सरी की अनुपालना करके पर्युषण को तो विशुद्ध रख ही सकते हैं।

इन्हें पिछले 2068 वर्षों में वि.सं. में बढ़े हुए मासों से अगले विभाग में स्पष्ट किया है।

(ख) 19 वर्षों में मास वृद्धि का सामान्य नियम व विक्रम संवत् 2065 तक 110 बिन्दु में उस नियम की एकरूपता-भिन्नता

(1) आषाढ मास की पूर्णिमा चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से 3 ½ माह पश्चात् आती है। विक्रम संवत् चैत्र शुक्ला की प्रतिपदा को लगने से उसमें से आषाढी पूर्णिमा को 1 कम करने पर युग का संवत् आता है, श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से चैत्र कृष्णा अमावस्या तक दोनों समान रहते हैं, अतः पौष में दोनों में अन्तर नहीं होता।

विक्रम संवत् से आषाढ पूर्णिमा पर आगम वर्ष का अंत। पंचम आरक लगने के पश्चात् विक्रम संवत् आरम्भ होने तक 466 वर्ष पूरे हो चुके हैं। उसमें विक्रम संवत् की संख्या जोड़ दी जाए तो पंचम आरक का संवत्सर आएगा।

प्रथम	19 वर्ष		लौकिक पंचांग	आगम गणित			
1	1	चन्द्र					
2	2	चन्द्र					
3	3	अभिवर्धित	भाद्रपद	पौष		युग	□5
4	4	चन्द्र				संवत्सर	
5	5/6 विक्रम	अभिवर्धित	आषाढ	आषाढ			
6	6	चन्द्र				प्रथम में	
7	7	चन्द्र			3	आषाढ	△3
8	8/9	अभिवर्धित	वैशाख	आषाढ		वृद्धि	
9	9	चन्द्र				द्वितीय में	6 वर्ष
10	10	चन्द्र			3	पौष	○3
11	11	अभिवर्धित	भाद्रपद	पौष		वृद्धि	
12	12	चन्द्र					
13	13	चन्द्र					
14	14	अभिवर्धित	श्रावण	पौष		युग	□5
15	15	चन्द्र				संवत्सर	
16	16/17	अभिवर्धित	ज्येष्ठ	आषाढ			

17	17	चन्द्र			केवल
18	18	चन्द्र			3 आषाढ △3
19	19	अभिवर्धित	चैत्र	आषाढ	वृद्धि

□ 5- युग संवत्सर 2 ½ वर्ष में मास वृद्धि। युग मध्य पौष, युगान्त आषाढ

△ 3- आषाढ वृद्धि

○ 3- पौष वृद्धि- वर्ष = 5+6+5+3 = 19

(2) विक्रम संवत् 2065 तक मास वृद्धि का क्रम-

यह (1) में वर्णित क्रम के अनुसार चलता रहता है, क्षय मास आदि कारण होने पर परिवर्तन हो सकता है- 5+6+5+3 = 19 का स्थान 5+3+5+6 = 19 ले सकता है- विशेष अपवाद आने पर आगे देख लेंगे।

प्रथम से पुनः देखते चलते हैं-

(1)	1 से 19	5+6+5+3 =19	
(2)	20-38	5+6+5+3 =19	100 वर्षों में
(3)	39-57	5+6+5+3 =19	37 मास वृद्धि
(4)	58-76	5+3+5+6 =19	
(5)	77-95	5+3+5+6 =19	
(6)	96-114	5+3+5+6 =19	
(7)	115-133	5+3+5+6 =19	
(8)	134-152	5+3+5+6 =19	100-200 वर्षों में
(9)	153-171	5+3+5+6 =19	36 मास वृद्धि
(10)	172-190	5+3+5+6 =19	
(11)	**191-206**	**5+3+5+3 =16**	
(12)	207-225	5+6+5+3 =19	
(13)	226-244	5+6+5+3 =19	200-300 वर्षों में
(14)	245-263	5+6+5+3 =19	37 मास वृद्धि

(15)	264-282	5+6+5+3 =19	
(16)	283-301	5+6+5+3 =19	
(17)	302-320	5+6+5+3 =19	
(18)	321-339	5+6+5+3 =19	300-400 वर्षों में
(19)	340-358	5+3+5+6 =19	37 मास वृद्धि
(20)	359-377	5+3+5+6 =19	
(21)	378-396	5+3+5+6 =19	
(22)	**397-412**	**5+3+5+3 =16**	
(23)	413-431	5+6+5+3 =19	
(24)	432-450	5+6+5+3 =19	400-500 वर्षों में
(25)	451-469	5+6+5+3 =19	37 मास वृद्धि
(26)	470-488	5+6+5+3 =19	
(27)	489-507	5+6+5+3 =19	
(28)	508-526	5+6+5+3 =19	
(29)	527-545	5+6+5+3 =19	500-600 वर्षों में
(30)	546-564	5+3+5+6 =19	37 मास वृद्धि
(31)	565-583	5+3+5+6 =19	
(32)	584-602	5+3+5+6 =19	
(33)	603-621	5+3+5+6 =19	
(34)	622-640	5+3+5+6 =19	
(35)	641-659	5+3+5+6 =19	600-700 वर्षों में
(36)	660-678	5+3+5+6 =19	37 मास वृद्धि
(37)	**679-694**	**5+3+5+3 =16**	
(38)	695-713	5+6+5+3 =19	
(39)	714-732	5+6+5+3 =19	
(40)	733-751	5+6+5+3 =19	
(41)	752-770	5+6+5+3 =19	
(42)	771-789	5+6+5+3 =19	700-800 वर्षों में
(43)	790-808	5+6+5+3 =19	37 मास वृद्धि

(44)	809-827	5+6+5+3 =19	
(45)	828-846	5+3+5+6 =19	800-900 वर्षों में
(46)	847-865	5+3+5+6 =19	37 मास वृद्धि
(47)	866-884	5+3+5+6 =19	
(48)	885-903	5+3+5+6 =19	
(49)	904-922	5+3+5+6 =19	
(50)	923-941	5+3+5+6 =19	900-1000 वर्षों में
(51)	942-960	5+3+5+6 =19	37 मास वृद्धि
(52)	**961-976**	**5+3+5+3 =16**	
(53)	977-995	5+6+5+3 =19	
(54)	996-1014	5+6+5+3 =19	
(55)	1015-1033	5+6+5+3 =19	1000-1100 वर्षों में
(56)	1034-1052	5+6+5+3 =19	36 मास वृद्धि
(57)	1053-1071	5+6+5+3 =19	
(58)	1072-1090	5+6+5+3 =19	
(59)	1091-1109	5+6+5+3 =19	
(60)	1110-1128	5+3+5+6 =19	
(61)	1129-1147	5+3+5+6 =19	1100-1200 वर्षों में
(62)	1148-1166	5+3+5+6 =19	37 मास वृद्धि
(63)	**1167-1182**	**5+3+5+3 =16**	
(64)	1183-1201	5+6+5+3 =19	
(65)	**1202-1223**	**5+6+5+6 =22**	छापेखाने अथवा गणना की चूक से यहाँ त्रुटि रह सकती है अन्यथा 19×7 के बाद ही प्रायः परिवर्तन होता है इन दोनों जगह 19-19 होने की संभावना है।
(66)	1224-1242	5+3+5+6 =19	
(67)	**1243-1258**	**5+3+5+3 =16**	
(68)	1259-1277	5+6+5+3 =19	
(69)	1278-1296	5+6+5+3 =19	1200-1300 वर्षों में
(70)	1297-1315	5+6+5+3 =19	37 मास वृद्धि
(71)	1316-1334	5+3+5+6 =19	
(72)	1335-1353	5+3+5+6 =19	

(73)	1354-1372	5+3+5+6 =19	
(74)	1373-1391	5+3+5+6 =19	1300-1400 वर्षों में
(75)	1392-1410	5+3+5+6 =19	37 मास वृद्धि
(76)	1411-1429	5+3+5+6 =19	
(77)	1430-1448	5+3+5+6 =19	1400-1500 वर्षों में
(78)	**1449-1464**	**5+3+5+3 =16**	37 मास वृद्धि
(79)	1465-1483	5+6+5+3 =19	
(80)	1484-1502	5+6+5+3 =19	
(81)	1503-1521	5+6+5+3 =19	
(82)	1522-1540	5+6+5+3 =19	1500-1600 वर्षों में
(83)	1541-1559	5+6+5+3 =19	37 मास वृद्धि
(84)	1560-1578	5+6+5+3 =19	
(85)	1579-1597	5+6+5+3 =19	
(86)	1598-1616	5+3+5+6 =19	
(87)	1617-1635	5+3+5+6 =19	
(88)	1636-1654	5+3+5+6 =19	1600-1700 वर्षों में
(89)	1655-1673	5+3+5+6 =19	37 मास वृद्धि
(90)	1674-1692	5+3+5+6 =19	
(91)	1693-1711	5+3+5+6 =19	
(92)	1712-1730	5+3+5+6 =19	1700-1800 वर्षों में
(93)	**1731-1746**	**5+3+5+3 =16**	37 मास वृद्धि
(94)	1747-1765	5+6+5+3 =19	
(95)	1766-1784	5+6+5+3 =19	
(96)	1785-1803	5+6+5+3 =19	
(97)	1804-1822	5+6+5+3 =19	
(98)	1823-1841	5+6+5+3 =19	
(99)	1842-1860	5+6+5+3 =19	1800-1900 वर्षों में
(100)	1861-1879	5+6+5+3 =19	36 मास वृद्धि
(101)	1880-1898	5+3+5+6 =19	

(102)	1899-1917	5+3+5+6 =19	
(103)	1918-1936	5+3+5+6 =19	
(104)	1937-1955	5+3+5+6 =19	
(105)	1956-1974	5+3+5+6 =19	1900-2000 वर्षों में
(106)	1975-1993	5+3+5+6 =19	37 मास वृद्धि
(107)	1994-2012	5+3+5+6 =19	
(108)	**2013-2028**	**5+3+5+3 =16**	
(109)	2029-2047	5+6+5+3 =19	
(110)	2048-2065	5+6+5+3 =19	

निष्कर्ष

(1)	3 बार	5+6+5+3		
(2)	7 बार	5+3+5+6	10×19 =190 वर्ष बाद	
(3)		5+3+5+3	16	
			206	
(4)	7 बार	5+6+5+3	10×19 = 190	
(5)	3 बार	5+3+5+6	16	
(6)		5+3+5+3	206	412
(7)	7 बार	5+6+5+3	14×19 = 266	
(8)	7 बार	5+3+5+6	16	
(9)		5+3+5+3	282	694
(10)	7 बार	5+6+5+3	14×19 = 266	
(11)	7 बार	5+3+5+6	16	
(12)		5+3+5+3	282	976

(13)	7 बार	5+6+5+3	10×19 =	190	
(14)	3 बार	5+3+5+6		16	
(15)		5+3+5+3		206	1182
(16)	7 बार	5+6+5+3	14×19=	266	
(17)	7 बार	5+3+5+6		16	
(18)		5+3+5+3		282	1464
(19)	7 बार	5+6+5+3	14×19 =	266	
(20)	7 बार	5+3+5+6		16	
(21)		5+3+5+3		282	1746
(22)	7 बार	5+6+5+3	14×19 =	266	
(23)	7 बार	5+3+5+6		16	
(24)		5+3+5+3		282	2028

(ई) लगभग 2000 वर्ष में भी कोई विशेष परिवर्तन नहीं, हजारों वर्ष पहले ज्योतिषी की गणना आज के वैज्ञानिक भी सही मान रहे हैं। कम्प्यूटर के सॉफ्टवेयर इस गणना को बहुत सुगमता से बना सकते हैं–1000 वर्ष बाद भी आगम, टीका, ग्रन्थ सुरक्षित रह सकते हैं उन्हीं के आधार से हम साधना कर सकते हैं। किसी भी (चन्द्र/सूर्य) एक प्रज्ञप्ति के लुप्त होने पर शेष साहित्य से उसका संकेत तो खोजा ही जा सकता है। अजमेर, सादड़ी, भीनासर आदि सम्मेलनों में जोधपुर के संयुक्त चातुर्मास में महापुरुषों ने विचारमंथन तो अवश्य ही किया था, पर उनके समक्ष ऊपर वर्णित गणना उपलब्ध नहीं हो पायी, जिससे विवाद का समापन नहीं हो पाया अन्यथा आगम को आगे रखकर चलने वालों के लिए किसी भी विवाद की संभावना रहती ही नहीं।

मुनि श्री कुन्दनमलजी म.सा. की 'अधिकमास यंत्रम्' पुस्तिका 22 जून, 1960 भीनासर सम्मेलन के पश्चात् प्रकाशित हुई। पिछले 52 वर्षों से प्रकाशित होने के बावजूद भी इसु पुस्तिका का सदुपयोग नहीं हो पाया। आगम गणना से इसके मिलान का प्रयास नहीं किया गया। गुरुकृपा से इस वर्ष यह सुन्दर अवसर आया जिसने पूरी तरह स्पष्ट कर दिया कि लम्बे समय की बात तो क्या 5-5 वर्षों के दो युग संवत्सर कभी भी साथ में नहीं आ सकते।

दो युग संवत्सर के बीच में 3 या 6 साल का अन्तराल अवश्यंभावी है।

हम इसे आगम से देखने का प्रयास करें। अनुयोगद्वार सूत्र, जम्बूद्वीप का प्रथम वक्षस्कार आदि में गणना की सामान्य रीति को दिग्दर्शित करते हुए 20 युग के 100 वर्ष कहे वह गणना की रीति है। उसका विशेष अभिप्राय भी है। 100 वर्ष में 3 या 4 युग इसी युग से आते हैं, उसी जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र के पहले वक्षस्कार में, अनुयोगद्वारसूत्र में उसे इसी अपेक्षा से कहा।

समवायांग जम्बूद्वीप (7) में -युग में 1830 दिन और 100 वर्ष में 36600 दिन बता दिए, 600 दिन का अन्तर तो आगम से ही स्पष्ट हो गया। 75 दिन के अन्तर का विवरण भले ही आज हमारे सामने उपलब्ध न हो, पर उसके नजदीक तो हम पहुँच ही गये।

ठाणांग 5/3, चन्द्रप्रज्ञप्ति आदि में जो युगसंवत्सर की बात कही गयी वहाँ कहीं भी यह नहीं आया कि 100 वर्ष में ये ही 20 युग संवत्सर होंगे, वहाँ तो केवल चन्द्र, चन्द्र, अभिवर्धित, चन्द्र और अभिवर्धित ये क्रम युगसंवत्सर में होता है इतना सा कथन है।

चन्द्रसंवत्सर में 354 12/62 दिन बताए जाते हैं
और अभिवर्धित संवत्सर 383 44/62 दिन

1 युग में 1830 दिन

20 युग संवत्सर में 36600 दिन होते हैं।

पर इसमें सूक्ष्म संशोधन का गणित लुप्त हो जाने से आकाश मण्डल में 75 दिन का घाटा रहता है।

100 वर्ष के 1200 माह
+40 अभिवर्धित (1 युग में 2 बार माह वृद्धि 20 युग में 40 बार)
1240

100 वर्ष के	1200 माह
95 साल में अभिवर्धित	35 माह
5 साल में युगसंवत्सर के	2
	1237 माह

आकाश मण्डल में 1236 या 1237 बार ही पूर्णिमा का चन्द्र आता है, 1240 बार नही आता। अतः सर्वज्ञ सर्वदर्शी प्रभु के द्वारा इसका सूक्ष्म गणित अवश्य प्रतिपादित किया गया। मुस्लिम वाले, पाश्चात्त्य संस्कृति वाले, ईसाई मत वाले, बौद्ध मत वाले, हिन्दू मत वाले इस गणित को जान सके और सर्वज्ञ नहीं जानें ऐसा कभी सम्भव नहीं, अतः चौमासे में वर्धित होने वाले मास को पौष का महीना और शेषकाल के वर्धित होने वाले काल को

आषाढ़ का महीना मान लें तो हमारी आगम गणना का चौमासा आज भी विशुद्ध रूप से सम्पन्न हो सकता है।

वि.सं. 1 से 100 तक 20 युगों में 17 युग 1831 दिन के और 3 युग 1801 दिन के आते हैं। 100 वर्षों में कुल 36,530 दिन होने की संभावना होती है।

वि.सं.	मास वृद्धि	दिन
1-5	2	1831 दिन
6-10	1	1801 दिन
11-15	2	1831 दिन
16-20	2	1831 दिन
21-25	2	1831 दिन
26-30	2	1831 दिन
31-35	2	1831 दिन
36-40	1	1801 दिन
41-45	2	1831 दिन
46-50	2	1831 दिन
51-55	2	1831 दिन
56-60	2	1831 दिन
61-65	2	1831 दिन
66-70	2	1831 दिन
71-75	1	1801 दिन
76-80	2	1831 दिन
81-85	2	1831 दिन
86-90	2	1831 दिन
91-95	2	1831 दिन
96-100	2	1831 दिन

1831×17   1801×3

=31127 + =5403

=36530 दिन

100 आदित्य वर्ष = 36525 दिन

----

5 दिन

औसत दिन कहे आगे संतुलित

अन्यथा 1800, 1801, 1802

या 1830, 1831, 1832 हो सकते हैं।

(ग) सामान्य सुलभ रीति

(1) इतनी सूक्ष्म गणित प्रत्येक व्यक्ति नहीं निकाल सकता तब हम पाक्षिक, सांवत्सरिक, चातुर्मासिक निर्णय कैसे करें ?

बिल्कुल सरल तरीका है, पंचांगों में बढ़े हुए मास को हम वहां बढ़ा हुआ नहीं मानकर (आषाढ़ को छोड़ कर) उसे अगले मास के रूप में गिनते जाएं और पौष या आषाढ़ को अभिवर्धित मान लें, इस पर पुनः यह प्रश्न खड़ा हो सकता है कि लौकिक पंचांग को ही स्वीकार करते हो तो उसी के अनुसार मास वृद्धि क्यों नहीं मान लें।

'आगमबलिया समणा णिग्गंधा' श्रमण निर्ग्रन्थ का बल आगम ही है। आगम के अर्थ को सांपोपांग नही समझ पाने से त्रुटियां होती हैं, कालान्तर में वे परम्परा के रूप में अपनी-अपनी पहचान के रूप में ऐसी मजबूती को धारण कर लेती है कि आगम की मुहर लगाकर भी हम आगम विरोधी प्रवृत्तियाँ कर लेते हैं (चातुर्मास पांच माह का होता ही नहीं। वर्षावास में तीर्थंकर भगवन्तों के समय भी मासवृद्धि की पूरी संभावना है। (विक्रम संवत् से तो सूची उपलब्ध है ही) वेदकालीन, वैदिक, लौकिक गणना में पौष का महीना कभी बढ़ता ही नहीं-बढ़ ही नहीं सकता। फिर भी उन अनन्त ज्ञानियों ने क्यों पौष की वृद्धि का आख्यान किया ? श्री जिनदास महत्तराचार्य महाराज ने श्री निशीथ चूर्णि में ऐसा लिखा है कि-**जत्थ अधिमासगो पडति वरिसे तं अभिवड्ढियवरिसं भण्णति जत्थ ण पडति तं चंदवरिसं सो य अधिमासगो जुगस्सगंते मज्झे वा भवति जइ अंते नियमा दो आसाढा भवन्ति अह मज्झे दो पोसा।** अर्थात् जिस वर्ष में अधिक मास आ पड़ा हो उसको अभिवर्धित वर्ष कहते हैं और जिस वर्ष में अधिक मास न आ पड़ा हो उसको चन्द्र वर्ष कहते हैं। वह अधिक मास युग के अन्त में और युग के मध्य भाग में होता है, यदि युग के अन्त में हो तो निश्चित दो आषाढ़ मास होते हैं और युग के मध्य भाग में हो तो निश्चित दो पौष मास होते हैं।

पर अभी लौकिक पंचांग को स्वीकार करके भी हम आगम की प्रधानता से ही

पर्वो की आराधना करते हैं-उदाहरणार्थ (1) इस वर्ष चैत्र शुक्ला त्रयोदशी- 5 अप्रेल, 2012 गुरुवार, 2 घटी 43 पल प्रात: 7 बजकर 33 मिनिट तक है। चतुर्दशी का क्षय है। दिगम्बर एवं मूर्तिपूजक सम्प्रदाय चैत्र शुक्ला बारस 4 अप्रेल, 12 बुधवार, महावीर जयन्ती मान रही है। बड़ी तिथि का क्षय न करने से वे त्रयोदशी को एक दिन पहले ही मान रहे हैं।

(2) पंचांगों में कई बार पक्ष 13 दिन, 16 दिन का होता है।

जैसे इस वर्ष पौष शुक्ला 12 जनवरी से 27 जनवरी-16 दिन का है। पर हम कभी भी पक्खी 16 दिन की नहीं करते।

(3) पंचांगों में उदय तिथि से गणना दिखायी देती है। हम पक्खी, चौमासी, संवत्सरी अस्त की घड़ियों से मान्य करते हैं। अनेक अवसरों पर लौकिक दीपावली, होली से हमारी पक्खी अलग आती है। यदि पंचांग को ही स्वीकार कर लिया जाय तो पक्ष के अन्तिम दिन जो लौकिक पंचांग में वर्णित है उसी दिन हमें पाक्षिक पर्व की आराधना करनी चाहिए। वहां हम आगम में वर्णित 2 माह में 1 तिथि के क्षय के नियम से 3 पक्खी 15 दिन की 1 पक्खी 14 दिन की अपवाद सहित करते हैं। तो फिर संवत्सरी जैसे महापर्व में आगम वर्णित मास वृद्धि को गौण करके लौकिक मास वृद्धि को प्राथमिकता क्यों दी जाती है ?

तीर्थंकरों के कल्याणक को लेकर भी कहा जाता है कि आगम गणित से उनका मेल नहीं बैठता, पर पौष और आषाढ़ की वृद्धि करने पर यह समस्या भी खड़ी नहीं होती है-जैसे कि (1) आषाढ़ कृष्णा त्रयोदशी संवत् 2068, 25 सितम्बर को मघा नक्षत्र था इस वर्ष उसी तिथि को (लौकिक में द्वितीय भाद्रपद कृष्णा त्रयोदशी 14 सितम्बर शुक्रवार को वही मघा नक्षत्र है।)

(2) कार्तिक कृष्णा अमावस्या 2068, 26 अक्टूबर, बुधवार को चित्रा नक्षत्र है, अगले दिन कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा 2068, 27 अक्टूबर, गुरुवार को स्वाति नक्षत्र है। अब यदि इस वर्ष आश्विन कृष्णा (लौकिक) को कार्तिक कृष्णा पक्ष मानें तो अमावस्या को हस्त नक्षत्र अल्प समय का है अगले दिन एकम्, 16 अक्टूबर, मंगलवार को चित्रा नक्षत्र मात्र 3 मिनट का है और स्वाति भी उसी दिन पूरा होने वाला है। अर्थात् दोनों में समानता है।

3-4 महीनों में पड़ने वाले कल्याणक, विशेष अन्तर के बिना उन्हीं नक्षत्रों के अपने-अपने नक्षत्रों से एक आगे या एक पीछे सामान्य नियम के अनुरूप आ ही जाते हैं। अत: वर्षावास को 4 महीने का करने की भगवान की आचारांग सूत्र 2/3/4 की आज्ञा को प्राथमिकता देकर निथीथ सूत्र 2/37 **जे भिक्खू णितियावासं वसइ वसंतं वा साइज्जइ।** जो भिक्षु मासकल्प व चातुर्मास कल्प की मर्यादा को भंग करके नित्य एक स्थान पर रहता है या रहने वाले का अनुमोदन करता है (उसे लघुमासिक प्रायश्चित्त आता

है) तथा बृहत्कल्प सूत्र में कहा है- "**कप्पइ णिग्गंथाण वा णिग्गंशीळ वा हेमंतगिम्हासु चारए**" ।।37।। निग्रन्थों और निग्रन्थियों को हेमन्त ओर ग्रीष्म ऋतु में विहार करना कल्पता है। इन सूत्रों की आराधना करना ही श्रेयस्कर है। लोकापवाद से कथंचित् ऐसा नहीं कर सके, 5 माह का ही चातुर्मास करना हो तब दीपावली आदि लौकिक तिथि से भले ही करे, पर महापर्व संवत्सरी को तो 50 वें दिन करके शुद्ध रूप से आराधित करना ही चाहिए।

संवत्सरी

क्रम	संवत्सरी	शुद्ध/अशुद्ध	विहार	प्रायश्चित्त	अपवाद
अ	50 वें दिन करने वाले	शुद्ध	आगम अनुरूप नहीं कर पाते	निशीथ 2/37 से लघुमास	आचारांग में वर्षा आदि से रुकने का अपवाद
ब	2 श्रावण होने पर भाद्रपद में और 2 भादवा होने पर दूसरे भाद्रपद में	अशुद्ध	आगम अनुरूप नहीं कर पाते	निशीथ 10/44 से गुरु चौमासी	

(आ) ऊपर अ बिन्दु में वर्णित 4 मास से अधिक रहने के दोष के साथ इस विशेष दोष का सेवन क्यों किया जाय ? अत: चन्द्र वर्ष हो, अभिवर्धित वर्ष हो, सभी 50-70 समवायांग की दोनों आज्ञा की आराधना करने वाले वर्षावास को 4 महीने का ही रखते हैं 5 महीने का मानने वाले कल्पसूत्र समाचारी के अनुसार 50 वे दिन आराधना कर आगम युग में वर्णित (तृतीय खण्ड में जिसे अच्छी तरह दिखाया जा चुका है) संवत्सरी की शुद्ध आराधना कर सकते हैं।

चौमासे में बढ़ने वाले मासों को नहीं मानकर भगवान ने पौष मास की वृद्धि का विधान क्यों किया ?

इस विषय में गम्भीरता पूर्वक विचार करने से ऐसा ही प्रतीत होता है कि वीतराग भगवान का प्रत्येक विधान राग-द्वेष से मुक्त होने के लिए ही है। एक स्थान पर विशेष रुकने से रागवर्धन की प्रबल संभावना रहती है, यह आगम के अनेक स्थलों से उद्घोषित होता है। वर्षाकाल में जीवों की विशेष विराधना उनके प्रति अन्तर में वैर-विरोध एवं द्वेष का निमित्त कारण बन सकता है। अत: वर्षाकाल में विहार का निषेध किया गया। बृहत्कल्प सूत्र-नो **कप्पइ णिग्गंथाण वा णिग्गंथीण वा वासावासासु चारए।** पर जिस कारण से निषेध

किया गया था वह प्राय: 4 महीने में समाप्त हो जाता है। कारण होने पर उसके पश्चात् भी रुकने का अपवाद स्वरूप कहा ही गया है और उत्सर्ग मार्ग में 4 महीने से ऊपर वर्षावास का पूरी तरह निषेध करने के लिए प्रभु ने सावण, भादवा, आसोज और कार्तिक महीने की वृद्धि को पूरी तरह अस्वीकार करके पौष मास की वृद्धि का विधान किया।

जिज्ञासु पुन: प्रश्न करता है तो फिर फाल्गुन, चैत्र आदि की वृद्धि को क्यों स्वीकार नहीं किया ?

लौकिक पंचांग में मास वृद्धि 28 माह से 35 माह के बीच में होती है। उसके औसत को भी अधिक परिवर्तित नहीं किया जा सकता। इसलिए उसे 30 से 36 मास के रूप में प्रभु ने दिग्दर्शित किया। अब कभी पौष बढ़ने के 2 साल बाद फाल्गुन की वृद्धि आए तो वह मात्र 26 महीने बाद हो जाएगी और उस फाल्गुन के 3 साल बाद पौष की वृद्धि का क्रम आए तो वह 40 माह का अन्तर हो जाएगा। उस फाल्गुन मास को आषाढ़ मास की वृद्धि में स्वीकार करने पर 30 और 36 मास का ही अन्तर रहेगा।

अत: निकटतम गणना से पौष और आषाढ़ मास की वृद्धि को स्वीकार किया गया।

(इ) जिज्ञासा यह भी उठ सकती है कि आगम में युगमध्य में पौष और युगान्त में आषाढ़ मास की वृद्धि का विधान है अत: दोनों बराबर बढ़ने चाहिये तथा प्रत्येक युग में आने चाहिये –

यहाँ हमें स्पष्ट ध्यान में ले लेना चाहिये कि विलुप्त हुए गणित में इसका समाधान होने की पूरी संभावना है, हम पूर्व में अच्छी तरह देख आए हैं कि प्रत्येक 19 वर्ष में 3 चातुर्मास में और 4 चातुर्मास के पूर्व बढ़ते हैं। जब आकाश में इसी प्रकार की गति है तो फिर एक महीना और अधिक कैसे होगा ? अत: यह विधान इस रूप में समझना चाहिये कि युग के आरम्भ से अर्थात् श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से युगमध्य पौष माह तक बढ़ने वाले मास को पौष के रूप में और वह युग का मध्य होने से युग मध्य में भी पौष का बढ़ना कह दिया तथा मध्य से अन्त तक बढ़ने वाले मासों को युगान्त आषाढ़ माह के रूप में सूचित किया गया, हर 19 वर्ष में दो बार ऐसे युग संवत्सर आते ही हैं।

(ई) जिज्ञासु जिज्ञासा करता है कि 20 युग के 100 वर्ष कहे, ऋतु संवत्सर से 1800×20= 36,000 और युग संवत्सर से 1830×20=36,600 इनमें से काल की गणना में किसे लेना ?

आगम की शैली से सुपरिचित गीतार्थ गुरु भगवन्त इसका रहस्य जानते हैं।

भगवती सूत्र शतक 8 उद्देशक 1 से देवता के पर्याप्त में वैक्रिय मिश्र का निषेध किया और प्रज्ञापना पद 16 में देवता में वैक्रिय मिश्र की नियमा होने से पर्याप्त में भी उसे कह दिया।

उपयोग द्वार, 32 बोल के बासठिए आदि में बाटे बहते जीव में चक्षुदर्शन का निषेध किया और कायस्थिति, जीवपज्जवा से बाटे बहते में चक्षुदर्शन ध्वनित कर दिया। चौदहवें गुणस्थान में लेश्या का अभाव सामान्य रूप से कह कर भी बंधी शतक (भगवती 26 से 30 तक) में उसे ले लिया (14 वें गुणस्थान में लेश्या ली।) पाखण्डी के 363 भेदों में 180 भेद क्रियावादी मिथ्यादृष्टि के कहे, किन्तु भगवती शतक 30 में उसे सम्यग्दृष्टि बता दिया आदि-आदि धारणाएँ अपेक्षा से ही ध्यान में ली जाती हैं। यहाँ भी दोनों युग के पीछे कोई न कोई रहस्य अवश्य रहा हुआ होगा। आदित्य संवत्सर 366 दिन उत्कृष्ट की अपेक्षा है जो 4 वर्ष में एक बार आता है, 3 वर्ष में 1-1 दिन कम 365 दिन होते हैं। वास्तव में प्रत्येक वर्ष 365¼ दिन होते हैं, उसे ही अपेक्षा से 366 दिन कह दिया। अत: 100 वर्ष में 36, 525 दिन होते हैं। ऋतु संवत्सर और उसके बने युग में 1800 दिन कहे, उसमें भी एक दिन प्राय: कम रह जाता है, वह 1801 दिन का है। युग संवत्सर को 1830 दिन का कहा, उसमें भी 1831 दिन आते हैं। कुल 20 युगों में प्राय: 17 युग 1830 दिन की गणना में आते हैं- 1831×17=31127 तथा 3 युग 1801 दिन के 3×1801=5403 । अत: 20 युग में 31,127+503=36530 दिन। यहाँ 100 वर्ष में 5 दिन बढ़ गये, 600 साल में 30 दिन बढ़े अत: 600 साल में एक माह वृद्धि कम कर 16×1831=29396, 4×1801=7204 (29396+7204=36500 दिन) 2500 साल में 921 महीने बढ़े (अधिकमासयंत्रम् 922) उसमें से 2501 का 1 घटाया। 36 के औसत में 2500 में 900, 2100 वर्ष में 1-1 बढ़ाने से 921 वर्ष अर्थात 2500 साल में भी यह गणना बराबर है। 20 युग के 100 वर्ष कहे। प्रमादवश हमने गलत अर्थ लगा लिया- 20 युग संवत्सर, इसलिए भ्रांतियाँ पैदा हो गई, युग अलग है, युग संवत्सर अलग। उनकी गणना 5+3+5+6 या 5+6+5+3 या 5+3+5+3 के अन्तराल में आती है। दो युग संवत्सर एक साथ आ ही नहीं सकते। दो युग संवत्सर के बीच में 3 या 6 वर्ष अन्तराल आता ही है। जिसे 2058 साल में ऊपर देखा है। युग के दिनों को 5 से गुणा कर 100 वर्ष के दिनों का विचार पहले किया जा चुका है। पूरी तरह स्पष्ट हुआ आगमकार कितनी विचक्षणता से कथन करते हैं। आगे उदाहरण सहित स्पष्ट करेंगे।

(उ) निकटवर्ती 4 युग संवत्सर से भली-भाँति ध्यान ले सकते हैं -

चन्द्र	2048	2059	2067	2078
चन्द्र	2049	2060	2068	2079
अभिवर्धित	2050 पौष/	2061 पौष/	2069 पौष/	2080 पौष/

	भाद्रपद	श्रावण	भाद्रपद	श्रावण
चन्द्र	2051	2062	2070	2081
अभिवर्धित	2052/2053	2063/2064	2071/2072	2082
	आषाढ़/आषाढ़	आषाढ़/ज्येष्ठ	आषाढ़/आषाढ़	आषाढ़/ज्येष्ठ
प्रारम्भ श्रावण कृष्णा प्रतिपदा	27 जुलाई 91	25 जुलाई2002	27 जुलाई 2010	24 जुलाई 2021
अन्त आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा	30 जुलाई 96	30 जुलाई2007	31 जुलाई 2015	29 जुलाई 2026
	1831 दिन	1832 दिन	1831 दिन	1832 दिन

चौमासी 29 जुलाई तक 1830 दिन चौमासी तक 1831 दिन

आगम गणित एवं लौकिक गणित का जो तृतीय खण्ड में अन्तर बताया गया वह औधिक (सामान्य-स्थूल दृष्टि) की अपेक्षा कहा गया, गहराई से देखने पर ज्ञात होता है कि लौकिक गणना की सूक्ष्मता के कतिपय सूत्र हमारे पास उपलब्ध नहीं होने से ऐसा प्रतीत होता है। वास्तव में दोनों में कोई विशेष दूरी नहीं है। भगवान को चौमासे में मास वृद्धि किसी भी दृष्टि से इष्ट नहीं, साधक वर्ग के हित में इसीलिए चातुर्मास में मास वृद्धि को पूरी तरह अस्वीकार कर पौष मास की वृद्धि का संकेत किया। यह इन 3-4 प्रमाणों से और भी स्पष्ट हो जाता है।

(ऊ) गत 19 वर्षों से गणित आगम की गणना की पुष्टि कर रहा है। ऊपर की तालिका को विगतवार नीचे बताया जा रहा है :-

(सभी गणना व्यंकटेश पंचांग से)

युग संवत्सर 5 वर्ष (1831 दिन)

दिन	लौकिक	विक्रम	ईस्वी	श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से	श्रावण कृष्णा प्रतिपदा	दिन
354 **12/62**	चन्द्र वर्ष	2048-49	1991-92	27-7-91	15-7-92	353 दिन
354 **12/62**	चन्द्र वर्ष	2049-50	1992-93	15-7-92 (फरवरी 29)	04-7-93	355 दिन
383 **44/62**	अभिवर्धित (भादवा)	2050-51	1993-94	4-7-93	23-7-94	384 दिन
354 **12/62**	चन्द्र वर्ष	2051-52	1994-95	23-7-94	13-7-95	355 दिन

383 44/62	अभिवर्धित (आषाढ़)	2052-53	1995-96	13-7-95	31-7-96 (फरवरी 29)	384 दिन
1830 दिन						1831

युग 5 वर्ष (1801 दिन)

चन्द्र वर्ष	2053-54	1996-97	31-7-96	20-7-97	354
चन्द्र वर्ष	2054-55	1997-98	20-7-97	10-7-98	355
अभिवर्धित ज्येष्ठ	2055-56	1998-99	10-7-98	29-7-99	384
चन्द्र	2056-57	1999-2000	29-7-99	17-7-2000	354
चन्द्र	2057-58	2000-2001	17-7-2000	6-7-2001	354
					1801 दिन

अप्पणा सच्चमेसेज्जा अपने द्वारा सत्य की अन्वेषणा करने की प्रेरणा प्रदान करने वाले भगवान सत्य का ही प्रतिपादन करते हैं। '**सच्चं खु भगवं**' सत्य ही तो भगवान हैं। उस भगवान की वाणी (सच्चं अणुत्तरं.......।) भले ही क्षयोपक्षम की अल्पता से हम नहीं समझ पाते, यह हमारा दुर्भाग्य है। भगवत् वाणी तो पूरिपूर्ण ही है।

अनुयोगद्वार सूत्र में -**पंच संवच्छराइं=जुगे** और यही सूत्र जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र के प्रथम वक्षस्कार में-**पंच संवच्छराइ=जुगे**।

युग संवत्सर के पश्चात् अगले युग संवत्सर में 6 वर्ष का जब अन्तराल पड़ता है उसके 5 वर्षो को ले लेना। अथवा 3 वर्ष का अन्तराल पड़ता है, वो 3 वर्ष और युगसंवत्सर के प्रारम्भिक दो वर्षो के मेल से बनने वाले 5 वर्षो में अभिवर्धित वर्ष 1 ही आयेगा। लगभग 1800 दिन ही आएंगे-इसे भी आगे देखने का प्रयास करेंगे।

जब दो अभिवर्धित वर्ष वाले युग की चर्चा होगी तब उसे युग संवत्सर कहा जायेगा उसमें लगभग 1830 दिन आएंगे। युग एक व्यापक शब्द हो गया, जिसमें दोनों सम्मिलित हैं-

युग (5 वर्ष)

सामान्य युग	**युग संवत्सर**
1 अभिवर्धित वर्ष सहित	2 अभिवर्धित
4 चन्द्र वर्ष वास	व 3 चन्द्र वर्ष (चन्द्र, चन्द्र, अभिवर्धित, चन्द्र, अभिवर्धित)

लगभग 1800 दिन इस लक्षण वाले युग में 1830 दिन आएंगे।

2500 वर्ष में गणना करें तो 3 शताब्दियों में प्रत्येक में 36 मास वृद्धि

22 शताब्दियों में प्रत्येक में 37 मास वृद्धि होने से कुल 922 महीने बढ़े।

प्राय: 37 मास वृद्धि वाली शताब्दी में 11 युग संवत्सर × 5=55 वर्ष = 20130 दिन

15×3 (चं,चं, अभि) = 45 वर्ष (15 अभि 30 चन्द्र) 16381 दिन

36511 दिन

जिसमें 12 युग संवत्सर होंगे उसमें लगभग 1 माह वृद्धि से लगभग 29½ दिन बढ़ जाएंगे।

∴ 36540 दिन

इन दोनों के औसत से

36511

36540

=73051 73051÷2 = 36525 दिन

वर्तमान में आदित्य वर्ष में 36525 दिन होते हैं। अत: पूरी तरह स्पष्ट हुआ कि वर्तमान लौकिक गणित पूरी तरह से आगम गणित के निकट ही है।

युग संवत्सर

वि. सं.	ईस्वी सन्	श्रावण कृष्णा प्रतिपदा	श्रावण कृष्णा प्रतिपदा	दिन
59/60	2002-2003 चन्द्र	25.7.2002	14.7.2003	354 दिन
60/61	2003-2004 चन्द्र	14.7.2003	3.7.2004	355 दिन
61/62	2004-2005 अभिवर्धित श्रावण/पौष	3.7.2004	22.7.2005	384 दिन
62/63	2005-2006 चन्द्र	22.7.2005	11.7.2006	354 दिन
63/64	2006-2007 अभिवर्धित ज्येष्ठ/पौष	11.7.2006	30.7.2007	384 दिन
				1831 दिन

समवायांग सूत्र के 61, 62, 67 वें समवाय में बताया है

1 युग में 61 ऋतुमास

1 युग में 62 चन्द्र मास

1 युग में 67 नक्षत्र मास

और **जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र** के 7 वें वक्षस्कार में बताया –1 युग में 1830 दिन

पूर्व के 3 वर्ष और ऊपर वर्णित युग संवत्सर के 2 वर्ष मिलाने पर–

वि. सं.	
56/57	354 दिन
57/58	354 दिन
58/59	384 दिन
59/60	354 दिन
60/61	355 दिन
	1801 दिन ही आते हैं।

अन्तिम 3 वर्ष

64/65	2007-2008 चन्द्र	30.7.07	19.7.08	355 दिन
65/66	2008-2009 चन्द्र	19.7.08	8.7.09	354 दिन
66/67	2009-2010 अभिवर्धित	8.7.09	27.7.10	384 दिन

(ऋ) आगामी 16 वर्षों का संक्षेप दिग्दर्शन–

वि. सं.	ईस्वी			
67/68 से 72/73	2010/11 से 15/16	युग संवत्सर	27.7.10 से 1.8.15	1831 दिन
72/73 से 77/78	15/16 से 20/21	युग	1.8.15 से 6.7.20	1801 दिन
77/78 से 78/79	20/21 से 21/22	अभिवर्धित	6.7.20 से 24.7.21	383 दिन
78/79 स 83/84	21/22 से 25/26	युग संवत्सर	24.7.21 से 30.7.26	1831 दिन

कितना सपष्ट है सामान्य युग में 1801 दिन (आगम में 1800)

युग संवत्सर वाले युग में 1831 दिन (आगम में 1830 दिन) यह आकाश मण्डल का चक्र सैकड़ों, हजारों नहीं, पल्योपम, सागरोपम नहीं, अनन्त-अनन्त काल चक्रों से चल रहा है। हमारे उन ज्ञानी संत भगवन्तों ने, ऋषियों ने अपने ज्ञान बल से प्रकट किया, प्रस्तुत किया। सर्वज्ञ के ज्ञान में वह स्पष्ट ही था। वे भली-भाँति इस विज्ञान के वेत्ता थे।

आकाश मण्डल के परिभ्रमण को और सूक्ष्म रूप से संशोधित करने के लिए ही क्षय मास- उसके दोनों और 5-5 महिने में अधिक मास का विवेचन किया-इससे क्रम में परिवर्तन करना द्योतित होता है।

5-6-5-3

को 5-3-5-6 में करना।

200 वर्षों में- 100 वर्ष में 12 युग संवत्सर

100 वर्ष में 12 युग संवत्सर से 36,525 दिनों का औसत भी बिठाना आवश्यक था। अत: कभी 19×10= 190 वर्ष बाद 5-3-5-3 और कभी 19×14= 266 वर्षों के बाद 5-3-5-3 लगाकर पूरा सन्तुलन किया। सर्वज्ञ भगवान ने चातुर्मास की इस मास वृद्धि को पूरी तरह अस्वीकार कर पौष ही बढ़ाया। जब भी क्षय मास आता है उसके पीछे 5-5 महीने के अन्दर 2 अधिक मास होते हैं तब इस गणना से पुन: परिवर्तन आता है।

(लृ) तृतीय खण्ड के ('क' अ-2) विभाग में क्षयमास के सन्दर्भ में कहा गया था कि लौकिक गणित से क्षय मास आता है, पर आगम गणित से नहीं। क्षय मास का कारण लगातार 19 वर्षों की शृंखला के क्रम को परिवर्तित करना पूर्व के बिन्दु में निवेदन किया जा चुका है। क्योंकि क्षय मास के पूर्व के 5 महीनों में और पश्चात् के 5 महिनों में 1 पहले, 1 पीछे कुल 2 मास की वृद्धि अवश्य होती है। मास वृद्धि के मासों में परिवर्तन 5-6-5-3 के क्रम को 5-3-5-6 में परिवर्तित करने के लिए अथवा 5-3-5-3 के क्रम को 1 बार लाकर गणना में सूक्ष्म अन्तर को संशोधित करने के लिए क्षय मास आता है 2500 वर्षों में कुल 44 क्षय मास आए।

क्र.	संवत्	क्षय मास
1.	57	पौष
2.	179	कार्तिक
3.	198	मार्गशीर्ष
4.	320	कार्तिक
5.	339	मार्गशीर्ष
6.	461	कार्तिक
7.	480	मार्गशीर्ष
8.	526	कार्तिक
9.	545	मार्गशीर्ष

10.	564	पौष
11.	583	मार्गशीर्ष
12.	602	मार्गशीर्ष
13.	621	पौष
14.	667	कार्तिक
15.	686	पौष
16.	808	कार्तिक
17.	827	मार्गशीर्ष
18.	949	कार्तिक
19.	968	मार्गशीर्ष
20.	1109	मार्गशीर्ष
21.	1250	मार्गशीर्ष
22.	1315	मार्गशीर्ष
23.	1334	पौष
24.	1353	मार्गशीर्ष
25.	1372	मार्गशीर्ष
26.	1391	मार्गशीर्ष
27.	1437	कार्तिक
28.	1456	मार्गशीर्ष
29.	1578	कार्तिक
30.	1597	पौष
31.	1738	मार्गशीर्ष
32.	1879	मार्गशीर्ष
33.	2020	मार्गशीर्ष
34.	2039	पौष
35.	2085	मार्गशीर्ष
36.	2104	मार्गशीर्ष
37.	2142	कार्तिक
38.	2161	मार्गशीर्ष

39.	2180	पौष
40.	2226	मार्गशीर्ष
41.	2245	पौष
42.	2283	मार्गशीर्ष
43.	2302	मार्गशीर्ष
44.	2367	मार्गशीर्ष

इससे भली-भाँति स्पष्ट है कि क्षय मास कार्तिक, मिगसर, पौष ही होते हैं। युगमध्य के पूर्व ही क्षयमास होता है। अगला क्षय मास 2085 में मार्गशीर्ष का बतलाया गया है उसके 1 मास पूर्व कार्तिक और 3 मास पश्चात् चैत्र की वृद्धि 'अधिकमासयंत्रम्' पुस्तिका में बताई गई है। उस समय तक 5-6-5-3 का क्रम चल रहा था। उसके पश्चात् 2086 से 5-3-5-6 का इसलिए मास को क्षय करना पड़ा। आगम की गणना के अनुसार लौकिक पंचांग से निम्न भिन्नता होगी।

पक्ष क्रम	लौकिक पंचांग	आगम गणना
14.	2085 प्रथम कार्तिक बदि	कार्तिक बदि
15.	प्रथम कार्तिक शुदि	कार्तिक शुदि
16.	द्वितीय कार्तिक बदि	मिगसर बदि
17.	द्वितीय कार्तिक शुदि(मिगसर मास क्षय)	मिगसर शुदि
18	पौष बदि	पौष बदि
19.	पौष शुदि	पौष शुदि

इस प्रकार स्पष्ट है कि कार्तिक, मार्गशीर्ष या पौष के क्षय होने पर श्रावण या उसके बाद का महीना अवश्य बढ़ता है। लौकिक चौमासा 2500 वर्षों में कार्तिक का 10 बार क्षय को छोड़कर मार्गशीर्ष या पौष बढ़ने पर 5 मास का होता है और फिर मार्गशीर्ष या पौष का क्षय होने पर वह वृद्धि समाप्त होकर मास बराबर हो जाते हैं। आगे की वृद्धि फाल्गुन या चैत्र मास आदि शुद्ध वृद्धि के रूप में गिने जाते हैं। आगम की गणना मास क्षय का निषेध करती है, यह भी पूरी तरह स्पष्ट करती है कि चौमासे में मास वृद्धि नहीं करना ही भगवान की आज्ञा है। वर्षावास 4 महीने का करने पर तथा पूर्व मास की वृद्धि नहीं करने पर मास को क्षय करने की नौबत ही नहीं आ सकती।

लौकिक पंचांग के अनुसार तो जिस चन्द्रमास में सूर्य दो संक्रांतियों का परिवर्तन करे वह क्षय मास कहलाता है। क्षय मास कम से कम 19 वर्ष की दूरी पर होता है और अधिक से अधिक 141 वर्ष की दूरी पर होता है। इन दोनों के बीच के समय में भी हो सकता

!, लेकिन इनसे कम या अधिक समय नहीं लेता है। जब क्षय मास होता है तब उसके पाँच मास पहले और पाँच मास पश्चात् के समय में अधिक मास होते हैं अर्थात् क्षय मास के आगे-पीछे दोनों तरफ अधिक मास होता है।

कार्तिक, मार्गशीर्ष और पौष ये तीन मास ही क्षय होते हैं। इनके अतिरिक्त अन्य मास क्षय नहीं होते हैं।

किन्तु आगम में क्षय मास का कहीं कोई विधान नहीं। इससे भी पूरी तरह स्पष्ट हो जाता है कि सर्वज्ञ प्रभु ने चातुर्मास में मास वृद्धि को पूर्णरूपेण अस्वीकार कर चातुर्मास में जीव रक्षा के लिए हिंसा आदि आस्रवों से बचने के लिए वर्षा की प्रधानता से ही रुकने का विधान किया और उस समय 70 वें समवाय की आज्ञा पालन में दोनों ओर से कोई बाधा ही उपस्थित नहीं होती।

(ए) संवत् 2069 से अगले 12 वर्ष में होने वाली मास वृद्धि को भगवान की आज्ञा के अनुसार हम पौष अथवा आषाढ़ की वृद्धि के रूप में स्वीकार कर लें तो हम भगवद् आज्ञा की विधिवत् पालना कर सकते हैं ।

विक्रम संवत्	लौकिक	आगम
2069	भाद्रपद	पौष
2072	आषाढ़	आषाढ़ में संवत्सर का अन्त होने से आगम का 2071 आषाढ़
2075	ज्येष्ठ	2074 आषाढ़
2077	आश्विन	पौष
2080	श्रावण	पौष

वर्षावास 4 महीने का ही होगा और संवत्सरी भगवद् आज्ञा के अनुसार 50-70 दिन में ही होगी। उपर्युक्त सारी गणित से यह भली-भाँति स्पष्ट हो गया कि आगमीय विधान से संवत्सरी हमेशा भादवा शुक्ला पंचमी को ही आएगी। भले ही लौकिक पंचांग में 2 सावन होने पर उस समय द्वितीय सावन हो अथवा 2 भादवा होने पर प्रथम भादवा। 'अधिकमासयंत्रम्' पुस्तिका से यह भली-भाँति स्पष्ट हो चुका है कि 10 पूर्वीकाल एवं सामान्य पूर्वधर काल में भी चातुर्मासों में मास वृद्धि होती थी और उसी के अनुरूप हम यह मान सकते हैं कि तीर्थंकर भगवन्त, केवली भगवन्त और श्रुत केवली भगवन्तों के समय में भी चातुर्मास में मासवृद्धि होती थी, पर वी.नि. 1000 तक 5 मास के चौमासे में 2 श्रावण होने पर भादवा को संवत्सरी (अर्थात् पूर्व में 80 दिन, पीछे 70 दिन) 2 भादवा होने पर दूसरे भादवा में पर्युषण (पूर्व में 50 दिन, पीछे 100 दिन) इसकी रत्तीभर भी गंध नहीं है और होती

भी कहाँ से-आचारांग 2/3/4 "अह पुणेवं जाणेज्जा-चत्तारि मासा वासाणं वितिक्कंता, हेमंताण य पंच-दस-रायकप्पे परिवुसिते।" यदि साधु-साध्वी यह जाने कि वर्षाकाल के चार मास व्यतीत हो चुके हैं, अत: वृष्टि न हो तो (उत्सर्ग-मार्गानुसार) चातुर्मासिक काल समाप्त होते ही दूसरे दिन अन्यत्र विहार कर देना चाहिये।

यहाँ आचारांग सूत्र में भी सिर्फ 4 मास के चौमासे की बात है, इससे यह सूर्य के प्रकाश की भाँति पूरी तरह स्पष्ट हो जाता है कि लौकिक पंचांग से 2 श्रावण होने पर भादवा में और 2 भादवा होने पर दूसरे भादवा में एक बार भी पर्युषण उन तीर्थंकरों, केवलियों, श्रुतकेवलियों, 10 पूर्वधरों और सामान्य पूर्वधरों ने भी नहीं किया। इसीलिए कल्पसूत्र की स्थविरावली 'चतुर्थ खण्ड' में जिसके सूत्र दिए जा चुके हैं, वहाँ इस पर बहुत जोर दिया कि हमें 50 वें दिन '**सवीसइराए मासे**' 1 मास 20 दिन व्यतीत होने पर ही संवत्सरी करनी है।

(ए) हम चतुर्थ खण्ड में देख ही चुके हैं अपनी-अपनी शाखा-प्रशाखा की अपनी-अपनी मान्यता की कीर्ति विस्तृत करने की होड़ में जब आगम वाणी गौण होने लगी, भण्डारों और संग्रहालयों में कैद होने लगी तब यह विडम्बना, तब यह समस्या विकराल रूप धारण करने लगी। वस्तीवास, चैत्यवास के साथ में गृहस्थियों का सम्पर्क बढ़ने लगा, साधना में शिथिलता आने लगी तब विहार स्थगित करने के छोटे से छोटे अवसर का लाभ उठाकर एक स्थान पर रहकर सुखलोलुपता का पोषण किया जाने लगा, जिसके लिए शास्त्र पूरी तरह निषेध करता हुआ कहता है-

सुहसायगस्स समणस्स, सायाउलगस्स णिगामसाइस्स।
उच्छोलणापहोयस्स, दुल्लहा सुगइ तारिसगस्स ।।

-दशवैकालिक 4.26

जो साधु सुख की इच्छा वाला है, साता सुख के लिए जो मन की अधीरता के कारण आकुल रहता है, समय से अधिक सोता है और मुलायम बिस्तर पर आराम से सोना चाहता है, बार-बार पैर आदि धोता है उसकी सुगति दुर्लभ होती है, और

संवच्छरं वावि परं पमाणं, बीरां च वासं ण तहिं वसिज्जा।
सुत्तस्स मग्गेण चरिज्ज भिक्खू, सुत्तस्स अत्थो जह आणवेइ ।।11।।

-दशवै. दूसरी चूलिका

जिस गाँव में मुनि, साधु मर्यादानुसार उत्कृष्ट प्रमाण तक रह चुका हो (अर्थात् वर्षाकाल मे चातुर्मास और शेष काल में एक मास रह चुका हो) वहाँ दुगुना काल (दो चातुर्मास और दो मास) का अन्तर किए बिना नहीं रहे। भिक्षु सूत्रोक्त मार्ग से चले। सूत्र का अर्थ जिस प्रकार आज्ञा दे उसके अनुसार चले। तो बृहत्कल्प सूत्र में हेमन्त एवं ग्रीष्म में

निर्ग्रन्थ के लिए एक मास, निर्ग्रन्थिनी के लिए दो मास की आज्ञा फरमाई –**से गामंसि वा जाव रायहाणिंसि वा सपरिक्खेवंसि अबाहिरियंसि कप्पइ णिग्गंथाणं हेमंतगिम्हासु एगं मासं वत्थए ।। 6।। से गामंसि वा जाव रायहाणिंसि वा सपरिक्खेवंसि सबाहिरियंसि कप्पइ णिग्गंथाणं हेमंतगिम्हासु दो मासे वत्थए, अंतो एगं मासं बाहिं एगं मासं, अंतो वसमाणाणं अंतो भिक्खायरिया बाहिं वसमाणाणं बाहिं भिक्खायरिया।।7।। से गामंसि वा जाव रायहाणिंसि वा सपरिक्खेवंसि अबाहिरियंसि कप्पइ णिग्गंथीणं हेमंतगिम्हासु दो मासे वत्थए ।।8।। से गामंसि वा जाव रायहाणिंसि वा सपरिक्खेवंसि सबाहिरियंसि कप्पइ णिग्गंथीणं हेमंतगिम्हासु चत्तारि मासे वत्थए, अंतो दो मासे, बाहिं दो मासे, अंतो वसमाणीणं अंतो भिक्खायरिया बाहिं वसमाणीणं बाहिं भिक्खायरिया** ।।9।। बृहत्कल्पसूत्र के प्रथम उद्देशक में हेमंत और ग्रीष्मकाल में निर्ग्रन्थ और निग्रन्थिनी को कितना समय ठहरना कल्पता है। इस विवेचन के पीछे यही उद्देश्य रहा हुआ है कि

बहता पानी निर्मला पड़ा गंदीला होय
साधु तो रमता भला, दाग न लागे कोय

और स्थान-स्थान पर '**संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ**' संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण करे।

आचारांग सूत्र 2/2/2/7 से "**आगंतारेसु वा जे भयंतारो उडुबद्धियं वा वासावासियं वा कप्पं उवातिणित्ता तत्थेव भुज्जो संवसंति अयमाउसो कालातिक्कंतकिरिया वि भवति।**" अर्थात् जिनपथिकशाला आदि में साधु भगवन्तों ने ऋतुबद्ध मासकल्प (शेषकाल) या वर्षाकाल कल्प (चातुर्मास) बिताया है, उन्हीं स्थानों में अगर वे बिना कारण पुनः पुनः निवास करते हैं तो वह शय्या कालातिक्रान्त क्रिया दोष से युक्त हो जाती है।

से आगंतारेसु वा जे भयंतारो उडुबद्धियं वा वासावासियं वा कप्पं उवातिणावित्ता तं दुगुणा दुगुणेण अपरिहरित्ता। तत्थेव भुज्जो संवसंति अयमाउसो उवट्ठाणकिरिया यावि भवति।

जिन पथिकशाला आदि में, जिन साधु भगवन्तों ने ऋतुबद्ध कल्प या वर्षावासकल्प बिताया है, उससे दुगुना-दुगना काल अन्यत्र बिताये बिना पुनः वहाँ आकर ठहर जाते हैं तो उनकी वह शय्या उपस्थान क्रिया दोष से युक्त हो जाती है।

ये सारे विधान उसी पवित्र भावना को प्रदर्शित करते हैं जिसके लिए प्रभु ने वर्षावास में महीना बढ़ाने का पूरी तरह निषेध किया।

औपपातिक सूत्र में भी साधु की उपमा का वर्णन करते हुए कहा- **अममा,**

अकिंचणा, छिण्णगंथा, छिण्णसोया, निरूवलेवा, कंसपाईव मुक्कतोया, संख इव निरंगणा, जीवो विव अप्पडिहयगई, जच्चकणगं पिव जायरुवा, आदरिसफलगा इव पागडभावा, कुम्मो इव गुत्तिंदिया, पुक्खरपत्तं व निरूवलेवा, गगणमिव निरालंबणा, अणिलो इव निरालया........।

ममत्वरहित, परिग्रह रहित, संसार से जोड़ने वाले पदार्थों से विमुक्त , लोक प्रवाह में नहीं बहने वाले, कर्मबंध के लेप से राहित कांसे के पात्र में जैसे पानी नहीं लगता, उसी प्रकार स्नेह आसक्ति आदि के लगाव से रहित, शंख के समान निरंगण-क्रोधादि से अप्रभावित, जीव के समान अप्रतिहत, शुद्ध स्वर्ण के समान जातरूप-निर्दोष चारित्र के प्रतिपालक, दर्पणपट्ट के सदृश प्रकटभावयुक्त, कछुए की तरह गुप्तेन्द्रिय, कमल् पत्र के समान निर्लेप, आकाश के सदृश निरालंब, वायु की तरह निरालय-गृहरहित.......ऐसे अनेक विशेषणों से युक्त संत भगवन्त साधना में तल्लीन रहते हैं। चौथे आरे में 22 वें तीर्थंकर के समय भी-ज्ञाताधर्मकथांगसूत्र 5 वां अध्ययन कहता है-

तं संय खलु देवाणुप्पिया अम्हं कल्लं सेलगं रायरिसिं आपुच्छित्ता पाडिहारियं पीढफलगसेज्जासंथारयं पच्चपिणित्ता सेलगस्स अणगारस्स पंथयं अणगारं वेयावच्चकरं ठवेत्ता बहिया अब्भुज्जएणं जाव विहरित्तए।

अर्थात् हे देवानुप्रियों ! हम लोगों को यही कल्याण कारक है कि प्रात: होते ही हम लोग शैलक राजऋषि से पूछकर और प्रत्यर्पणीय पीठ फलक शय्या संस्तारक को वापिस देकर तथा शैलक राजऋषि की वैयावृत्ति करने के लिए पंथक अणगार को रखकर यहाँ से तीर्थंकर की दी हुई आज्ञा के अनुसार प्रगृहीत तीर्थंकर की आज्ञा को अंगीकार कर बाहर देशों में विहार करें।

इन प्रसंगों में विचरण विहार की चर्चा स्पष्ट ही द्योतित होती है।

भगवान ने वर्षा के कारण से रुकने का विधान किया। अत: चौमासे का मासवर्धन उन्हें किसी भी हाल में स्वीकार नहीं, पर भक्तों के आग्रह से, भक्तों के राग से मत, सम्प्रदाय के मोह से जहाँ कहीं तो हमेशा के लिए ही एक स्थान पर रहने लगे वहाँ कइयों ने आगम टिप्पणक को लुप्त मान 5 मास के चौमासे करने प्रारम्भ कर दिए और तभी से यह विवाद खड़ा हुआ कि दूसरा श्रावण या भादवा अथवा पहला भादवा या दूसरा भादवा इसलिए हमारे गीतार्थ गुरु भगवन्त फरमाते हैं कि -हमारे वाचन के अनुसार अधिक मास में पर्वाराधन की चर्चा विक्रम की 14 वीं-15 वीं शताब्दी से प्रारम्भ हुई है। ठीक ही है इसी युग से कल्पसूत्र की टीकाएँ उपलब्ध होती हैं। खरतरगच्छ, तपागच्छ आदि के विभाग से उसी समय से यह विकराल ताण्डव प्रारम्भ हुआ है। 'अधिकमासयंत्रम्' पुस्तक का उपयोग कर

(आज तो इससे भी अधिक वैज्ञानिक साधन नगर-नगर में उपलब्ध हैं) कोई भी विचारक भली प्रकार इसका निर्णय कर सकता है। गुरुकृपा से अनेक प्रकार का रहस्य प्रकट हुआ, उलझी हुई गुत्थियाँ सुलझी जिसे इस लम्बी लेखमाला में प्रदर्शित किया गया है।

जिज्ञासु जिज्ञासा करता है कि उन गीतार्थ बहुश्रुत आचार्यों ने, उपाध्यायों ने, प्रवर्तकों ने, स्थविरों ने इन सब की चर्चा क्यों नहीं की? सम्मेलनों में इन तथ्यों की अनदेखी क्यों हुई ? पूर्व में यथावसर संकेत कर ही चुके हैं 'अधिकमासयंत्रम्' पुस्तक भीनासर सम्मेलन के पश्चात् जैन मुनि कुन्दनमलजी म.सा. द्वारा सम्पादित जैन स्थानक गुलाबपुरा से 22 जून 1960 को सम्पादकीय कलम के साथ प्रकाशित हुई। 52 साल से प्रकाशित पुस्तक का अब ही उपयोग क्यों किया गया ? इसका समाधान भूमिका में किया जा चुका है।

जिस दिन भी आगम की उक्ति, आगम का कथन हमें ध्यान में आवे हमें आगमोचित विचार को सहर्ष स्वीकार कर लेना चाहिए। जैसा कि बहुश्रुत पूज्य समर्थमलजी म.सा. के लिए कहा जाता है- "पूज्य समर्थमलजी म.सा. का जीवन आगमनिष्ठ एवं आगम समर्पित कहा जाता है। उन्होंने अपने जीवनकाल में कई पारम्परिक विचारों में परिवर्तन किए। आगमज्ञ श्रावकों के द्वारा भी जब आगम पाठों के आधार से प्राचीन विचारों की अनुपयुक्तता बताई गई तो उसे अच्छी तरह ध्यान में लेकर तुरन्त उन विचारों को छोड़कर आगमोचित विचारों को सहर्ष स्वीकार किया। इसमें स्वयं के अपमान का अनुभव नही किया। सम्मेलनों में सांवत्सरिक प्रतिक्रमण सम्बन्धी, कायोत्सर्ग सम्बन्धी चर्चाओं के प्रसंगों पर विचार परिवर्तन के लिए बाध्य किए जाने पर वे महापुरुष विनम्र शब्दों में यही निवेदन करते रहे कि जिन आगमों के आधार पर गृहत्याग किया है तो उन्हें आगे रखना एक नैतिक कर्त्तव्य होता है। आगमों के आशयों को कोई भी समझा दे तो मैं विचार परिवर्तन करने को तैयार हूँ। संघ को मेरी जिद्‌द नजर आवे तो संघ मुझे दण्ड दे सकता है।"

शायद उन महापुरुषों को श्रमण संघ में मिलाने के उद्‌देश्य से सादड़ी सम्मेलन में चर्चा हुई और उसी प्रसंग में आचार्य भगवन्त पूज्य गुरुदेव का प्रारम्भिक प्रेरक पत्र। आचार्य भगवन्त पूज्य गुरुदेव हस्तीमलजी म.सा. एवं तत्कालीन आचार्य आदि अनेक संत भगवन्त भी आगमनिष्ठ ही थे, आगम को ही आगे रखकर चलने वाले थे, पर छापेखाने के कम प्रचलन से , पुस्तकों की उपलब्धि कम होने से उन महापुरुषों के समक्ष आरे के परिवर्तन, कालचक्र के परिवर्तन की तिथियाँ विवादास्पद ही रहीं। आगम युग वी.नि. 1000 तक चौमासे में मासवृद्धि की सूचक सामग्री उपलब्ध नहीं हो पाई। वे आगमयुग में पौष और आषाढ़ मास की वृद्धि मान चौमासे 4 महीने से अधिक नहीं मानते थे। पर लौकिक में उस समय भी चौमासे में मासवृद्धि होती थी और आगमकारों ने उस वृद्धि को पूरी तरह

अस्वीकार कर पौष का ही महीना बढ़ाया। इसलिए लौकिक 2 सावन होने पर उनकी संवत्सरी दूसरे सावन में होने पर भी आगम के अनुसार भादवा सुदी पंचमी की ही कहलायी और लौकिक 2 भादवा होने पर प्रथम भादवा में संवत्सरी करने पर भी उनकी संवत्सरी भादवा सुदी पंचमी की ही कहलायी-50-70 के नियमों की पालना हुई, चौमासा 4 महीने का ही रहा और लौकिक पंचांग में कार्तिक कृष्णा एकम् होने पर भी उसे मार्गशीर्ष कृष्णा एकम् मानकर विहार किया गया। पौष माह को बढ़ाकर लौकिक मास वृद्धि के अन्तर को पूरित कर दिया गया। यह पूर्व के पृष्ठों में पूरी तरह स्पष्ट हो चुका है। पुन: दोनों गलती के प्रायश्चित का यहाँ सूचन किया जा रहा है-

1. **जे भिक्खू णितियावासं वसइ वसंतं वा साइज्जइ**- नित्य वास का लघु मासिक प्रायश्चित्त।
2. **जे भिक्खू पज्जोसवणाए ण पज्जोसवेइ ण पज्जोसवेंतं वा साइज्जइ**- पर्युषण में अपर्युषण करने पर गुरु चौमासी प्रायश्चित्त।

अर्थात् पर्युषण में पर्युषण करने का कितना अधिक महत्त्व है।

(घ) आगम व लौकिक गणना-अत्यन्त निकटता

(अ) इस शताब्दी में युग का अवलोकन- (व्यंकटेश पंचांग के अनुसार)

श्रावण शुक्ला प्रतिपदा 2001

इसे युग संवत्सर के रूप में देखा जाए			
2001 तक पूर्व की गणना में		7 जुलाई 1944	
1+5+6 = 2012	6	11 जुलाई 1949	1830 दिन
5+3+5+3 = 2028	11	16 जुलाई 1954	1831
5+6+5+3 = 2047	16	20 जुलाई 1959	1830
5+6+5+3 = 2066	21	25 जुलाई 1964	1832
5+6+5+3 = 2085	26	29 जुलाई 1969	1830
5+6+4 = 2100	31	5 जुलाई 1974	**1802**
10 युग संवत्सर आए	36	10 जुलाई 1979	1831
(11 वां चल रहा था)	41	14 जुलाई 1984	1831
चं+ चं + अभि + च + अभि	46	19 जुलाई 1989	1831
11×5= 55 वर्ष	51	23 जुलाई 1994	1830
शेष 15×3 = 45	56	29 जुलाई 1999	1832

11×2=22 +15 =37 माह बढ़े	61	3 जुलाई 2004	**1801**
	66	8 जुलाई 2009	1831
	71	13 जुलाई 2014	1831
	76	17 जुलाई 2019	1830
	81	22 जुलाई 2024	1832
	86	26 जुलाई 2029	1830
	91	1 अगस्त 2034	1832
	96	6 जुलाई 2039	**1800**
		11 जुलाई 2044	1832
		31126+**5403**= 36529	

(आ) पूर्व में विक्रम की प्रथम शताब्दी का उल्लेख किया जा चुका है-कितनी समानता है। 2100 वर्षों में केवल 3 बार दूसरी, दसवीं, अट्ठारहवीं शताब्दी में 36 माह वर्धित हुए तब लगभग 30 दिन कम रहेंगे। वे आगे पीछे की शताब्दियों में 4-5 दिन करके बढ़ चुके होते हैं। गणना की विवशता है-पलों को, विपलों को जब वे 1 दिन के रूप में एकत्र हो जाते हैं, 1 दिन के रूप में बढ़ा दिया जाता है। इसीलिए 4 वर्षों में 1 दिन फरवरी में बढ़ाना होता है। वर्षों वर्षों से युगों युगों से यह ऐसा ही चल रहा है। सर्वज्ञों को यह भली-भाँति ज्ञात ही था। इसीलिए सदा सर्वदा आदित्य, चन्द्र, ऋतु और नक्षत्र किसी भी संवत्सर की लम्बे काल की गणना में सामंजस्य बैठ ही जाएगा।

युग संवत्सर मात्र 11 है, जिनमें प्रत्येक में 1831 दिन के औसत से दिन होते हैं, पर 1831 दिन के औसत के ऊपर 17 युग आए। इससे स्पष्ट हुआ 6 युग ऐसे हुए जिनमें 5 वर्षों में 2-2 अभिवर्धित मास आए पर उनका क्रम युगमध्य में पौष और युगान्त में आषाढ़ नहीं होने से उन्हें युग कहा जाएगा। 61 ऋतु मास, 62 पूर्णिमा होने पर भी उत्क्रम से होने के कारण युग संवत्सर नहीं कहला सकते। अत: स्पष्ट हुआ :-

ठाणांग, चंदपण्णत्ति	(1) युग संवत्सर 11	च+च+अ+च+अ = 1831 दिन
समवायांग, जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति का 7 वां वक्षस्कार	(2) युग 6	किसी भी क्रम से 2 अभिवर्धित 3 चन्द्र =1831दिन
अनुयोग द्वार, जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति प्रथम वक्षस्कार	(3) युग 3	किसी भी क्रम से 2 अभिवर्धित 4 चन्द्र = 1801 दिन

	20	

तीनों प्रकार प्रकार के कथन आगमों में आये हैं, उनमें तीनों ही अपनी-अपनी

अपेक्षा से सही ही हैं। आगम और लौकिक गणित में अन्तर तृतीय खण्ड में दिखाया गया था। वहाँ सूचित किया गया था कि स्थूल दृष्टि से भले ही अन्तर हो सूक्ष्म दृष्टि से कोई अन्तर है ही नहीं। हम यहाँ उसे ही देखने का प्रयास कर रहे हैं।

सांख्यिकी में एक रोचक दृष्टान्त मिलता है-7 सदस्य वाले एक परिवार की औसत लम्बाई 5 फीट की थी, एक 10 फीट चौड़े नाले की गहराई औसत 3 फीट की थी। इस औसत से उस पानी वाले नाले में परिवार के सदस्य उतर गए। पर सब के सब डूब गये, क्यों ? औसत कथन की अपेक्षा में कितनी विषमता है, अधिकतम क्या है ? न्यूनतम क्या है ? इसको जाने बिना उतरे तो विनाश हो गया।

क्या ऐसा ही कुछ हमारे ज्योतिषीय गणित के साथ हुआ ? यद्यपि हम जानते हैं - **नत्थि नयविहुणेहिं** अर्थात् जिनशासन में प्रत्येक कथन नय की अपेक्षा ही हुआ है। भगवती सूत्र, न्याय के ग्रन्थों में हम इसे पढ़ते भी हैं, पर यहाँ भूल गये। नैगम नय से कहे गए तथ्यों को, सामान्य कथन को-व्यवहार या ऋजु सूत्र नय से कहे लौकिक गणित से मिलाने लगे, मेल हो कैसे सकता है ?

आगम गणित-लौकिक गणित में बहुत कुछ समानता है, केवल थोड़ा-सा सूक्ष्म गणित हमारा लुप्त होने से हम आगम आज्ञा/आगम विधान/आगम कथित मास वृद्धि को छोड़ बैठे बस इसी से विडम्बना उठ खड़ी हुई। हम आज भी उसे अपना सकते हैं।

(इ) खण्ड 3 के अ विभाग की समीक्षा

(1) तिथि आगम में औसत रूप से कही तथा लौकिक में जघन्य से उत्कृष्ट तक कही।

शीतकाल की रात्रि में चन्द्रमा को शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी, पूर्णिमा को 15-16 घंटे तक रात्रि में आकाश मे चमकना होता है। कृष्ण पक्ष में इसके विपरीत होता है-दिन छोटा होने से। अत: शीतकाल में पूर्णिमा को चन्द्र की गति मंद एवं अमावस्या को तेज रहती है। इसके विपरीत ग्रीष्म में पूर्णिमा की रात्रि में उसकी गति तीव्र होती है, अमावस्या को मंद यह सार्वभौमिक सिद्धान्त है। तब तिथियों के मान में अन्तर रहेगा ही। द्रुत गति में तिथि लगभग 20 घंटे में पूरी हो जाती है। मंद गति में 27 घंटे रह सकती है। औसत आगम में कथन को सर्वत्र लागू नहीं किया जा सकता। मध्यम गति में तिथि का वह कालमान उचित है।

(2) नक्षत्र भी तिथि के अनुसार ही समझना। अलग-अलग नक्षत्रों के अलग-अलग कालमान का अभी यहाँ विशेष अवसर नहीं मिलने से चिन्तन नहीं किया जा सकता, शोध आवश्यक है।

(3) चन्द्र मास -सूर्य मास- आगम में औसत कथन है।

(4) यहाँ लौकिक में विभागश:-अत: दोनों अविरोधी ही हैं।

(5-6) चन्द्र वर्ष -सूर्य वर्ष- औघिक की अपेक्षा सामान्य औसत लिया-प्राय: पूर्व की गणना से गुणित होने पर युग में 1800 दिन या 1830 दिन के औसत से कथन किया गया। उसके संशोधन का सूक्ष्म गणित आज हमारे पास भले ही नहीं, पर लौकिक गणना आगम गणना के अनुरूप ही है। हम ऊपर देख चुके कि 1830, 1831 या 1832 दिन आते हैं। युग संवत्सर या दो अभिवर्धित मास वाले युग में -औसत में मात्र 1 युग में 1 दिन का अन्तर/सामान्य युग-ऋतु संवत्सर के युग में 1800 के स्थान पर भी मात्र 1 दिन का अन्तर, कितना साम्य रहा हुआ है।

हमने 7 युग में औघिक की अपेक्षा 1800 या 1830 दिन कहे- 17 बार 1830 और 3 बार 1800

इन्हीं भेदों से आगे की गणना होती है। युग में 62 पूर्णिमा बहुलता की अपेक्षा सत्य है। 100 वर्षों में 80 वर्षों के 16 युग या 85 वर्षों के 17 युगों में प्रत्येक युग में 62 पूर्णिमा आती ही है। मात्र 3 या 4 युग में 61 पूर्णिमा आती है। औघिक की अपेक्षा 62 पूर्णिमा उचित है।

औसत भी 17×62= 1054

3×61= 183

1237

1237/20 = 61.85 इसे किस रूप में अभिव्यक्त करेंगे। लगभग 62 अत: यह उचित ही है।

(8) 30 वर्ष के पश्चात् अधिक मास। यह जघन्य की अपेक्षा अथवा बहुलता की अपेक्षा उचित है। वास्तव में नभ में 28 मास से 35 मास के बीच में ऐसी घटना घटित होती है, पर आगमकारों को किसी भी स्थिति में चातुर्मास में बढ़ने वाला मास इष्ट नहीं। अत: युगमध्य पौष के नहीं बढ़ने पर भी चौमासे में बढ़े महीनों को नहीं बढ़ाकर उसे ही बढ़ाने हैं। पौष को बढ़ाकर चौमासे में बढ़े महीने को संतुलित करते हैं। कभी-कभी पौष के बाद पौष ही बढ़ता है। कभी-कभी आषाढ़ के पश्चात् आषाढ़ ही बढ़ता है। अत: अन्तर 30 या 36 माह आता है। 19 वर्षों में 3 बार 3-3- वर्ष का व 4 बार ढाई-ढाई वर्ष का अन्तर पड़ता है। औघिक में जघन्य अन्तर ढाई वर्ष या अधिक बार (4बार) आने से 30 माह कर दिया।

पूर्व में चर्चा कर ही आए सदा सर्वदा ढाई-ढाई वर्ष का अन्तर संवत्सरी को बारह

ही माह में घुमा देगा, जो किसी को इष्ट नहीं है।

(9) क्षय मास-कार्तिक, मिगसर, पौष ही होते हैं। उनके पूर्व चौमासे में मास वृद्धि अनिवार्य ही है। जब उसे चौमासे में बढ़ाया ही नहीं, पौष बढ़ाने तक बढ़ते हैं तब तक क्षय मास आ जाता है। चौमासे में बढ़े अधिक मास से क्षय मास की पूर्ति हो ही चुकी। अत: न चौमासे में बढ़ाना पड़ा न क्षय करना पड़ा। अत: आगम गणना में क्षय मास का प्रसंग ही नहीं।

इससे भली-भाँति स्पष्ट हो गया कि आगमकार किसी भी दशा में चौमासे में मास वृद्धि करते ही नहीं।

दशपूर्वी काल में विक्रम 1 से 114 तक भी यही गणित था। आज 2058 में भी यही गणित है। फिर हम क्यों अपनी चौमासी (कार्तिक चौमासी) गलत करते चले आ रहे हैं- 50वें दिन संवत्सरी को छोड़ 80वें दिन की बात करते हैं? सुज्ञ को विचारना चाहिए।

आगम के अनुसार 2068 का पक्खी पत्र

1. चैत्र शुक्ला	लौकिक पूर्णिमा	शुक्र	45/53	6 अप्रेल 12
2. वैशाख कृष्णा	14	शु	10/28	20 अप्रेल 12
3. वैशाख शुक्ला	14	श	17/10	5 मई 12
4. ज्येष्ठ कृष्णा	30	र	58/28	20 मई 12
5. ज्येष्ठ शुक्ला	14	र	36/10	3 जून 12
6. आषाढ शुक्ला	14	सो	18/33	18 जून 12
7. आषाढ शुक्ला	15	मं	46/8	3 जुलाई 12चातुर्मासी
8. श्रावण कृष्णा	14	बु	7/48	18 जुलाई 12
9. श्रावण शुक्ला	14	बु	12/8	1 अगस्त 12
10.भाद्रपद कृष्णा	14	गु	39/33	16 अगस्त 12*
11. भाद्रपद शुक्ला	15	शु	32/45	31 अगस्त 12
12. आश्विन कृष्णा	14	श	37/53	15 सितम्बर 12
13. आश्विन शुक्ला	14	श	3/45	29 सितम्बर 12
14. कार्तिक कृष्णा	14	र	34/40	14 अक्टूबर 12
15. कार्तिक शुक्ला	15	सो	46/15	29 अक्टूबर 12चातुर्मासी
16. मार्गशीर्ष कृष्णा	14	मं	0/35	13 नवम्बर 12

* पर्युषण प्रारम्भ 14 अगस्त 2012 मंगलवार संवत्सरी चतुर्थी 21 अगस्त 2012 मंगलवार

17. मार्गशीर्ष शुक्ला	15	बु	32/43	28 नवम्बर 12	
18. प्रथम पौष कृष्णा	14	बु	26/28	12 दिसम्बर 12	
19. प्रथम पौष शुक्ला	14	गु	14/55	27 दिसम्बर 12	
20. द्वितीय पौष कृष्णा	30	शु	14/15	11 जनवरी 13	
21. द्वितीय पौष शुक्ला	14	श	3/15	26 जनवरी 13	
22. माघ कृष्णा	14	श	19/53	9 फरवरी 13	
23. माघ शुक्ला	14	र	47/3	24 फरवरी 13	
24. फाल्गुन कृष्णा	30	सो	46/3	11 मार्च 13	
25. फाल्गुन शुक्ला	14	मं	24/23	26 मार्च 13	चातुर्मासी
26. चैत्र कृष्णा	30	बु	21/43	10 अप्रेल 13	

तिथि क्षय/वृद्धि को अभी गौण कर चौमासी सुधारने के लिए प्रयास किया गया है। चातुर्मास पश्चात् विहार नहीं करने पर लघुमासी प्रायश्चित्त आता है। चातुर्मासी नहीं ठीक कर सके तो भी संवत्सरी को शुद्ध घड़ी में करने की आगम की स्पष्ट आज्ञा है। अतः पूर्व में विवेचित सम्पूर्ण तथ्यों को ध्यान ले संवत्सरी तो

श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से 50वाँ दिन

आगम गणना से भाद्रपद शुक्ला पंचमी

उपसंहार

इस तरह यह स्पष्ट हुआ कि लौकिक गणित भी आगम गणित के सन्निकट ही है, देवाधिदेव तीर्थंकर भगवंत चातुर्मास में मासवृद्धि को पूरी तरह अस्वीकार करके साधक की आत्म-साधना के लिए निरन्तर विचरण विहार पर बल देते हैं। कुछ शंकाएँ पूरे लेख के पश्चात् भी रह सकती हैं। जैसे-

(अ) उत्सर्पिणी काल के दूसरे आरे में 50वें दिन की घोषणा से भगवान् 50वें दिन संवत्सरी का प्रतिपादन करते हैं और भगवान् के द्वारा की गई 50वें दिन की घोषणा से उनका 50वाँ दिन मानने के लिए 2 सप्ताह का उगाढ मानना पड़ता है तो क्या इसमें अन्योन्याश्रय दोष नहीं आता?

आगम में अनेक प्रमाणों से इसका समाधान किया जा सकता है। विस्तार भय के कारण यहाँ एक ही प्रमाण दिया जा रहा है। उत्तराध्ययन 29/1 "**संवेगेणं भंते! जीवे किं जणयइ? संवेगेणं अणुत्तरं धम्मसद्धं जणयइ। अणुत्तराए धम्मसद्धाए संवेगं हव्वमागच्छइ।**" हे भगवन्! संवेग से जीव क्या प्राप्त करता है? संवेग से अनुत्तर धर्म श्रद्धा को प्राप्त करता है, अनुत्तर धर्म श्रद्धा से संवेग आता है। क्या फिर यहाँ जिनवचनों में अन्योन्याश्रय दोष है? नहीं। इसका समाधान मिलता है- उत्तरा.21/10 में

तं पासिऊण संविग्गो, समुद्दपालो इणमब्बवी।
अहोऽसुभाण कम्माणं, निज्जाणं पावगं इमं।।

संबुद्धो सो तहिं भगवं, परं संवेगमागओ। आपुच्छऽम्मापियरो, पव्वए अणगारियं।।10

समुद्रपाल अपराधी को देख संवेग को प्राप्त हुआ और चिन्तन चला- अहो! अशुभ कर्मों का यह पाप रूप अशुभ परिणाम ही है और वह महान आत्मा समुद्रपाल उत्कृष्ट संवेग को प्राप्त हुआ और वही स्वयं संबुद्ध हो गया। फिर माता-पिता से आज्ञा प्राप्त कर अनगार धर्म स्वीकार किया।

मिथ्यात्व की भूमिका पर संवेग प्रारम्भ होता है। पराधीनता असह्य होती है, स्वाधीनता की उत्कट लालसा जगती है। ऐन्द्रयिक विषयों से उदासीनता आती है (**निव्वेदेणं भंते! जीवे किं जणयइ? निव्वेदेणं दिव्व-माणुस-तेरिच्छिएसु कामभोगेसु निव्वेयं हव्वमागच्छइ। सव्वविसएसु विरज्जइ**) अंतर के रस का स्पर्श होता है, नित नव रस, उत्साह तथा उत्कंठा जागृत होती है (**धम्मसद्धाए णं भंते!**

जीवे किं जणयइ? धम्मसद्धाए णं सायासोक्खेसु रज्जमाणे विरज्जइ) साता की आसक्ति टूटती है और अब पराधीनता और अधिक असह्य हो जाती है, स्वाधीनता की लालसा अनंत गुणी बढ जाती है। ठीक, उसी प्रकार उन प्रकृतिभद्र, प्रकृति से विनीत बनने वाले सामान्य जनों की 50वें दिन की घोषणा से सार्वकालिक, सार्वदेशिक संवत्सरी को 50वें दिन मनाने की भूमिका मिलती है और भगवान् के द्वारा 50वें दिन संवत्सरी करने के विधान से अहिंसा की प्रतिष्ठापना को तीन लोक में मान्यता मिलती है साधक के भीतर में सूक्ष्मतम हिंसा से बचने की प्रेरणा मिलती है।

(आ) दूसरी जिज्ञासा यह उत्पन्न होती है कि अब जब यह स्पष्ट सिद्ध कर ही दिया गया है कि प्रत्येक 5 वर्ष में 2 महीना बढना अनिवार्य नहीं तो भगवान् महावीर के 12 वर्ष 13 पक्ष छद्मस्थकाल में 5 मास की वृद्धि कैसे की?

गहराई से अन्वेषण करने पर यह स्पष्ट होता है कि 12 वर्ष के पश्चात् वैशाख शुक्ला दशमी तक 11 महीने ही बचते हैं (जिसका विवेचन प्रथम खंड में किया जा चुका है) अर्थात् छद्मस्थकालीन 13वें वर्ष में पौष का मास बढेगा ही, अब भले ही युगसंवत्सर को उठाओ, 2 युगसंवत्सर के बीच में 3 वर्ष या 6 वर्ष लो, कैसे भी करके देखो तो भी 5 महीने बढेंगे ही। अतः उनका छद्मस्थकाल 4515 दिन का नहीं हो सकता। इसमें लगभग 48-50 दिन अधिक आने की पूरी संभावना है।

(इ) तृतीय जिज्ञासा यह उत्पन्न होती है कि भगवान् ऋषभदेव के बाद में चतुर्थ आरा लगभग 3 वर्ष 5½ मास बाद लग गया उसमें भी 2 मास की वृद्धि अनिवार्य कैसे?

यह कथन युक्तियुक्त है कि 2 मास की वृद्धि अनिवार्य है, क्योंकि तीसरे आरे के अंत में यदि आषाढ भी बढेगा तो उसके 2½ वर्ष पूर्व पौष अथवा 3 वर्ष पूर्व आषाढ बढना अवश्यंभावी है, इसलिए 2 महीने के 4 पक्ष मिलाना ही पड़ेगा और उनके निर्वाण के 89वें पक्ष में श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को अवसर्पिणी काल का चौथा आरा लगना पूरी तरह सही ठहरता है।

इसी प्रकार भगवान् महावीर के निर्वाण के पश्चात् के 3 वर्ष 8½ मास को देखा जा सकता है।

(ई) युग के संदर्भ में जिज्ञासा उपस्थित होने पर अन्य रूप से समाधान-

2400 वर्षों के युग ÷ 5 = 480 युग

480 युग में 1800 × 480 = 864000 दिन

100 वर्ष = 36525 दिन

2400 वर्ष के 36525 × 24 = 876600 दिन

876600−864000 = 12600 दिन का अंतर रह जाता है।

अतः 480 युग में बढ़े हुए 1−1 दिन को घटाने पर

12600

− 480

12120

12120 ÷30 = 404 मास

480 युग में 404 मास

अर्थात् 120 युग में 101 मास

17 × 5 = 85

16 × 1 = 16

600 वर्षों में 101 मास बढाए।

3 या 4 युग	1800+1 = 1801 दिन
17 या 16 युग	1830+1 = 1831 दिन

आगमकार इन सबसे विज्ञ थे- जैसे मेरु की गणना में चूला को गौण किया। दशवैकालिक में चूलिकाओं को गौण किया। सूत्रों का परिचय देते हुए सचूलियागस्स भी कह दिया। उसी प्रकार चूला रूप 1 दिन को मुख्य गणना में गौण किया।

नीचे के गुणा में वह 1 बैठ भी नहीं पाता।

30 मुहूर्त्त	= 1 अहोरात्रि	
15 अहोरात्रि	= 1 पक्ष	= 15 दिन
2 पक्ष	= 1 माह	= 30 दिन
2 माह	= 1 ऋतु	= 60 दिन
3 ऋतु	= 1 अयन	= 180 दिन
2 अयन	= 1 वर्ष	= 360 दिन
5 वर्ष	= 1 युग	= 1800 दिन
20 युग	= 100 वर्ष	= 36000 दिन

(अनुयोगद्वार, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र वक्षस्कार 2)

दोनों की गणना में विसंगति आती

उसे सुधारा = 1 युग = 60 ऋतुमास = 1800 दिन

युग = 61 ऋतुमास = 1830 दिन

60 सूर्य मास = 61 ऋतुमास = 62 चन्द्रमास = 67 नक्षत्र मास

(समवायांग 61, 62, 67) (जम्बूद्वीप 7 वाँ वक्षस्कार)

इनमें भाग लगा

संवत्सर	366/360	354 12/62	327 29/67 दिन
मास	301 2 /30	29 32/62	27 19/67 दिन का कहना होगा

इस युग में चन्द्र के अभिवर्धित मास 3 वर्ष के अंतराल में लगातार दो आषाढ या लगातार 2 पौष हो सकते हैं, कभी आषाढ पहले बढकर 2½ वर्ष पश्चात् पौष हो सकता है। उसमें भी एक विशिष्ट प्रकार का पुनरावर्तन पुनः-पुनः होता है, उसे विशिष्ट नामकरण दिया (चन्द्रप्रज्ञप्ति और ठाणांग जी) में चन्द्र-चन्द्र अभिवर्धित (पौष)-चन्द्र-अभिवर्धित (आषाढ) यह सुव्यवस्थित रूप वाला है। बराबर 2½- 2½ वर्षों में एक ही क्रम-एक ही रूप में मास वृद्धि- अतः युग संवत्सर। प्रत्येक 100 वर्ष में (10×5) 50 वर्ष तो इसके होते ही हैं। कभी-कभी (11×5) 55 भी-शेष 45 में-

30 युग के पक्के (6) = 1831

15 युग (3) = 1801

1831 दिन के		1801 दिन के
	11 + 6 तो	3
या	10 + 7	
	--------	
	10 + 6 तो	4

इसे 1801 दिन (1 अभिवर्धित चन्द्र मास) 1831 दिन (2 अभिवर्धित चन्द्रमास)

↓ ↓

युग सामान्य युग विशिष्ट

↓

युग संवत्सर (क्रम से अभिवर्धित चन्द्रमास)

इस कारण 1 में कहे तो युग, 2 में कहें तो युग (1801) युग अभिवर्धित (1831), 3 में कहें तो युग (1801), युग अभिवर्धित (1831), युग संवत्सर (क्रम से अभिवर्धित) (1831) जैसे (1) प्रज्ञापना पद 18 कायस्थिति में गति द्वार की अपेक्षा अलग है, शेष द्वारों

की अपेक्षा अलग है, अपर्याप्ता की अपेक्षा अलग है, पर्याप्ता की अपेक्षा अलग।

(2) भगवती श 12 उ. 6 "तत्थ णं जे से पव्वराहू से जहण्णेणं छण्हं मासाणं उक्कोसेणं बायालीसाए मासाणं चंदस्स, अडयालीसाए संवच्छराणं सूरस्स। चन्द्रग्रहण जं. 6 मास उ. 42 मास में व सूर्यग्रहण ज. 6 मास उ. 48 वर्ष। इनको एक ही स्थान पर दर्शाया, पर इनकी अलग-अलग अपेक्षा है। उसी रूप में इसे समझना। इसी अनुपात से औसत गति का कथन कर दिया। अतः आगम गणित में चन्द्र, सूर्य की गति, मास, वर्ष, युग का औघिक कथन है। लौकिक गणना में स्पष्ट कथन है। दोनों में विशेष अंतर नहीं और हो भी नहीं सकता। आकाश एक है, गति एक है, ज्ञानियों का ज्ञान में भेद नहीं रह सकता।

(उ) सायन-निरयन के प्रसंग से चातुर्मास लगने का, उतरने का समय, भगवान महावीर निर्वाण, विक्रम संवत् आदि में जो तारीखें अनुमानित की गई, वे केवल सूर्य संक्रान्ति के 25 दिनों के अन्तर से आकलित की गई, जबकि इन सभी का सम्बन्ध अमावस्या, पूर्णिमा आदि चन्द्रमास से है। अतः लेख में वर्णित तारीखों से 4 या 5 दिन और अधिक पहले उन तारीखों का आना संभावित है।

आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने आज से लगभग 22 वर्ष पूर्व पाली के चातुर्मास में संवत्सरी चर्चा पत्रों का संकलन कर अनेक परम्परा प्रमुखों को प्रेषित करवाया। जिसके प्रत्युत्तर में श्रुतधर (वर्तमान ज्ञानगच्छाधिपति) श्री प्रकाशचन्द्र जी म.सा. ने निम्न भाव फरमाये- "स्वर्गीय आचार्य श्री की "संघ में सांवत्सरिक ऐक्य की भावना' अनुमोदनीय एवं अनुकरणीय है, साथ में वर्तमान आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने भी आचार्य श्री की भावना को मूर्त रूप देने के लिए जो सांवत्सरिक चर्चा पत्र तैयार किये, वह प्रशंसनीय है।

सांवत्सरिक एकता के विचार-विमर्श के पहले वैचारिक भूमिका का शुद्ध होना अतीव अपेक्षित है। पूर्वाग्रहों एवं परम्परानुरागों से पूर्ण मुक्त विचारों से ही जिनवाणी के सही आशयों को समझने में सफलता मिलती है।

प्रत्येक परम्परा में इतनी उदारता आने पर ही यह भागीरथ कार्य सिद्ध हो सकता है। आज तक प्रमुख रूप से इसी संकीर्णता ने इस कार्य की सफलता में प्रमुख अवरोध उत्पन्न किया है। अमुक परम्परा को मान्यता मिली, मेरी परम्परा को नहीं। इसमें अपना एवं अपने पूर्वजों का अपमान अनुभव करने की वृत्ति ने ही हमारे पक्ष व्यामोह की जड़ों को सींचा है। पक्ष व्यामोह की प्रबल वृत्ति ही उन युक्तियों का निर्माण करके अपने आग्रहों को आगमोचित ठहराकर स्वयं की आगम निष्ठा सिद्ध करती है। ये वृत्तियाँ स्वयं को छिपाने के लिए ही स्वयं के सामने आगमों की आड रखती हैं एवं स्पष्टीकरण देती हैं कि हमारी भावना तो सांवत्सरिक एकता की है, किन्तु आगमानुसार नहीं होने से हम विवश हैं, इत्यादि अनेक

बहाने ये वृत्तियाँ ढूँढ लेती हैं। अतः सूक्ष्मता से अन्तर्वृत्तियों का निरीक्षण, परिशोधन करके तटस्थता से एक-दूसरे के प्रमाणों का पर्यालोचन करने पर ही वास्तविकता तक पहुँचना संभव हो सकता है।''

समय बीतता गया, प्रत्युत्तर फाइलों के ढेर में दब सा गया। जोधपुर पावटा वर्षावास में प्रतिलेखन के अवसर पर विविध सामग्री प्रकाश में आयी। आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. की प्रबल भावना थी कि सत्य का अन्वेषण होना चाहिए।

सत्य में आस्था अटल हो, चित्त संशय से ना चल हो।
आचरण की उर्वरा में, लक्ष्य तरुवर लहलहाएँ।।

न्याय पक्षी, तृतीय पद के अधिष्ठाता स्वयं की आराधना में, संत-सतियों की आराधना में मन को दृढ़ विश्वास हो, चित्त संशय से चलित न हो इस हेतु शोध पर जोर दे रहे थे और उन्हीं की कृपा से उन्हीं के अंतर में समुत्पन्न भावना से यह शोध सम्पन्न हो सका। परिणाम आपके सामने है। आगम युग से आज तक लौकिक पंचांग उसी रीति से बन रहा है, जब उस युग में दो सावण होने पर लौकिक दूसरे सावण में (आगमीय भादवा में) और जो भादवा होने पर प्रथम भादवा में (लौकिक भादवा में)संवत्सरी की आराधना की गई, तो आज क्यों नहीं की जा सकती?

बस, क्रांतिवीर लोकाशाह जी की उक्ति 'डाह्यो हो तो विचारिजो जी', सुज्ञों को अवश्य विचार करना चाहिए।

आचारांग 5/5 'समियं ति मण्णमाणस्स समिया वा असमिया वा समिया होइ उवेहाए।''भावार्थ- जिसका अध्यवसाय शुद्ध है, जिसकी दृष्टि मध्यस्थ एवं निष्पक्ष है, जिसका हृदय शुद्ध व सत्यग्राही है, वह व्यवहारनय से किसी भी वस्तु, व्यक्ति या व्यवहार के विषय को सम्यक् मान लेता है तो वह सम्यक् ही है और असम्यक् मान लेता है तो असम्यक् ही है, फिर चाहे प्रत्यक्षज्ञानियों की दृष्टि में वास्तव में वह सम्यक् हो या असम्यक्।

इस लेख के लिखने में किसी की भावना को ठेस पहुँची हो तो अंतःकरण से क्षमायाचना।

''खमिय खमाविअ मइ खमह, सव्वह जीव निकाय।
सिद्धह साख आलोयणाह, मुज्झह वइर न भाव।।''

जिनआज्ञा विपरीत कुछ भी लिखने में आया हो तो

त्रिविधे त्रिविधं मिच्छामि दुक्कडं

''जं जं मणेणं बद्धं, जं जं वाएण भासियं।
जं जं काएण कयं, तस्स मिच्छामि दुक्कडं।।''

अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा आयोजित
'आओ स्वाध्याय करें' त्रैमासिक प्रतियोगिता (27) का परिणाम

जिनवाणी के फरवरी-2012 अंक में आयोजित त्रैमासिक प्रतियोगिता (27) में 128 प्रतियोगियों ने भाग लिया। यह प्रतियोगिता जिनवाणी के नवम्बर-दिसम्बर, 2011 एवं जनवरी, 2012 के अंकों पर आधारित थी। सभी पुरस्कार ड्रा द्वारा निकाले गये हैं। परिणाम इस प्रकार है-

प्रथम पुरस्कार- 1100/- रुपये कविता डागा-जयपुर (49)

द्वितीय पुरस्कार- 750/- रुपये जयमाला कांकरिया-पाली (48.75)

तृतीय पुरस्कार- 200/- रुपये (प्रत्येक)

हेमराज सुराणा-जयपुर (48.5) सुनिता कुम्भट-ब्यावर (48.5)

विद्या संघवी-बदनावर (48.5)

सान्त्वना पुरस्कार- 100/- रुपये (प्रत्येक)

ऋषभ जैन-सुमेरगंजमण्डी (48.25) कमलेश गेलड़ा-अजमेर (48)

मंजुला जैन-भायंदर (मुंबई) (48)

48 अंक प्राप्त करने वाले अन्य प्रतियोगी:- सुनीता मेहता–जोधपुर, मुन्नालाल भंडारी–जोधपुर, विजयमल मेहता–जोधपुर, सुनिता कोटड़िया–शहादा, पूनमचन्द जैन–शहादा, निशा लुंकड–कोटा, गर्व लुंकड़–कोटा, पवन जैन–बेलगांव, वर्षा डोसी–मेड़ता सिटी, राजुल कोठारी–धुलिया, मोहन लोढ़ा–अजमेर, राजेन्द्र पारख–शिरपुर, निर्मला सुराणा–इचलकरंजी, प्राची बोरा–इचलकरंजी, सुशीला रांका–जलगांव, मधुबाला ओस्तवाल–नासिक, बाबूलाल कटारिया–पंजागुटा (हैदराबाद), वंदना खींचा–सूरत।

47 अंक प्राप्त करने वाले प्रतियोगी:- शशिकला लुणावत–नासिक, अर्चना बाफना–नासिक, शशि जैन–ग्वालियर, गौरव जैन–कोटा, ईशिता जैन–होशियारपुर, चित्रा डागा–बूंदी, पंकज जैन–अलीगढ़–टोंक, रीमा जैन–लुधियाना, मीना जैन–सवाईमाधोपुर, पुष्पा मेहता–पीपाड़ सिटी, अल्का जैन–दिल्ली, चंचल गोलेच्छा–जयपुर, आशा अग्रवाल–जयपुर, पुष्पा गोलेच्छा–ब्यावर, जया भण्डारी–ब्यावर, प्रमिला बोहरा–जैतारण, कमलादेवी सेठिया–मसूदा, देवेन्द्रनाथ मोदी–जोधपुर, सुमित्रा बाफना–जोधपुर, विमला एम. खींवसरा–धुलिया, लता आँचणियाँ–धुलिया, प्रमिला पोखरणा–धुलिया, सरला कांकरिया–जलगांव, अनिलकुमार जैन–कोटा।

46 अंक प्राप्त करने वाले प्रतियोगी:- सरोज रूणवाल–धुलिया, सुनंदा लोढ़ा–धुलिया, उषा बरडिया–धुलिया, कांता बरडिया–धुलिया, अनिता दुग्गड़–धुलिया, नीलम जैन–अजमेर, रेभा कोठारी–अजमेर, विजयलक्ष्मी–अजमेर, मंजु कांकरिया–कलकता, सरोज नाहर–दिल्ली, राज जैन–दिल्ली, सुगनचंद छाजेड़–जोधपुर, नैनमल बाफणा–जोधपुर, सुशीला बैगानी–बीकानेर, चित्रा जैन–आलनपुर, मनोज जैन–जयपुर, हेमलता जैन–ब्यावर, नथमल कोठारी–बालोद, ज्ञानकंवर धम्माणी–अहमदाबाद।

सही उत्तर

उपर्युक्त त्रैमासिक प्रतियोगिता (27) के प्रश्नों के सही उत्तर जिनवाणी अंक एवं उसके पृष्ठ के साथ यहाँ दिए जा रहे हैं -

प्र. उत्तर माह/पृष्ठ संख्या प्र. उत्तर माह/पृष्ठ संख्या

1.	4	नवम्बर/9	2.	22	नवम्बर/50
3.	40,00,000	दिसम्बर/40	4.	3	दिसम्बर/69
5.	60,00,00,000	नवम्बर/59	6.	10	दिसम्बर/56
7.	6	नवम्बर/78	8.	1553;1,00,000	दिसम्बर/80
9.	4	दिसम्बर/63	10.	90,10	जनवरी/29
11.	30	दिसम्बर/77	12.	227	जनवरी/61
13.	11;2001	जनवरी/19	14.	35	जनवरी/06
15.	4	जनवरी/86	16.	कलह	जनवरी/12
17.	अलग	जनवरी/10	18.	अहम, अकड़पन	दिसम्बर/70
19.	पर; स्व	जनवरी/21	20.	सत्य	जनवरी/90
21.	कश्मकश	दिसम्बर/54	22.	धन	जनवरी/96
23.	कल	दिसम्बर/65	24.	असर	जनवरी/27
25.	सम्यक्त्व	दिसम्बर/15	26.	अट्टस्स	नवम्बर/09
27.	प्रवचन	नवम्बर/46	28.	जन्म-मरण	नवम्बर/13
29.	अथक	नवम्बर/19	30.	आचार्यश्री हस्ती	नवम्बर/19
31.	असंयम	नवम्बर/17	32.	संस्कार	दिसम्बर/72
33.	पैसा	दिसम्बर/18	34.	आत्म-सुधार	नवम्बर/06
35.	महात्मा गाँधी	दिसम्बर/51	36.	उत्कृष्ट बहुश्रुत	नवम्बर/32
37.	धर्म	दिसम्बर/30	38.	दिवेर युद्ध	दिसम्बर/82
39.	व्रत	जनवरी/60	40.	दृष्टि	दिसम्बर/14
41.	व्यवहार, विचार, वचन	नवम्बर/57	42.	हास्य योग	नवम्बर/69
43.	मुनिधर्म	नवम्बर/78			

44. जनवरी/47- "जनता के लिए गए 100 रु. जनता तक पहुँचते-पहुँचते मात्र 15 रु. ही रह जाते हैं।" 85% प्रतिशत बंदर बांट बीच राह में ही हो जाती है।

45. नवम्बर/72- हमारे आमाशय में जो पेट की अग्नि है, उस जठराग्नि का आकार कमल जैसा है, इसे ही 'नाभि-कमल' कहते हैं। सूर्योदय के साथ जैसे कमल खिल उठते हैं, वैसे ही नाभि-कमल भी सूर्योदय के साथ प्रदीप्त होने लगता है और जैसे सूर्यास्त के साथ कमल मुरझा जाते हैं, वैसे ही सूर्यास्त के बाद नाभि-कमल भी मुरझाने या मन्द होने लगता है।

46. जनवरी/50- "क्यों न रिश्वत पर रेट तय कर दी जाए।"

47. नवम्बर/48- संसार की वह घटना जो अध्यात्म में प्रवेश करने की हेतु बनती है, वह 'धर्मकथा' है।

48. दिसम्बर/13- प्राप्त बल का (चाहे तन का हो वचन का हो या मन का हो), प्राप्त सामर्थ्य, योग्यता का दुरुपयोग भ्रष्टाचार है, उसके अलावा स्वभाव से विभाव की ओर जाना भी भ्रष्टाचार है।

49. जिनवाणी, आगम वाणी (जिनवाणी कवर पृष्ठ)

50. *नवकार महामंत्र (जिनवाणी कवर पृष्ठ)*

-सुमतिचन्द मेहता, पीपाड़ (राज.)

श्राविका-मण्डल

मासिक प्रश्नमंच प्रतियोगिता (25)

(अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा संचालित)

अ. भा.श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.) से प्रकाशित पुस्तक **जैन धर्म का मौलिक इतिहास (भाग दो-सामान्य पूर्वधर खण्ड)** के आधार पर संचालित मासिक प्रश्नमंच प्रतियोगिता की यह तेरहवीं किश्त है। प्रतियोगी के उत्तर लाइनदार पृष्ठ पर मय अपने नाम, पते (अंग्रेजी में), दूरभाष न. सहित Smt. Vajainti Ji Mehta, C/o Shri Anil Ji Mehta, 91, 5th main, 5th A cross, III Block, Tayagraj Nagar, Banglore-560028 (Karnataka) Mobile No. 09341552565 के पते पर 10 मई 2012 तक मिल जाने चाहिए।

सर्वश्रेष्ठ तीन प्रतियोगियों को क्रमशः राशि 500, 300, 200 तथा 100-100 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार दिए जायेंगे। इसके अतिरिक्त वर्ष के अन्त में 12 माह तक प्रतियोगिता में भाग लेने वाले और सर्वश्रेष्ठ रहने वाले प्रतियोगी को विशेष पुरस्कार दिए जायेंगे। - *मधु सुराणा, अध्यक्ष*

जैनधर्म का मौलिक इतिहास (भाग-2)

(पृष्ठ 621 से 680 तक से प्रश्न)

'अ' अक्षर से रिक्त स्थान की पूर्ति करें:-

1. यह..... होता है कि देवर्द्धिगणी के सूत्र लेखन से पहले भी जैन शास्त्र लिखे जाते थे।
2. समुद्रगुप्त ने पहले विजय...... में ही पराजित एवं...... किया।
3. वैरावल पाटण के शासक महाराज...... थे।
4. बौद्ध धर्म के लिए महान........सिद्ध हुई।
5. लोहार्य नामक....... आचार्य की प्रमुख आचार्यों में गणना की जाती थी।

'आ' अक्षर से रिक्त स्थान की पूर्ति करें:-

6. शास्त्रों के पाठों को व्यवस्थित कर ...... को पुस्तकारूढ किया।
7. देव ने तत्काल उसे उठाकर .... लोहित्य सूरी के पास पहुँचा दिया।
8. बुद्ध की प्रतिमाओं की बड़े .... के साथ पूजा होने लगी।
9. अतः इसे वाचना के साथ ...... कहना ही उचित होगा।
10. .... के शास्त्रपरिज्ञा अध्ययन पर निर्युक्ति की रचना की हो।

'इ' अक्षर से रिक्त स्थान की पूर्ति करें:-

11. सब जातियों का सम्मिलित कोषबल एवं सैन्यबल ..... प्रबल था।
12. .... स्थित उपरिचर्चित स्तम्भ लेख से यह प्रमाणित होता है।
13. यह ..... के विद्वानों के लिए आज भी प्रश्न ही बना हुआ है।
14. ...... हेतु प्रस्थान किया।
15. .... मात्र के लिए एक जैनाचार्य के पास दीक्षा ग्रहण की।

'ई' अक्षर से रिक्त स्थान की पूर्ति करें:-

16. मथुरा का गु. सं. 61 .... का स्तम्भ लेख।
17. देवीचन्द्रगुप्तम् नामक नाटक .... की छठी शताब्दी की कृति अनुमानित की जाती है।
18. नरेन्द्र सेन ...... को महाराष्ट्र का स्वामी बताया।
19. ...... से 57 वर्ष पूर्व हुए विक्रम संवत् के प्रवर्तक विक्रमादित्य की लोक कथाएँ प्रचलित रही हैं।
20. .... की नौवीं शताब्दी के शंकरार्य नामक टीकाकार ने लिखा है।

'उ' अक्षर से रिक्त स्थान की पूर्ति करें:-

21. अपनी विजयों के ..... में काशी में गंगा के किनारे पर 10 अश्वमेघ यज्ञ किये।
22. .... धर्मसागर तपागच्छ में अनिश्चित उल्लेख नहीं करते।
23. आचार्यश्री के .... को सुनने का सुअवसर पाया।
24. कुछ मुनियों ने .... छोड़कर मन्दिर में रहना प्रारम्भ कर दिया।
25. पट्टावलियों में इस प्रकार का उल्लेख ..... है।

मासिक प्रश्नमंच प्रतियोगिता (23) का परिणाम

जिनवाणी फरवरी, 2012 में पूछे गए प्रश्नों के उत्तर 224 व्यक्तियों से प्राप्त हुए। 25 अंक प्राप्तकर्ता विजेताओं का चयन लॉटरी द्वारा किया गया है।

प्रथम पुरस्कार- मीरा जैन लोहिया-सवाईमाधोपुर

द्वितीय पुरस्कार- वीना तरूण जी कीमती-रामपुरा-नीमच

तृतीय पुरस्कार- भीकमचन्द जी कोठारी-चेन्नई

सान्त्वना पुरस्कार-

1. सुरेखा नाहर-जयपुर
2. लीना महेन्द्र जैन-चिपलूर
3. बलवन्तसिंह चोरडिया-झालारापाटन (राज.)
4. ललिता अजीत बाफना-नागपुर
5. रीमा जैन-लुधियाना

अन्य 25 अंक प्राप्तकर्ता–Abhilasha Hirawat, Anila Bhandari, Anjana Katkani, Anu Jain (Hoshiarpur), Anurag Surana, Aruna Jain, Asha Doshi, Babu Lal Jain, Babulal Katariya, Balwant Singh Chordia, Basanta Madanlalji Sanklecha, Basanti Champalal Bhatewara, Bhagwan Singhvi, Bharti Sunilji Surpure, Bhavika M Shah, Bhikamchand Kothari, Chanchal Golecha, Chandan Mal Gugaliya, Chandni Jain, Chandni Jain, Chandra Munot, Chandrakala Dilipji Ranka, Chandrakala Mehta, Chandralata Mehta, Chetana Bothra, Chirag Jain, Deepmala Singhvi, Devendra Nath Modi, Devi Lal Bhanawat, Dharmesh Punamiya, Heera Karnawat, Hem Raj Surana, Hema Jain, Hema Kishore Bagmar, Hemlata Jain, Hemlata Kherada, Indira Kothari, Indu Kamleshji jain, Jagdish Jain, Javer N Shah, Jaya Bhandari, Johari Mal Chajjer, Jyoti Bhansali, Kalpana Dhakad, Kamal Chordia, Kamala Modi, Kamla Devi Satia, Kamla Singhvi, Kamlesh Gelada, Kanak Jain, Kanchan Bagmar, Kanchan Lodha, Kanhaiya Lal Jain, Kanwal Raj Mehta, Kapil Kothari, Khimji R Shah, Kiran Bagmar, Kiran Jain, kiran kothari, Kuntal Kumari Jain, Kushaboo Luniya, Kusum Pareshji punamiya, Kusum Singhvi, Lalita Ajit Bafna, Lalita Ganeshchandji Surana, Lalitha Gadiya, Lata Anchliya, Leena Mahendra Jain, Madanlal Baghmar, Madanlal Sancheti, Madhu bala Bohra, Mamta Bhandari, Mamta Jain (Sawaimadhopur), Manila Parakh, Manju Bhandari, Manju Dilip Jain, Manju Jain (Karauli), Manjula Vasant Kumarji Jain, Maya Alijar, Meena Chordia, Meena Vijay Bora, Meenakshi Laxmichandji Chhajer, Meera jain Lohia, Milap Lunawat, Mohan Kumari Lodha, Mohnot Hans Raj Jain, Monali Mishrimalji Pipada, Monika Jain, Munnalal Bhandari, Narendra Gopichand Bamb, Nathmal Kothari, Naurat Mal Changairiya, Navratan Mal Mehta, Neelam Chipad, Neelam Jain, Neelam jain, Nenchand Bafna, Nilima Yogesh Chopada, Nirmala Kothari, Nirmala Kumari Hirawat, Nirmala Rajendraji Bora, Nirmala Surana (Bikaner), Nirmala Vijayji Gundecha, Nutan Ajitji Bhandari, Padam Chand Agarwal, Padam Chand Munot, Padma R Bohra, Parasmal Baghmar, Patram Jain, Payal Rajendraji Kankariya, Pinky Jain, Pista Golecha, Pooja Nitin Bora, Poonam Jain, Prabha Gulecha, Prabha Kishan Kataria, Prakashbai Premchandji Bhurawat, Pramila B Pokhrna, Pramila Kailash Kothari, Pramila Mehta, Pramila Mehta (Dudu), Pramila Sajjanrajsa Mehta, Pramila Vinodkumar Bohara, Prasan Gang, Prasan Kothari, Premlata Lodha, Premlata Sand, Priyanka Mukesh Chopada, Pushpa Hastimal Golecha, Pushpa Jain, Pushpa Prakashchand Kankariya, R. Chandra Bothra, Raj Kumar Banthiya, Rajendra Kumar Jain, Rajesh Jain, Rajkumari Lodha, Ratan Karnawat, Ratanchand Mehta, Reema Jain, Rikhab Raj Bohra, Rishabh Jain, Roopa Jain, Sangeetha Baid, Sangita A Singavi, angita Nensukhji, Sangita Ravindra Chhajed, Sarita Manoj Babel, Sarla Golecha, Sarla Shantilalji Kankariya, Saroj Nahar, Saroj Parasmalji Runwal, Seema Dhing, Shaly Jain, Shashikala, Shashikala Pradeepji Lunawat, Sheelu Hirawat, Shilpa Surana, Shobha Nandlalji Gugale, Shobha Sagarmalji kothari, Siddhi Bafna, Smita Nileshji Muthiyan, Subhash M Dhadiwal, Sudha Bhansali, Sudha Daga, Sugan Chand Chhajer, Sumithra Nandawat, Sunita Doshi, Sunita Dulaj, Sunitha Y Singhvi, Surekha A Bhandari, Surekhaji Nahar, Suresh Chand Jain, Suresh Kumar Sand, Sureshchand Jain, Susheela S Surana, Sushila Begani, Sushila Hirawat, Sushila I Ranka, Sushila Kantilalji Runwal, Sushila Tater, Suvarna Nitinji Bora, Tara Bafna, Tej Karan Jain, Tilak Manjari Jain, Trupti pritamji Bora, Ugama Devi Dugar, Upma Choudhary, Urmila Kankariya, Usha Lunawat, Usha Mehta, usha Surana, Vandana Anil Khincha, Vandana Punamia, Varsha Dosi, Veena Tarunji Kimtee, Vidhya Sanghvi, Vijay Laxmi (Ajmer), Vijay Laxmi Mohnot, Vijayadevi Bagmar, Vikas Bamb, Vimala Bohra, Yashoda Manakchandji Gundecha.

24 एवं उससे कम अंक प्राप्तकर्ता– Chandanmal Parlecha, Dharm Chandsa Dhammani, Gyan Chand Kothari, Kamla Surana (Jodhpur), Komal Kothari, Manju Sandeepji Mutha, Rekha Kothari, Saroj Jain Tatiya, Urmila Mehta, Yugal Nemichand Ranka,Manju Kanstiya, R.T.Jain, Rakhi Jain, Ranulal Manakchandji Kocchar, Shakuntala Bohra, Shiromani Jain, Shobha Nahar, Sushma Dhariwal, Ugma Dosi, Vimla Ranulal Kochhar, Neetu Golecha, Kiran Pramod Tated.

समाचार-विविधा

विचरण-विहार एवं विहार दिशाएँ : एक नज़र में

(29 मार्च,2012)

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा 6	:	जैन कॉलोनी पुष्कर बिराज रहे हैं, अग्रविहार अजमेर की ओर चल रहा है।
परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा 5	:	सामायिक-स्वाध्याय भवन, नागौर में सुखसाता पूर्वक विराजमान हैं। अग्रविहार गोटन की ओर संभावित है।
सेवाभावी श्री नन्दीषेण जी म.सा. आदि ठाणा 5	:	महावीर कॉलोनी, अजमेर विराजमान हैं। महावीर जयन्ती के पश्चात् अग्रविहार किशनगढ़ संभावित है।
साध्वीप्रमुखा शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. आदि ठाणा 7	:	शक्तिनगर से विहार कर कांकरिया भवन, पावटा पधारे हैं। जोधपुर के उपनगरों को फरसने की संभावना है।
सेवाभावी महासती श्री संतोषकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 5	:	अजमेर विराज रहे हैं। अजमेर के उपनगरों को फरसने की संभावना है।
व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 9	:	जानकी नगर, इन्दौर विराज रहे हैं। इन्दौर के उपनगरों को फरसने की संभावना है।
तत्त्वचिंतिका महासती श्री रतनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 4	:	गोविन्दगढ विराज रहे हैं। अग्रविहार अजमेर की ओर चल रहा है।
विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 5	:	बुचकला विराज रहे हैं। अग्रविहार पीपाड़ की ओर चल रहा है।
विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 5	:	महारानी फार्म, जयपुर विराज रहे हैं। जयपुर के उपनगरों को फरसने की संभावना है।
व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 7	:	पुष्कर विराज रहे हैं। अग्रविहार अजमेर की ओर संभावित है।

व्याख्यात्री महासती श्री सरलेशप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा 3	: पुष्कर विराज रहे हैं। अग्रविहार अजमेर की ओर संभावित है।
सेवाभावी महासती श्री इन्दुबाला जी म.सा. आदि ठाणा 9	: चावण्डिया विराज रहे हैं। अग्रविहार मदनगंज की ओर संभावित है।
व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. आदि ठाणा 7	: तिरूकोइलुर विराज रहे हैं। अग्रविहार सेलम की ओर संभावित है।
व्याख्यात्री महासती श्री चारित्रलता जी म.सा. आदि ठाणा 4	: किलपाक विराज रहे हैं। उपनगरों को फरसने की संभावना है।
व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 5	: जलगाँव विराज रहे हैं। जलगांव के उपनगरों को फरसने की संभावना है।
महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा 4	: मीराकुर विराज रहे हैं। अग्रविहार सिकन्दरा की ओर संभावित है।
महासती श्री विमलेशप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा 4	: भवानी मण्डी विराज रहे हैं। अग्रविहार कोटा की ओर संभावित है।
व्याख्यात्री महासती श्री रुचिता जी म.सा. आदि ठाणा 3	: गेगल विराज रहे हैं। अग्रविहार अजमेर की ओर संभावित है।

विक्रम संवत् 2069 के अब तक घोषित चातुर्मास

परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने चैत्र कृष्णा षष्ठी, मंगलवार, दिनाँक 13 मार्च, 2012 एवं 1 अप्रेल, 2012 को मेड़ता सिटी में साधु मर्यादा में रखने योग्य आगारों के साथ विक्रम् संवत्-2069 के लिये निम्नांकित चातुर्मास घोषित किये हैं:-

जयपुर	-परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा
मेड़ता सिटी	-परम श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर पं. रत्न श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा
घोड़ों का चौक, जोधपुर	-साध्वीप्रमुखा शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा. आदि ठाणा।
बांदनवाड़ा (अजमेर)	-सेवाभावी महासती श्री संतोषकंवर जी म.सा. आदि ठाणा

सुभाष नगर-उज्जैन	- व्याख्यात्री महासती श्री तेजकंवर जी म.सा. आदि ठाणा
अरिहंत नगर-अजमेर	- तत्त्वचिंतिका महासती श्री रतनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा
कंवलियास	- विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा. आदि ठाणा
धनोप (भीलवाडा)	- व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा
कोयम्बटूर	- व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. आदि ठाणा
तिरुनामल्लै	- व्याख्यात्री महासती श्री चारित्रलता जी म.सा. आदि ठाणा
लासूर स्टेशन (महा.)	- व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवतीजी म.सा. आदि ठाणा
हिण्डौन सिटी	- व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा आदि ठाणा
अलीगढ़-रामपुरा	- सेवाभावी महासती श्री विमलेशप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा
विज्ञाननगर-कोटा	- व्याख्यात्री महासती श्री रूचिता जी म.सा. आदि ठाणा

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का 74वाँ जन्म-दिवस तप-त्याग पूर्वक मनाया गया

परमाराध्य संघ शिरोमणि, रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर, आचार-निष्ठ जीवन के प्रबल प्रेरक आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का 74वाँ जन्म-दिवस चैत्र कृष्णा अष्टमी, 15 मार्च 2012 को देश के विभिन्न ग्राम-नगरों में तप-त्याग पूर्वक मनाया गया। अनेक स्थानों पर गुणानुवाद सभा भी आयोजित की गई।

भक्तिनगरी मेड़ता में परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर के सान्निध्य में संतों एवं महासतियों के द्वारा गुणानुवाद किया गया। महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्र मुनि जी म.सा. ने इस अवसर पर अपनी भावाभिव्यक्ति करते हुए फरमाया कि आज का पावन दिवस धर्म के आदि संस्थापक भगवान् आदिनाथ एवं जिनशासन के गौरव, संघ शिरोमणि आचार्य श्री हीराचन्द्र जी महाराज के गुणगान करने का दिन है। गुरु के चरण मिलने पर रोम-रोम खिल जाता है और आस्था से साधना का मार्ग सुगम हो जाता है। आपमें आगम में निरूपित अनेक गुण अखूट रूप से भरे हुए हैं। आचार्यप्रवर अपने आराध्य गुरुदेव के प्रति पूर्णतः समर्पित रहे। आपश्री के शासन काल में दीक्षित होने वाले 69 साधकों में से 63 साधक-साधिका आराधना कर रहे हैं। आप सरलहृदय हैं। आचार्य पद पर आसीन होते हुए भी ऋजु हैं, मन-वाणी से निश्छल हैं, मान-प्रतिष्ठा से विलग रहते हैं तथा विलग रहकर निर्मल साधना में संलग्न रहते हैं, संघ का कुशलतापूर्वक संचालन कर रहे हैं। आचार्यप्रवर को संतों की सेवा करते हुए हमने प्रत्यक्ष देखा है, आप अमायी हैं, संघ की खूब सेवा कर रहे हैं। आचार्य भगवन्त स्वस्थ रहें, यही सबकी भावना है-

हाँ हाँ हम सब, सब करें शुभकामना।

सदा स्वस्थ रहे गुरु हमारे, यही हमारी भावना।।

आप स्वस्थ शरीर एवं स्वस्थ मन से संघ का संचालन करते रहें तथा संघ की गौरव-गरिमा अक्षुण्ण रहे, यही मंगल भावना है।

तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनि जी म.सा. ने इस अवसर पर भावों को अभिव्यक्त करते हुए फरमाया कि मानव जीवन की सार्थकता यही है कि आयुष्य का बंध नहीं हो। आगामी भवों को सीमित करने वालों के गुणगान गाए जाते हैं। चतुर्विध संघ को अपने आलोक से प्रकाशित करने वालों के गुण गाए जाते हैं। आचार्य भगवन्त पंचाचार की निर्मल आराधना में अपनी ऊर्जा का प्रयोग कर रहे हैं। आप यशस्वी, वर्चस्वी, मनस्वी हैं, आपकी कृपा से प्रतिदिन सत्य की नई अनुभूति हो रही है। आपकी आराधना में जितना अनुरत रहेंगे, कल्याणकारी है। आपकी तेजस्विता से संघ दीप्तिमान हो रहा है। आपकी छत्रछाया मिलती रहे, आपके विनय एवं सौहार्द के गुण ग्राह्य हैं।

श्रद्धेय श्री योगेशमुनि जी म.सा. ने फरमाया कि आचार्यप्रवर के जीवन का प्रमुख गुण धीरज है। प्रभु आदिनाथ को लगभग साढे बारह महीने अन्न नहीं मिला, फिर भी सब्र रहा। जिसमें सब्र होता है वह समता से सब सहन कर लेता है। हमारे आचार्यप्रवर भी धीर-वीर-गंभीर है। धैर्यवान होने के साथ आप सहजता से रहते हुए स्वाध्याय में रत रहते हैं। श्रद्धेय श्री मनीषमुनि जी म.सा. ने वात्सल्य के वारिधि पूज्य गुरुदेव को नमन करते हुए फरमाया कि गुरुवार के दिन गुरुदेव का जन्मदिन है। गुरु- आचार्यप्रवर का जन्म-दिवस एवं देव-भगवान् आदिनाथ का जन्म-कल्याणक है। मेरे गुरु एवं देव का जीवन परिपूर्णता से भरा हुआ है। सद्गुरु मिलना कठिन होता है, मात्र नामधारी, वेशधारी गुरु से सद्गुणों का विकास नहीं होता। गुणी व्यक्ति ही संघ का गणी बन सकता है। हम गुणों का वर्णन कर गुणों का वर्द्धन करें। आज अक्षय ज्ञान मिलाने का दिन है। आचार्य श्री का जीवन कल्पना का नहीं, कल्प का है। कल्पना में रहने वाला उड़ता है और कल्प में रहने वाला ऊँचा उठता है। आचार्यप्रवर को उत्तराध्ययन सूत्र एवं नन्दीसूत्र ये दो प्रिय आगम हैं। आज के भक्त रागी हैं, राही नहीं। आचार्यप्रवर सूत्र दे रहे हैं-रागी नहीं राही बनो। श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनि जी म.सा. ने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि महात्मा की शरण में जाकर आत्मा धर्म को समझता है। गुरु ही धर्म का मर्म समझाते हैं, गुरु के प्रति समर्पण से ही आत्मा आगे बढ़ती है। गुरुदेव चन्द्रमा की तरह इस संघ में शोभायमान हैं।

तत्त्वचिन्तिका महासती श्री रतनकंवर जी म.सा. ने फरमाया कि आचार्यप्रवर का 74वाँ जन्म-दिवस प्रेरणा दे रहा है कि हे मुमुक्षु भव्य आत्माओं! अपनी आत्मा को भवसागर से तिरने के लिए उद्यत रहो। महासती श्री सरलेशप्रभा जी ने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि

अष्टमी का चन्द्र समत्व का सूचक होता है। वह न घटने, न बढ़ने की स्थिति है। आचार्यप्रवर भी समत्व के पुँज हैं, हम उनके गुणगान कर रहे हैं, किन्तु वे निर्लेप भाव से स्वाध्याय में लीन हैं। आप अनुशासन को प्राथमिकता देते हैं। मोक्ष के चारों पाए आपके भीतर अवस्थित हैं। आपके दर्शन से मन की दुविधा का निवारण हो जाता है। मेड़ता संघ भाग्यशाली है, जिसे शेषकाल का अधिक समय एवं जन्म-दिवस मनाने का पावन प्रसंग मिला। महासती श्री विनीतप्रभा जी, महासती श्री सुयशप्रभा जी, महासती श्री उषा जी, महासती श्री जागृतिप्रभा जी, महासती श्री सिद्धिप्रभा जी ने भी अपने विचार व्यक्त किए। उन्होंने आचार्य भगवन्त के दीर्घायु होने की कामना की। महासती श्री जागृतिप्रभा जी ने कहा कि गुरुदेव की प्रवचन शैली हर एक के मन को आकर्षित कर लेती है। गुरु भगवन्त में विनय गजब का है। सभी के साथ प्रेमपूर्ण एवं सौहार्दपूर्ण व्यवहार झलकता है। वे 49 वर्ष से शुद्ध निर्मल संयम का पालन कर रहे हैं।

श्रद्धेय श्री मोहनमुनि जी ने फरमाया कि मैं 74 वर्ष की उम्र में गुरुदेव की शरण में आया। गुरुदेव ने मुझे असीम स्नेह दिया है। आपकी कृपा से संयम साधना हो रही है। सभी संत मुझे बराबर संभाल रहे हैं। आप दीर्घायु हों, यही कामना है। नवदीक्षित संत श्री आशीष मुनि जी ने फरमाया कि जब मैं गुरु चरणों में आया तब मात्र नवकार मंत्र जानता था, गुरुदेव के सान्निध्य में निरन्तर नया सीखने को मिल रहा है। उन्होंने कहा कि गुरुदेव को बोलने की जरूरत नहीं होती, उनका जीवन बोलता है। गुरुदेव स्वाध्याय करते समय आत्म-साधना में ऐसे तल्लीन हो जाते हैं कि आगत पर दृष्टि ही नहीं पड़ती।

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर ने इस अवसर पर अपने उद्गार व्यक्त करते हुए फरमाया कि गुरु भगवन्त से उनके जन्मदिन पर तीन बातें सुनी थी कि यह दिन स्नेहियों के लिए बधाई का दिन है, श्रद्धालुओं के लिए समर्पण का दिन है और आत्म-साधकों के लिए आत्म-गुणों के विकास करने का दिन है। इस दिन उपकारियों को याद किया जाता है। गुरुदेव से सुना था- जिन्होंने आपको संस्कार दिए, उन संस्कारों का आप जितना उपयोग कर सकते हो, करो। उपकारियों से जो संस्कार पाएँ हैं, उनका स्मरण करो। मैं इन बातों पर कितना खरा उतर रहा हूँ इस पर चिन्तन करें। संसार समरस नहीं है, अतः समाधि कैसे रह सकती है, समाधि कैसे बढ़ सकती है, अन्तिम क्षण तक हमारी समाधि बनी रहे, ऐसा प्रयत्न रहे तो कभी यह जन्म भी कल्याणक बन सकता है।

श्रावकरत्न श्री हस्तीमल जी डोसी ने अपनी भावाभिव्यक्ति के साथ धर्मसभा का सुन्दर संचालन किया। इस अवसर पर मुम्बई, ब्यावर, पाली, जोधपुर, चेन्नई, जयपुर, कोटा, गोटन आदि स्थानों से श्रद्धालु भाई-बहिन उपस्थित हुए तथा 101 उपवास, एकाशन एवं दयाव्रत की आराधना हुई।

नागौर में परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा., मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि के सान्निध्य में तथा साध्वीप्रमुखा, शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. एवं अन्य सभी महासती मण्डल के सान्निध्य में विभिन्न स्थानों पर परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का 74 वां जन्मदिवस तप-त्याग एवं सामायिक-साधना पूर्वक मनाया गया। सभी स्थानों पर आचार्यप्रवर के प्रभावी व्यक्तित्व, दृढ़ संकल्प, उच्च सोच, दूरदर्शिता, सरलता, आत्मीयता, उदारता, आचार निष्ठा आदि गुणों की चर्चा की गई। सवाईमाधोपुर आदि स्थानों पर उपवास, एकाशन, आयंबिल एवं सामायिक-साधना की गई।

फाल्गुनी पूर्णिमा पर विभिन्न विनतियाँ

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के सान्निध्य में फाल्गुनी पूर्णिमा पर मेड़ता शहर के वीर भवन में गोपालगढ़, गोटन, सवाईमाधोपुर, आलनपुर, अलीगढ़-रामपुरा, नदबई, जयपुर, धनोप, मेड़तासिटी, कोसाणा, विज्ञाननगर कोटा, बीजापुर, बांदनवाड़ा चौराहा, हिण्डौन सिटी, चेन्नई, हरसाना, कुशतला, लासूर स्टेशन आदि विभिन्न स्थानों के श्रावकों ने धर्म लाभ लिया तथा अपने-अपने क्षेत्र में चातुर्मास हेतु विनतियाँ प्रस्तुत कीं। श्री हस्तीमल जी डोसी ने कहा कि आचार्य भगवन्त ने अनंत कृपा कर भक्ति नगरी मेड़ता को पावन किया है। जयपुर संघ की ओर से श्री विमलचन्द जी डागा, सवाईमाधोपुर की ओर से श्री राधेश्याम जी गोटेवाला, मेडताशहर की ओर से श्री हस्तीमल जी डोसी, भोपालगढ़ की ओर से श्री नेमीचन्द जी कर्णावट, कोसाणा की ओर से श्री बुधमल जी बोहरा, विज्ञाननगर कोटा की ओर से श्री प्रेमचन्द जी जैन, आलनपुर की ओर से श्री जम्बूकुमार जी जैन, अलीगढ़-रामपुरा की ओर से श्री घनश्याम जी जैन, धनोप की ओर से श्री लोढ़ा जी, बांदनवाड़ा की ओर से श्री हेमराज जी हींगड़, नदबई की ओर से श्री ज्ञानचन्द जी जैन ने अपने-अपने क्षेत्रों की ओर से भावभीनी विनतियाँ प्रस्तुत कीं।

आचार्यप्रवर के 50 वें दीक्षा वर्ष के उपलक्ष्य में 50 ग्रीष्मकालीन धार्मिक शिक्षण शिविरों का आयोजन

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के तत्त्वावधान में आचार्य-भगवंत 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के 50 वें दीक्षा वर्ष के उपलक्ष्य में भारत के विभिन्न क्षेत्रों में 50 धार्मिक शिक्षण शिविरों का आयोजन ग्रीष्मकालीन अवकाश में किया जायेगा। अतः अनुरोध है कि बालक-बालिकाओं में धार्मिक एवं नैतिक संस्कारों के बीजारोपण करने हेतु अपने क्षेत्र में शिविरों का आयोजन करावें। अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें- जितेन्द्र डागा (उत्तर

भारत), जयपुर (09829011589), राजेन्द्र लुंकड़ (दक्षिण भारत), ईरोड़ (09360025001)

उपाध्यायश्री मानचन्द्र जी म.सा. के 50 वें दीक्षा-दिवस के उपलक्ष्य में निबन्ध प्रतियोगिता

श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, जयपुर द्वारा परमश्रद्धेय पं. रत्न उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. के 50 वें दीक्षा-दिवस (दिनांक 4 मई 2012) के उपलक्ष्य में "संयम-जीवन : आदर्श जीवन" विषय पर निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है। सर्वश्रेष्ठ 3 प्रतियोगियों को क्रमशः 3100/-, 2100/-, 1100/- एवं 5 सान्त्वता पुरस्कार प्रत्येक को 500/- सम्मानपूर्वक नकद प्रदान किए जाएंगे। प्रतियोगी को 1000 से 1200 शब्दों तक सुपाठ्य अक्षरों में हस्तलिखित या टंकित निबन्ध दिनांक 31 मई, 2012 तक अध्यक्ष- श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, द्वारा सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.) के पते पर प्रेषित करना होगा। -*उर्मिला बोथरा, अध्यक्ष*

महाराष्ट्र क्षेत्र में आध्यात्मिक प्रचार-यात्रा सम्पन्न

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर द्वारा दिनांक 25 से 01 मार्च 2012 तक महाराष्ट्र क्षेत्र के पारोला, मुकटी, फागणा, धुलिया, पिंपलनेर, ताहराबाद, जायखेड़ा, सटाणा, देवला, वर्णी, पिंपलगांव राजा, नाशिक रोड, नाशिक सिडको, सिन्नर, निफाड़, विंचुर, वैजापुर, लासुर स्टेशन, नांदगांव, शेन्दुर्णी, चालीसगांव, भडगांव, पाचोरा, वरखेड़ी, पहुर आदि क्षेत्रों में प्रचार एवं सम्पर्क कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस प्रचार कार्यक्रम में श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ के सचिव श्री राजेश जी भण्डारी-जोधपुर, वरिष्ठ स्वाध्यायी एवं स्वाध्याय संघ पूर्व सचिव श्रीमती मोहनकौर जी जैन-जोधपुर, महाराष्ट्र जैन स्वाध्याय संघ के प्रचारक श्री हीरालाल जी मण्डलेचा-जलगांव एवं श्री मनोज जी संचेती-जलगांव, स्वाध्याय संघ कार्यालय सहायक श्री धीरज जी डोसी-जोधपुर की महनीय सेवाएँ प्राप्त हुईं। सभी स्थलों पर नये स्वाध्यायी बनने, पर्युषण में स्वाध्यायी बुलाने, शिक्षण बोर्ड की परीक्षाओं में भाग लेकर ज्ञानवृद्धि करने, धार्मिक पाठशाला प्रारम्भ करने के साथ ही संघ एवं संघ की सहयोगी संस्थाओं की गतिविधियों से अवगत कराया गया। कार्यक्रम के दौरान शिक्षण बोर्ड के नये केन्द्रों की स्थापना की गई, आगामी परीक्षा हेतु 37 आवेदन पत्र भरवाये गये, 15 नये स्वाध्यायी बनाये गये, पुराने स्वाध्यायियों की इस वर्ष सेवा देने हेतु स्वीकृति प्राप्त की गई एवं बोर्ड के पूर्व संचालित केन्द्रों की समीक्षा की गई।

शिक्षण बोर्ड के 3 नये केन्द्र खोले गए। पर्युषण में स्वाध्यायी आमंत्रित करने हेतु प्रेरणा की गयी। जिनवाणी के 20 सदस्य भी बनाये गये। स्वाध्याय शिक्षा के 6 सदस्य बनाये गये। सभी स्थानों पर स्थानक में आकर सामूहिक प्रार्थना एवं स्वाध्याय करने की प्रभावी प्रेरणा करने के साथ ही अधिकांश स्थानों पर इस हेतु प्रत्याख्यान भी करवाए गए।

'हीरा प्रवचन-पीयूष' (भाग-1,2,3,4) पर खुली पुस्तक प्रतियोगिता

परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के 50 वें दीक्षा-दिवस (19 नवम्बर, 2012) के उपलक्ष्य में श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, शाखा जयपुर द्वारा धार्मिक ज्ञान में अभिवृद्धि हेतु सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर से प्रकाशित पुस्तक "हीरा प्रवचन पीयूष" भाग-1,2,3,4 पर खुली पुस्तक प्रतियोगिता का आयोजन दो खण्डों में किया जा रहा है। दोनों खण्डों की प्रतियोगिता पृथक् पृथक् दिनांक से प्रारम्भ होगी। इस प्रतियोगिता में सभी जैन-अजैन भाई-बहिन भाग ले सकते हैं। प्रतियोगी को दोनों खण्डों की परीक्षा देना अनिवार्य होगा।

प्रतियोगिता में शत प्रतिशत अंक प्राप्त करने पर सम्मान राशि 51,000/-(एक),सर्वाधिक अंक प्राप्त करने पर सम्मान राशि 21,000/-(एक) , सुपर टॉप टेन के अन्तर्गत सम्मान राशि 1000/- (दस) व प्रोत्साहन सम्मान के अन्तर्गत (900 से अधिक अंक प्राप्त करने वाले) प्रतियोगियों को राशि 100/- दिया जाना प्रस्तावित है।

प्रथम खण्ड की प्रश्न पुस्तिका वितरण तिथि चैत्र कृष्णा 8 (आचार्य-प्रवर का 74 वां जन्म-दिवस) 15 मार्च, 2012 से 14 मई, 2012 तक है तथा उत्तर पुस्तिका जमा कराने की अन्तिम तिथि 30 जून, 2012 रखी गयी है।

द्वितीय खण्ड की प्रश्न पुस्तिका वितरण तिथि 3 जुलाई, 2012 से 2 सितम्बर, 2012 तक है तथा उत्तर पुस्तिका जमा कराने की अन्तिम तिथि 3 अक्टूबर, 2012 रखी गयी है।

प्रश्न पुस्तिका मूल्य (प्रत्येक का) 30/-तथा डाक से मंगाने पर 40/- रखा गया है।

पुस्तक के प्रत्येक भाग का मूल्य 25/-निर्धारित है। जिसे डाक व्यय राशि सहित अग्रिम भिजवाकर निम्न स्थानों से प्राप्त किया जा सकता है।

प्रश्न पुस्तिका व पुस्तक प्राप्ति हेतु विशेष स्थान:-

(1) सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-

302003 (राज.) फोन नं. 0141-2575997, 2570753

(2) श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001(राज.) फोन नं. 0291-2624891

(3) Smt. Rupal R. Kankariya, 79, Audiappa Naicken Street, Sowcarpet, Chennai-600079, Ph. 044-42728067, 09789885148

(4) Shri M. Yaswantraj Ji Shankhala, 7-Wood Street, Shuie, Ashok Nagar, Bangaluru-560025, Ph. 080-25543938, 09845019669

(5) श्रीमती शान्ताजी नाहर, ई-2, अरेरा कॉलोनी,भोपाल-462001(म.प्र.) फोन नं. 0755-2460965

(6) श्रीमती नयनतारा जी बाफणा,'नयनतारा' सुभाष चौक, जलगांव-425001 (महा.) 0257-2225903

(7) श्री पारसमलजी चौरडिया, व्ही पारस भैय्या, पुराने कैलाश टाकीज के सामने, उज्जैन (म.प्र) मो. 09827046567

(8) श्रीमती मंजू जी जैन, 1201, एटलांटा हाई, के.जी. मार्ग, सिद्धि विनायक मंदिर के पीछे, प्रभा देवी, मुम्बई-400025,फोनः 022-24223693, 09820388903

(9) श्री बसन्त जी जैन, ई-301, प्लेजेन्ट पार्क, मूवी टाइम सिनेमा के सामने, एवर-शाइन नगर, मलाड (W), मुम्बई, फोन 022-28810702, 09820350814

प्रश्न पुस्तिका जमा कराये जाने हेतु स्थान:-

(1) सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.) फोन नं. 0141-2575997, 2570753

निवेदक:

(डॉ. मंजुला बम्ब)	(उर्मिला बोथरा)	(मीना गोलेच्छा)	(पूर्णिमा लोढ़ा)
09314292229	09314501856	09314466039	09829019396

श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, जयपुर

कार्यालय-501,रायल अबोर्ड,ए-7,

विजय पथ, तिलक नगर, जयपुर- 302004 (राज.)

आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान, जयपुर में उच्च शिक्षण हेतु प्रवेश का स्वर्णिम अवसर

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर 1008 श्री हस्तीमल जी म.सा. की प्रबल प्रेरणा से सन्

1973 में संस्थापित एवं गजेन्द्र चेरिटेबल ट्रस्ट द्वारा संचालित आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान, जयपुर में नैतिक संस्कारों के साथ आध्यात्मिक शिक्षण करते हुए विद्यालय, महाविद्यालय, प्रोफेशनल एवं प्रशासनिक स्तर का उच्च शिक्षण प्राप्त करने के इच्छुक सम्पूर्ण भारतवर्ष के जैन विद्यार्थियों से संस्थान में प्रवेश हेतु आवेदन आमंत्रित हैं। विगत 38 वर्षों में यहाँ से अध्ययन कर लगभग 110 विद्यार्थी वर्तमान में प्रशासनिक, राजकीय एवं व्यवसायिक क्षेत्रों में सेवारत हैं।

संस्थान में प्रवेश हेतु प्रक्रिया-

1. संस्थान में प्रवेश का मुख्य आधार बालकों का प्रतिभाशाली होना रहेगा।
2. कक्षा दसवीं उत्तीर्ण करने के पश्चात् विद्यालय, महाविद्यालय के सभी संकाय में अध्ययनरत विद्याथियों को प्रवेश दिये जायेंगे।
3. संस्थान में प्रवेश हेतु विद्यार्थी का शैक्षणिक स्तर पर 80 प्रतिशत या अधिक अंक होना प्राथमिकता रहेगा।
4. बालकों का नैतिक आचरण स्वच्छ पाये जाने पर ही उन्हें प्रवेश दिया जाना संभव है।
5. प्राप्त आवेदनों में से शैक्षणिक व आध्यात्मिक योग्यतानुसार चयनित छात्र ही प्रवेश हेतु लगाये जाने वाले शिविर में आमंत्रित किये जायेंगे।
6. संस्थान में चयन के लिए शिविर आयोजित किया जायेगा, जिसकी सूचना दूरभाष से दी जायेगी।

नियम एवं सुविधाएँ-

1. संस्थान में अध्ययनानुकूल उचित आवास एवं भोजन की व्यवस्था।
2. संस्थान अधिष्ठाता हर समय संस्थान में ही उपस्थित।
3. विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास हेतु अंग्रेजी एवं विविध विषयों पर विशेष आमंत्रित महानुभावों द्वारा अभिप्रेरणा एवं कार्यशाला का आयोजन।
4. सुसज्जित पुस्तकालय एवं कम्प्यूटर शिक्षण की उत्तम व्यवस्था।
5. विद्यार्थियों को स्कूल एवं महाविद्यालय के अध्ययन के साथ संस्थान द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम का अध्ययन अनिवार्य है।
6. संस्थान द्वारा निर्धारित अन्य नियमों एवं उपनियमों का पालन अनिवार्य।

जो भी विद्यार्थी नैतिक एवं आध्यात्मिक संस्कारों के शिक्षण के साथ विद्यालय, महाविद्यालय, प्रोफेशनल एवं प्रशासनिक स्तर के उच्च शिक्षण हेतु संस्थान में प्रवेश लेना चाहते हैं, वे दिनांक 25 अप्रेल, 2012 तक प्रवेश आवेदन पत्र भरकर निम्न पते पर प्रेषित

करावें एवं आवेदन पत्र के प्रारूप हेतु सम्पर्क करें- **श्री दिलीप जैन,** *अधिष्ठाता, आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान, ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर-302015 (राज.) फोन: 0141-2710946, 094614-56489,* Email : ahassansthan@gmail.com

7 मई को आयोज्य वीतराग ध्यान शिविर की नियमावली

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के सान्निध्य में एवं तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा. के मार्गदर्शन में मदनगंज-किशनगढ़ के आर.के. मार्बल कम्यूनिटी सेण्टर में 7 मई से 17 मई 2012 तक आयोज्य वीतराग ध्यान-साधना शिविर के लिए निर्धारित नियमावली इस प्रकार है-

वीतराग ध्यान साधना का प्रमुख उद्देश्य है कि पारम्परिक द्वेष और द्रोह के दुर्गुणों से छुटकारा पाया जा सके, सांप्रदायिकता एवं संकीर्ण जातीयता के विषैले अहंभाव के बंधनों से उन्मुक्त हो सकें। एक सुखी समाज का स्वस्थ स्वरूप बन सके, आत्म मंगल की भावनाओं से परिपूर्ण विधेयात्मक और सृजनात्मक जीवन जीकर अपना जीवन सुधार सकें।

ध्यान साधना राग, द्वेष और मोह से विकृत हुए चित्त को निर्मल बनाने की साधना है। दैनिक जीवन के तनाव-खिंचाव से गांठ-गँठीले हुए चित्त को ग्रंथि-विमुक्त करने का सक्रिय अभ्यास है।

वीतराग-ध्यान अध्यात्म की ऊँची साधना है। परन्तु शरीर के अनेक रोग मन पर आधारित होने के कारण चित्त शुद्धि के फलस्वरूप ठीक हो जाते हैं। परन्तु साधक कहीं इन रोगों के उपचार को ही मुख्य उद्देश्य बना कर शिविर में शामिल न हो, लक्ष्य आध्यात्मिक ही होना चाहिए।

1. **स्वानुशासन**- साधना सीखने के लिए 07 मई 2012 से 17 मई 2012 की अवधि वास्तव में बहुत कम है। एकांत व अभ्यास की निरंतरता बनाए रखना बहुत आवश्यक है। अतः शिविरार्थियों को प्रवेश के पश्चात् 17 मई, 2012 की दोपहर 12 बजे तक शिविर स्थल पर ही रहना होगा। बीच में शिविर छोड़ कर नहीं जा सकेंगे। इस अनुशासन-संहिता के अन्य सभी नियमों का पालन निष्ठा और गंभीरतापूर्वक कर सकते हों तभी शिविर में प्रवेश पाने के लिए आवेदन करें।
2. **शील पालन**- शिविर के दौरान निम्न शीलों का पालन अनिवार्य हैं- 1. जीव हत्या से विरत रहेंगे, 2. असत्य भाषा से विरत रहेंगे,। 3. चोरी से विरत रहेंगे, 4. अब्रह्मचर्य

(मैथुन) से विरत रहेंगे, 5. नशे के सेवन से विरत रहेंगे, 6. शृंगार-प्रसाधन एवं मनोरंजन से विरत रहेंगे, 7. ऊँची आरामदेह विलासी शय्या के प्रयोग से विरत रहेंगे।

3. **पूर्ण मौन-शिविर-** आरंभ होने से लेकर साधना अवधि तक साधक पूर्ण मौन अर्थात् वचन एवं शरीर से भी मौन का पालन करेंगे। शारीरिक संकेतों से या लिख-पढ़कर विनिमय भी न करें। अत्यंत आवश्यक हो तो व्यवस्थापक से बोलने की छूट है। परंतु ऐसे समय में भी कम से कम, जितना आवश्यक हो उतना ही बोलें। वीतराग ध्यान साधना व्यक्तिगत अभ्यास है। अतः हर साधक अपने आप को अकेला समझता हुआ एकांत साधना में ही रत रहे।

4. **पुरुषों और महिलाओं को पृथक्-पृथक् रहना-** आवास, अभ्यास, अवकाश और भोजन आदि के समय सभी पुरुषों और महिलाओं को पृथक्-पृथक् रहना अनिवार्य है।

5. **बाह्य संपर्क-** शिविर के पूरे काल में साधक कोई भी बाह्य संपर्क न रखे। वह केन्द्र के परिसर में ही रहे। इस अवधि में किसी से टेलीफोन-मोबाइल अथवा पत्र द्वारा भी संपर्क न करे। कोई अतिथि आये तो वह व्यवस्थापक से ही संपर्क करेगा।

6. **नम्रतापूर्वक ध्यान की ही प्रधानता-** परमेष्ठी स्मरण, पाप त्याग की साधना, संवर, सामायिक, सायंकाल प्रतिक्रमण के अतिरिक्त शेष समय ध्यान में ही लगाना।

7. केन्द्र की साधना-स्थली में धूम्रपान करने अथवा जर्दा-तम्बाकू-गुटखा खाने की सख्त मनाही है। कुछ दवाएँ ध्यान साधना में प्रतिकूल होने के कारण नहीं ली जानी चाहिए। फिर भी रोगी साधक दवाएँ अपने साथ अवश्य लाएं, परन्तु सेवन के बारे में व्यवस्थापक से परामर्श करें।

8. **पढ़ना-लिखना-** साधक किसी भी विषय की पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएँ व लेखन सामग्री अपने साथ नहीं लाएं। ध्यान रहे वीतराग ध्यान साधना पूर्णतया प्रयोगात्मक विधि है। 10 दिन पूर्णतया ध्यान साधना में संलग्न रहना है।

9. सभी साधना सत्रों, निर्देशों व प्रवचन के सत्र में ध्यान कक्ष में रहना अनिवार्य है। उठकर बाहर जाना मना है।

10. साधना काल में भोजन सात्त्विक ही रहेगा।

11. 7 मई, 2012 को दोपहर 2 बजे साधना स्थल पर पहुँचना अनिवार्य है।

12. अपने दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा तेल, साबुन, मंजन, ब्रुशादि तथा ओढने-बिछाने की चद्दरें, घड़ी, ताला, पानी का साधन (बोतल या केन) साथ लाएँ।

13. सहभागिता आवेदन पत्र 27 अप्रैल, 2012 तक निम्नांकित पते पर पहुँच जाना चाहिए-

श्रीमती शांताजी मोदी, सी-26, देवनगर, टोंक रोड़, जयपुर(राज.), फोन नं.-0141-2710077, मोबाइल-93144-70972, सहभागिता आवदेन पत्र website :www.prakritbharati.com पर भी उपलब्ध है।

जैन धर्म से संबंधित डाक टिकिट जारी होंगे

उदयपुर- भारत सरकार के डाक विभाग की ओर से इस वर्ष दिगम्बर जैनसंत आचार्य ज्ञानसागर जी म. पर स्मारक डाक टिकिट जारी होगा। ये प्रथम दिगम्बर जैन संत होंगे जिनके सम्मान में यह जारी होगा। अहिंसा विचार मंच के अध्यक्ष डॉ. दिलीप धींग ने बताया कि इसी क्रम में राजस्थान पत्रिका के संस्थापक पत्रकार व स्वतंत्रता सेनानी श्री कर्पूरचंद्र कुलिश (कोठारी-जैन) की स्मृति में 20 मार्च, 2012 को एवं मुम्बई (महाराष्ट्र) के अतिप्राचीन गोडीजी जैन मंदिर पर डाक टिकिट 1 मई, 2012 को जारी होगा।

उल्लेखनीय है कि अभी तक तीन स्थानकवासी संतों व एक स्थानकवासी साध्वी पर जिनमें जैन मुनि मिश्रीमल (24.08.1991), आचार्य आनन्दऋषि (01.08.2002) व जैनाचार्य जयमल (25.09.2011), साध्वी उमरावकुवंर अर्चना (30.04.2011) पर डाक टिकिट जारी हुआ था। तेरापंथ के आचार्य तुलसी पर (20.10.1998) व आचार्य भिक्षु (30.06.2004) तथा मूर्तिपूजक समाज के जैनाचार्य वल्लभसूरि पर (21.02.2009)भी डाक टिकिट जारी हुए हैं।

इसके अलावा जैन समाज के गौरवशाली व्यक्तियों पर डाक विभाग ने स्मारक डाक टिकिट जारी किए हैं जिनमें प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. डी.एस.कोठारी, जगदीशचन्द्र जैन, वैज्ञानिक डॉ. विक्रम अंबालाल साराभाई, दानवीर भामाशाह, वी. शांताराम, डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी, इन्द्रचन्द्र शास्त्री, जवाहरलाल दर्डा, बालचन्दहीराचन्द, हरकचन्द नाहटा, वीरचन्द राधव गाँधी इसके अलावा अनेक मंदिरों व प्रतीक चिह्नों पर डाक टिकिट जारी हुए हैं।

फिल्म "पापा, तुम कहाँ हो"? घर बैठे देखिये

मुम्बई- प्रख्यात सामाजिक कार्यकर्ता, कवि, पत्रकार और लेखक युगराज जैन द्वारा निर्मित सामाजिक हिन्दी फीचर फिल्म 'पापा, तुम कहाँ हो' इंटरनेट के यू टयूब पर दो महीने में 30 हजार बार देखी जा चुकी है। यू टयूब पर डाउनलोड सभी पारिवारिक फिल्मों की श्रेणी में यह फिल्म दर्शकों की पहली पंसद बनी हुई है। अब तक करीबन एक हजार शो विभिन्न शहरों में हो चुके हैं।

गौरतलब है कि सामाजिक नासूर बन चुके 'तलाक' के दुष्परिणामों पर आधारित फिल्म 'पापा! तुम कहाँ हो' को पिछले दिनों मुंबई की सबसे बड़ी फैमिली कोर्ट के सभी जजों

के द्वारा देखा गया। उपस्थित सभी जजों ने फिल्म निर्माता युगराज जैन को धन्यवाद देते हुए कहा कि यह फिल्म देश के सभी फैमिली कोर्ट में दिखायी जानी चाहिए। यह फिल्म देखकर कई तलाकशुदा पति पत्नी पुनः साथ में रहने लगे हैं, यही इस फिल्म की सार्थकता है।

द्वितीय जैन ग्लोबल वैज्ञानिक सम्मेलन

उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी महाराज के सान्निध्य में तथा ज्ञानसागर साइंस फाउण्डेशन, नई दिल्ली के अध्यक्ष, युवा वैज्ञानिक डॉ. संजीव सोगानी के कर्मठ नेतृत्व में श्री चन्द्रप्रभ दिगम्बर जैन मन्दिर, भूलेश्वर, मुम्बई के तत्त्वावधान में 7-8 जनवरी, 2012 को ग्लोबल वैज्ञानिक सम्मेलन आयोजित किया गया। सम्मेलन में 20 प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों ने अपने-अपने क्षेत्र के अनुसंधानों एवं कार्यों पर प्रकाश डाला। संगोष्ठी में अभिव्यक्त कुछ विचार हैं- 1. नाभिकीय ऊर्जा एक ऐसा स्रोत है जो पर्यावरण को बिना नुकसान पहुँचाए सामाजिक एवं आर्थिक उन्नति कर सकता है। यह जैन धर्म के सिद्धान्त के अनुरूप है। 2. संगोष्ठी का मुख्य उद्देश्य था विज्ञान के विभिन्न आयामों को समझना तथा उनमें छुपे अध्यात्म को खोजना। 3. विज्ञान गति देता है तो धर्म दिशा देता है, धर्म के साथ विज्ञान विकास का कारण बन सकता है।

प्राच्य विद्यापीठ शाजापुर में शोधकार्य

प्राच्य विद्यापीठ, शाजापुर की शोध छात्रा साध्वी श्री प्रमुदिता श्री जी एवं कुमारी तृप्ति जैन को क्रमशः उनके शोध-प्रबन्धों "जैन दर्शन में संज्ञा (व्यवहार के प्रेरक तत्त्व) की अवधारणा" एवं "जैन धर्म-दर्शन में तनाव प्रबन्धन (Stress Managment)" पर जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय (लाडनूँ, राजस्थान) द्वारा पी-एच्.डी की उपाधि प्रदान की गई। ये शोध-प्रबन्ध प्राच्य विद्यापीठ, शाजापुर के संस्थापक-अन्तरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त जैन विद्वान डॉ. सागरमल जी जैन के निर्देशन में पूर्ण किये गये।

ज्ञातव्य है कि प्राच्य विद्यापीठ, शाजापुर से डॉ. सागरमल जी जैन के निर्देशन में तैयार किये गए शोधों प्रबन्धों पर 20 विद्यार्थियों (जिनमें अधिकांश जैन साध्वियाँ हैं) को पी-एच् डी. की उपाधि प्राप्त हो चुकी है। विद्यापीठ से अब तक अनेक शोध प्रबन्ध एवं पुस्तकें भी प्रकाशित हो चुकी हैं। साथ ही विद्यापीठ में जैन धर्म और दर्शन से संबंधित उच्चस्तरीय ग्रन्थों का अध्यापन कार्य डॉ. सागरमलजी जैन द्वारा किया जा रहा है। जिससे अब तक लगभग 200 से अधिक जैन साधु-साध्वी एवं मुमुक्षु लाभान्वित हो चुके हैं।

'मुक्ति का राही' प्रतियोगियों को सूचना

'मुक्ति का राही' पर आयोजित खुली किताब परीक्षा में देश-विदेश से लगभग

1000 प्रतियोगियों ने भाग लिया, एतदर्थ सबको साधुवाद। वरीयता सूची में स्थान प्राप्तकर्त्ताओं को चेक द्वारा राशि प्रेषित की जा चुकी है। 85 प्रतिशत तक अंक प्राप्त करने वाले प्रतियोगियों को पुरस्कार दिए जा रहे हैं, जो घोड़ों का चौक कार्यालय में उपस्थित होकर प्राप्त किए जा सकते हैं। *-सुनीता मेहता, अध्यक्ष*

ऋषभदेव जयंती संगोष्ठी सम्पन्न

नई दिल्ली- प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष भी श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ (मानित विश्वविद्यालय) कुतुब संस्थानिक क्षेत्र, नई दिल्ली के जैन दर्शन विभाग द्वारा 16 मार्च, 2011 को ऋषभदेव जयंती संगोष्ठी का आयोजन किया गया। मुख्य वक्ता के रूप में बोलते हुए जैन दर्शन शोध संस्थान, वीर सेवा मंदिर, नई दिल्ली के निदेशक प्राचार्य निहालचंद जैन ने ऋषभदेव को धर्म और विज्ञान का आदि प्रवर्तक बताते हुए कहा कि जैन धर्म के सिद्धांतों को आज विज्ञान स्वीकार कर रहा है। उन्होंने मंत्र और स्तोत्रों के उच्चारण के माध्यम से मन और मस्तिष्क की शांति की वैज्ञानिकता पर प्रकाश डाला। मुख्यातिथि के रूप में तीर्थंकर ऋषभदेव की महिमा बताते हुए आचार्य इच्छाराम द्विवेदी ने कहा कि उन्होंने प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों का मार्ग प्रशस्त किया। भागवत पुराण में उनका स्मरण अत्यंत श्रद्धा के साथ किया गया है। सभा की अध्यक्षता करते हुए दर्शन संकाय प्रमुख प्रो. शुद्धानंद पाठक जी ने कहा कि तीर्थंकर ऋषभ देव एक महान तपस्वी थे। हमें उनके बताए हुए मार्गों पर चलना चाहिए। स्वागत भाषण करते हुए विभागाध्यक्ष प्रो. वीरसागर जैन ने कहा कि ऋषभदेव को पुरुदेव, आदिनाथ आदि नामों के साथ-साथ अन्य देशों तथा धर्मों में भी बाबा आदम, रेशेफ तथा बुल्गोद के नाम से भी जाना जाता है। डॉ. अनेकान्त जैन जी ने क़हा कि मोहन जोदडो, हडप्पा में जिन योगी की प्रतिमा प्राप्त हुयी है वे ऋषभ देव ही हैं।

संक्षिप्त-समाचार

मेड़तासिटी- श्री जयमल जैन छात्रावास में सत्र 2012-2013 हेतु प्रवेश प्रारम्भ कर दिया गया है। इच्छुक छात्र आवेदन कर सकते हैं। छात्रावास में विभिन्न सुविधाएँ प्रदान की जाती है। नियमित सामायिक-स्वाध्याय कराया जाता है तथा मासिक शुल्क मात्र 550/- रुपया हैं। जरूरतमंद छात्रों के लिये निःशुल्क सुविधा भी उपलब्ध है। **सम्पर्क सूत्र-** ***मंत्री,*** श्री जयमल जैन छात्रावास, मीरा मन्दिर के पास, मेड़ता शहर-341510, जिला-नागौर (राज.), फोनः 01590-231160, मोबाईल- 9414119283, 9660529022

बधाई/चुनाव

डॉ. विनोद एवं डॉ. प्रियदर्शना का सम्मान

चेन्नई- 25 मार्च 2012 को सुराणा एण्ड सुराणा इन्टरनेशनल अटोर्नीज के सीईओ डॉ. विनोद सुराणा तथा मद्रास विश्वविद्यालय के जैन विद्या विभाग की अध्यक्ष डॉ. प्रियदर्शना जैन को राजस्थानी एसोसिएशन तमिलनाडु की ओर से ''राजस्थान युवा-रत्न'' अवार्ड से सम्मानित किया गया। संगीत अकादमी सभागार में हुए भव्य समारोह में डॉ विनोद ने अपनी सारी सफलता का श्रेय अपनी धर्मनिष्ठ माता श्रीमती लीलावती तथा समाजसेवी पिता श्री पी.एस. सुराणा को दिया। प्रियदर्शना ने अपनी सफलता का श्रेय अपने पति श्री अभय जैन को दिया। उल्लेखनीय है कि रत्नसंघ की ओर से सन् 2008 में डॉ. प्रियदर्शना को आचार्य श्री हस्ती स्मृति सम्मान तथा 2011 में डॉ. विनोद को युवा प्रतिभा शोध साधना सेवा सम्मान प्रदान किये जा चुके हैं। तमिलनाडु विधानसभाध्यक्ष डी. जयकुमार तथा सेवानिवृत्त मुख्य चुनाव आयुक्त टी.एस. कृष्णमूर्ति के आतिथ्य में हुए कार्यक्रम में सोफ्टवेयर अभियन्ता शालीन जैन, प्रमुख निर्यातक सुरेश मुथा तथा अग्रणी दवा व्यवसायी नरेन्द्र श्रीश्रीमाल को भी राजस्थान युवा-रत्न अवार्ड प्रदान किया गया।

हाँगकाग- चाइनीज यूनिवर्सिटी, हाँगकाग द्वारा आयोजित Religion in India विषय पर 28 मार्च, 2012 को प्रस्तुति आयोजित की गई। इसमें श्री राजेन्द्र जी डागा सुपुत्र श्री विमल चन्द जी डागा, जयपुर को Introduction to Jainism विषय पर प्रस्तुति के लिए आमन्त्रित किया गया। अन्तरराष्ट्रीय समुदाय के व्यक्ति मुख्यतः चाइनीज एवं अमेरिकन वहाँ मौजूद थे। नियत एक घण्टे का समय था, पर जब विषय 'कर्म सिद्धान्त', पाँच पद, साधु चर्या, श्रावक धर्म, 6 काया, नवतत्त्व का चला एवं प्रश्नोत्तर चले तो सत्र करीब दो घंटे का चला, जो कि भविष्य में श्रोताओं के लिए ठोस जानकारी एवं शोध हेतु सहायक था।

अलवर- श्री रोहित कुमार जैन को कला स्नातक (B.A.) स्तर पर सम्पूर्ण राजस्थान में सर्वाधिक प्रतिशत (79.05%) प्राप्त करने पर ''महाराणा मेवाड फाउण्डेशन'',उदयपुर द्वारा 'भामाशाह अवार्ड' से सम्मानित किया गया है। यह सम्मान 120 वर्षों से उदयपुर के महाराजा द्वारा दिया जाता रहा है। अवार्ड के अन्तर्गत प्रशस्ति पत्र, गोल्ड मेडल एवं सात हजार की राशि

प्रदान की गई। श्री रोहित जैन विगत तीन वर्षों से आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृति का लाभार्थी रहा है।

जोधपुर- सुश्री रुचि भण्डारी सुपुत्री श्रीमती मंजु श्री हिम्मत सिंह भण्डारी को विधि विश्व विद्यालय जोधपुर की ओर से प्रबंधन विभाग में ""Joint Ventures and Foreign Collaborations" विषय पर शोध पूर्ण करने के लिए 22 जनवरी, 2012 को पीएच्.डी की उपाधि प्रदान की गई। रुचि ने यह शोध प्रो. यू.आर.डागा के निर्देशन में पूर्ण किया।

सिरसा- एस.एस. जैन सभा सिरसा का चुनाव 5 फरवरी, 2012 को जैन स्थानक में सर्व-सम्मति से सम्पन्न हुआ, जिसमें श्री पवन कुमार तातेड़ को संरक्षक तथा संदीप कुमार भांभू को सर्व सम्मति से प्रधान मनोनीत किया गया। प्रधान ने प्रेम कुमार बावेल को महासचिव मनोनीत किया है।

पीयूष जारोली

बालोतरा- श्री पीयूष जारोली सुपुत्र श्री इन्द्रमल जारोली B.Tec प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण कर इन्फोसिस में सॉफ्टवेयर इंजीनियर नियुक्त हुए है।

सी.ए. उत्तीर्ण

खुशबू जैन

अजमेर- सुश्री खुशबू जैन सुपुत्री श्री पदमचन्द-मधु खटोड़।

सुमेरगंज मण्डी- श्री प्रशान्त जैन सुपुत्र स्व. श्री सुरेशचन्द्र जैन।

श्रद्धाञ्जलि

रत्नसंघीया महासती श्री समता जी का देवलोकगमन

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. एवं शासनप्रभाविका साध्वीप्रमुखा महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. की शिष्या महासती श्री समता जी महाराज का फाल्गुनी पूर्णिमा 7 मार्च 2012 को सायंकाल लगभग 4 बजे गोटन के निकट देवलोकगमन हो गया। 18 वर्ष की दीक्षा पर्याय एवं 36 वर्ष की वय में समता भावों के साथ उनका आकस्मिक स्वर्गारोहण सबको स्तब्ध कर गया। लगभग 1 वर्ष से उनके मस्तक में पीड़ा रहती थी। किन्तु उनके चेहरे पर कभी असहजता एवं वेदना की अभिव्यक्ति नहीं देखी गई। अत्यन्त पीड़ा होने पर भी उनकी समत्व साधना, संयम के प्रति सजगता, स्वावलम्बिता, स्वाध्यायशीलता सदा बनी रही। मधुर वाणी में वे प्रवचन भी फरमाती रही। चिकित्सकों के अनुसार मस्तक में ट्यूमर फैल गया था। उसकी चिकित्सा के लिए 10 दिन पूर्व ही जोधपुर से तत्त्वचिन्तिका व्याख्यात्री

महासती श्री रतनकंवर जी महाराज के सान्निध्य में जयपुर के लक्ष्य से विहार किया था। किन्तु गोटन पहुँचने के पूर्व ही वे सबका साथ छोड़ गई। 8 मार्च को प्रातः अन्तिम संस्कार के समय जोधपुर, पीपाड़, भोपालगढ़ आदि निकटवर्ती अनेक ग्राम-नगरों के श्रद्धालु श्रावक धुलण्डी का दिन होते हुए भी गोटन पहुँचे।

महासती जी का साधनाशील व्यक्तित्व प्रभावशाली था। उनकी स्मृति में पूज्य आचार्यप्रवर के सान्निध्य में मेड़ता में, उपाध्यायप्रवर के सान्निध्य में नागौर में, साध्वीप्रमुखा शासनप्रभाविका श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. के सान्निध्य में जोधपुर में गुणानुवाद सभा आयोजित की गई। आचार्यप्रवर के सान्निध्य में आयोजित गुणानुवाद सभा में श्री यशवन्तमुनि जी ने कहा कि संयमी साधिका समता जी यथा नाम तथा गुण वाली साध्वी थी। महासती श्री ऋद्धिप्रभा जी ने समता जी की सौम्यता, समरसता आदि गुणों को रेखांकित किया। उन्होंने कहा कि समता जी ने 18 वर्ष की उम्र में 18 पापों का परित्याग कर 18 वर्ष संयम की साधना कर आत्मा के 8 गुणों को प्राप्त करने की साधना की। उन्होंने वेदना के क्षणों को प्रभु वन्दना के माध्यम से व्यतीत किया। व्याख्यात्री महासती श्री सरलेशप्रभा जी ने फरमाया कि वेदना के क्षणों में वे स्वयं नहीं हिली, परन्तु उनकी रिक्तता संघ को हिला गई। उनमें समता के साथ सजगता एवं सहिष्णुता गजब की थी। जयपुर में छः माह तक महासती श्री चन्द्रकला जी म.सा. की सेवा इसका ज्वलंत उदाहरण है। वे अपने समय का अधिकाधिक उपयोग ज्ञानचर्चा एवं थोकड़ों में करती थी। श्रद्धेय श्री मनीषमुनि जी ने कहा कि वेदना एक बाहरी परिस्थिति है, साधक वेदना से नहीं विराधना से घबराता है। तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनि जी ने फरमाया कि वेदना दो प्रकार की है- आभ्युपमिकी और औपशमिकी। महासती श्री समता जी को इस भव में रहते अगले भव को सुधारने का पूरा समय मिला। वे हर समय जागृति में रही। उन्होंने सवाईमाधोपुर में 18 वर्ष की वय में दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा के समय जो विषम परिस्थिति बनी तब भी महासती संयम पर दृढ़ रही। दीक्षा से अन्तिम समय की अवधि में शुभवृत्ति का ही आधिक्य रहा, अतः जब भी उनका आयुष्य बंध हुआ होगा, वह समय सर्वश्रेष्ठ रहा होगा। उपचार की दृष्टि से हुए विहार में मंगलवार को तान आई, खून बहा, फिर भी अगले दिन विहार को तैयार और 10 किलोमीटर विहार कर कडवासा पहुँचे। चौमासे की प्रतिलेखना-आलोचना कर देखते-देखते प्रयाण कर गए। संयम की साधना के साथ अन्तिम चातुर्मास आचार्यप्रवर की सन्निद्धि में किया। विषम वेदना होते हुए भी तेले की तपस्या की एवं साधनारत रहे। महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी ने फरमाया कि दीक्षा के पूर्व इनका नाम ममता था, किन्तु दूरदर्शी गुरुदेव ने अन्य छः महासतियों के नाम यथावत् रखते हुए इनका नाम बदल कर समता रखा। दीक्षा के पश्चात् पारिवारिक विकट परिस्थिति में जब इनसे निवेदन किया गया

कि आप सेवा या अन्य कारण से जाना चाहे तो विचार कर लें, किन्तु महासती समता जी ने स्पष्ट मना कर दिया और कहा कि अब तो गुरु-गुरुणी ही पिता-माता हैं। एक दिन के दीक्षा काल में मोह-त्याग का जो परिचय दिया वह उल्लेखनीय है। आप मितभाषी थी, प्रतिदिन गाथाएँ याद करती रहती थीं। उनका जीवन अप्रमत्तता से युक्त था। असहनीय वेदना में भी चेहरे पर प्रसन्नता झलकती थी। गुरुणी जी के साथ सभी की सेवा का पूरा खयाल रखती थी। दीक्षा समय से अन्तिम समय तक संघर्षमय जीवन रहा, मानो परीषह उनके धैर्य की परीक्षा ले रहे हों। महासती श्री रतनकंवर जी ने अग्लान भाव से उनकी सेवा की। पंचगव्य वे ही तैयार करते, पंचगव्य बनाते समय वातावरण गंध के कारण असह्य हो जाता था, फिर भी तत्त्वचिन्तिका जी ने यह कार्य बखूबी निभाया।

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी महाराज ने फरमाया कि जो जीव जन्म लेता है उसके जन्म के साथ ही दुःख का सम्बन्ध जुड़ा हुआ होता है। ये शब्द आगमवाणी के है। दीक्षा लेते समय कितना संघर्ष झेलना पड़ता है- यह बात सती जी के जीवन से घटित हुई, घटना वाला सारा परिदृश्य है। संघर्ष के समय भी समता भाव बनाये रखना कोई आसान काम नहीं। कोई आप पर आवेश करे, थप्पड़ मार दे-पश्चात् आपकी कैसी मनःस्थिति बनेगी? स्वभाव में रहो, कहना सरल है, पर चलना, आचरित करना मुश्किल है। चाहे आप सामायिक में हों, व्यवहार समकित के पाँच लक्षण हैं, उस समय आपमें कितने लक्षण मिल रहे हैं, चिन्तन का विषय है। आज का दिन प्रतिकूलता में समता का आदर्श दिखाने वाली सती समता के गुणगान करने का दिन है। उन्होंने विषम वातावरण में भी समता की मिशाल कायम की। एक-दो दिन की सेवा हर कोई कर सकता है पर छः-छः महीने की लगातार सेवा वह भी हर तरह की, कोई आसान सेवा नहीं, ग्लानि आने लग जाती है। उन्होंने अग्लान भाव से सुन्दर सेवा की। बाहर की परिस्थितियों को गौणकर सेवा करने वाली सती की बात कह रहा हूँ। वेदना के क्षणों में सहनशीलता में उन्हें सेवा करते देखा। संघर्ष में जन्म, संघर्ष में श्रमणत्व, संघर्ष में महाप्रयाण किया, ऐसी समता को धारण करेंगे तो आपको श्रद्धांजलि अर्पित करना व गुणगान करना सार्थक होगा।

नागौर में उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा., मधुर व्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि संतवर्यों के सान्निध्य में भी महासती समता जी के गुणों का स्मरण करते हुए उन्हें श्रद्धाञ्जलि दी गई। जोधपुर में साध्वीप्रमुखा, शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. के सान्निध्य में 9 मार्च को आयोजित गुणानुवाद सभा में शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. ने फरमाया कि महासती समता जी फाल्गुनी चातुर्मासी के दिन आलोचना के साथ दिवंगत हुए। वे ऐसी साध्वी थी जिन्हें प्रथम प्रवचन सुनने पर ही वैराग्य हो

गया था। विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा., व्याख्यात्री महासती श्री चन्द्रकला जी म.सा., महासती श्री शांताकंवर जी म.सा., श्री रक्षिता जी म.सा. आदि महासती मण्डल ने स्वर्गस्थ महासती श्री समता जी म.सा. की संयम-साधना एवं समता मय जीवन को सारगर्भित शब्दों में प्रस्तुत किया। जयपुर में विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि के सान्निध्य में तथा इसी प्रकार जहाँ-जहाँ महासती मण्डल का प्रवास था वहाँ-वहाँ पर गुणानुवाद सभा आयोजित की गई। सवाईमाधोपुर आदि अन्य स्थानों पर भी चार-चार लोगस्स का ध्यान करके श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए गुणस्मरण किया गया।

गणाधीश श्री उमेशमुनि जी म.सा. का महाप्रयाण

गणाधीश श्री उमेशमुनि जी म.सा., निर्मल साधनामय 58 वर्ष की सुदीर्घ दीक्षा पर्याय में इन्द्रिय आधारित सुख-दुःख से ऊपर उठकर अतीन्द्रिय आनन्द की अनुभूति में रमणता के साथ उज्जैन में रविवार 18 मार्च, 2012 को लगभग 5.15 बजे सायं संथारायुक्त समाधि के साथ महाप्रयाण कर गये। उनके समाधिमरण के समाचार विद्युत वेग की तरह यत्र-तत्र-सर्वत्र पहुँचते ही जैन जगत स्तब्ध रह गया। 19 मार्च को पार्थिव देह का अन्तिम संस्कार किया गया।

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने जैसे ही महाप्रयाण के समाचार सुने, 18 मार्च को ही चार-चार लोगस्स का ध्यान किया तथा 19 मार्च को सभी स्थानों पर प्रवचन स्थगित रखते हुए 20 मार्च को छोटी पादू में आयोजित गुणानुवाद सभा में जो मनोगत भाव फरमाए वे इस प्रकार हैं-

उत्सव से बने उमेश।
संयम संथारा सफल किया विशेष।।

थांदला की वीर भूमि में सम्वत् 1988 फाल्गुन कृष्णा अमावस्या 7 मार्च 1932 को जन्मने के पूर्व ही माता को सिंह का स्वप्न दिखा 'स्वयमेव मृगेन्द्रता' मानो अपने भावी पराक्रम का संसूचन करने वाले, 15 अप्रेल 1954 सम्वत् 2011 की चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को वीर प्रभु के जन्म कल्याणक पर मोही पारिवारिक जनों द्वारा विरक्ति के भावों से उन्मुख करने के लिए की हुई सगाई के बंधनों को तोड़ पिता की पाँचवी संतान के सांसारिक अस्तित्व से ऊपर उठ पाँच महाव्रतों को अंगीकार कर सूर्यमुनि जी म.सा. के पाँचवे शिष्य के रूप में वीरता प्रकट कर दीक्षित होने वाले आचार्यप्रवर श्री उमेशमुनि जी म.सा. संयम जीवन को सफल करते हुए चैत्र कृष्णा एकादशी को नश्वर शरीर को छोड़ देवलोक सिधार गये।

दीक्षा लेने के अनन्तर संस्कृत-प्राकृत के साथ आगम ज्ञान में निष्णात बने। तीव्र मेधा, कठोर पुरुषार्थ, उग्र तपश्चरण के साथ अहंकृति से शून्य होने के लिये गुरु आज्ञा पालन

में समर्पित उस साधक आत्मा ने 'अणु' के रूप में अपने अभिमान को संज्वलन चौक में भी सूक्ष्म से सूक्ष्म अणु, परम अणु बनाने के लिये सदा सजगता रखी।

प्रारम्भ से ही आपके प्रवचन गूढ़ सारगर्भित रहे। दीक्षा के 5-7 वर्ष पश्चात् से ही आपके लेख विषय के तलस्पर्शी तथ्यों को पाठकों के समक्ष उजागर करने वाले होते थे। मोक्ख पुरिसत्थो, धर्मदास जी म.सा. की मालव-परम्परा, जिनागम चिंतन आदि आपकी रचनाओं में प्रमुख हैं जो प्राकृत-संस्कृत-आगम-इतिहास सभी में आपकी गहरी पैठ की संसूचक तो हैं ही, जैन वाङ्मय की अमूल्य धरोहर के रूप में युगों-युगों तक प्रेरणा प्रदान करती रहेंगी, उपयोग में आती रहेंगी। सम्वत् 2037 आषाढ़ कृष्णा 12 को बदनावर में आचार्य भगंवत पूज्य हस्तीमल जी म.सा. व कविरत्न श्री सूर्यमुनि जी म.सा. के मिलन के समय भावी गणाधीश से मेरा भी तत्त्व चर्चा करने व सुनने का सुयोग बना था, जो आज भी स्मृति पटल पर है।

पूना सम्मेलन के पूर्व आचार्य सम्राट् श्री आनन्दऋषि जी म.सा. ने विश्वस्त संघ संरक्षक के माध्यम से आचार्य पूज्य भगवंत श्री हस्तीमल जी म.सा. से (उन दोनों महापुरुषों में कितनी आत्मीयता थी?) पुछवाया- युवाचार्य किसे बनाऊँ? तब आचार्य भगवंत ने जो नाम सुझाया- वो ये ही महापुरुष थे। जिन्हें मनोनीत करने के लिये तैयारियाँ भी हो गई थी। पर निष्पृह महापुरुष तो अकिञ्चनता का प्रदर्शन कर मानो यही प्रेरणा प्रदान करता है- पद-पद पर बहुपद मिलते हैं, पर वे दुःखप्रद आस्पद है। श्रेय यही एक निजीपद : जो सकल गुणों का आस्पद है। वरिष्ठ प्रवर्त्तक श्री रूपचन्द जी म.सा. द्वारा अहमदाबाद में पुनः इस गौरवशाली आचार्य पद के लिये आपके नाम की घोषणा होने पर बड़ौदा में विराजित इस महापुरुष ने कर्त्तव्य वहन के लिये भले ही सहमति दिखलाई हो, पर चादर महोत्सवों से तो बचा ही रहा। उत्सव नाम से बाल्यकाल में पुकारा जाने वाला यह आत्म साधक- क्योंकि आत्मरमण से बढ़कर कोई उत्सव नहीं, महोत्सव नहीं। प्रतिदिन ध्यान साधना में रत साधक अंत में साधना के शिखर के रूप में तीसरे मनोरथ को साधकर अन्तिम श्वास तक जागरूक रह जाते-जाते भी जिनशासन की महती प्रभावना कर गया, जागृति का संदेश दे गया।

स्थानकवासी परम्परा में एक अपूरणीय क्षति हो गयी। उनकी आत्मा तो संसार सीमित करने की साधना सफलता पूर्वक कर गई। अतः उनका संसार सीमित हो ही गया, हमें भी उनसे प्रेरणा ले आगे बढ़ते रहना है।

सेवारत सभी संत-रत्न, सभी शिष्य-रत्न शुद्ध आचरण में दृढ़ता, निर्मल समकित, ज्ञान के विशिष्ट क्षयोपशम आदि-आदि गुणों से आप्लावित हो, उन्हीं की अनुपालना से श्रमण-संस्कृति को गौरवान्वित करते रहेंगे। अन्त में मैथिलीशरण गुप्त की इन पंक्तियों के

साथ-

जो इन्द्रियों को जीतकर, धर्माचरण में लीन हैं।
उनके मरण का शोक क्या, जो मुक्त बन्धनहीन हैं।।

मुम्बई- अनन्य गुरुभक्त, श्रद्धाशील श्रावकरत्न श्री अमरचन्द जी मुणोत का 01 मार्च, 2012 को असामयिक देहावसान हो गया। पुण्यधरा पीपाड़ का मुणोत परिवार रत्नसंघ के प्रति समर्पित है। सेवाभावी सुश्रावक श्री अमरचन्द जी ने गुरु हस्ती के पीपाड़ वर्षावास में गुरु-सेवा का लाभ तो लिया ही, स्वधर्मी वात्सल्य सेवा, श्रुत-सेवा और जरूरतमंद लोगों को सेवा भावना से सहयोग करके सम्बल दिया। आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा., परम उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. प्रभृति संत-सतीवृन्द के दर्शन-वन्दन और सेवा-भक्ति का उन्होंने बराबर लाभ लिया। संघ की प्रवृत्तियों के पोषण और कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में उनकी सदा सकारात्मक सोच रहती थी। जैन धर्म, दर्शन, साहित्य और संस्कृति की लोकप्रिय मासिक पत्रिका जिनवाणी जन-जन को प्राप्त हो, इस भावना से श्रावकरत्न ने अपनी ओर से निःशुल्क सदस्य बनाकर सैकड़ों सुधी पाठकों के हाथों जिनवाणी पहुँचाने का प्रयास किया। मुणोत परिवार के श्रद्धानिष्ठ-कर्त्तव्यनिष्ठ-धर्मनिष्ठ, उदारमना, संघ-सेवा शिरोमणि माननीय श्री मोफतराज जी मुणोत ने संघाध्यक्ष पद का गुरुत्तर दायित्व गुरु हस्ती के शासनकाल में संभाला, अपने अग्रज की संघ-सेवा, संत-सेवा, स्वधर्मी वात्सल्य-सेवा, श्रुत-सेवा के साथ संघ को सक्रिय, सक्षम, स्वावलम्बी बनाने के प्रयास में श्रावकरत्न श्री अमरचन्द जी सा. मुणोत का प्रत्यक्ष-परोक्ष सहयोग रहा, संघ मुणोत परिवार की उदारता को सदा-सर्वदा याद रखेगा।

मुणोत परिवार का प्रत्येक सदस्य संघ-सेवा में सजग और जागरूक है। श्री अमरचन्द जी मुणोत की धर्मपत्नी श्रीमती चन्द्रा जी मुणोत की अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की कार्यकारिणी सदस्य एवं राष्ट्रीय उपाध्यक्ष पद के रूप में भूमिका और भागीदारी सराहनीय है। आपके सुपुत्र युवारत्न बन्धु श्री अजय जी एवं अनुज जी मुणोत पारिवारिक संस्कारों से संस्कारित हैं।

पाली- श्री रूपचन्द जी धारीवाल का 03 मार्च, 2012 को 75 वर्ष की आयु में देहावसान हो

गया। उन्होंने अपना जीवन माताजी श्रीमती मोहन कंवर धर्मपत्नी श्री छोटमल जी धारीवाल (मोटी बाई, आचार्यप्रवर द्वारा दिया गया उपनाम) द्वारा प्रदत्त धार्मिक संस्कारों के आधार पर जीया तथा यही संस्कार अपने 3 अनुज भाइयों, 3 पुत्रों (श्री ज्ञानचन्द जी, गौतमजी एवं प्रदीप जी) एवं सभी परिजनों में सींचे। इसी का परिणाम है कि पूरा धारीवाल परिवार आचार्यप्रवर

व उपाध्यायप्रवर के प्रति पूर्ण रूपेण श्रद्धानवत है। दिनांक 14.03.2012 को पूरे धारीवाल परिवार ने मेड़ता व नागौर में आचार्यश्री तथा उपाध्यायश्री की सेवा में उपस्थित होकर आर्तध्यान न करने व शोक को अधिक लम्बा न करने के लिए आशीर्वचन तथा व्रत पच्चक्खाण ग्रहण किये। आचार्यश्री की प्रेरणा से श्री रूपचन्द जी धारीवाल ने परिवार के सभी सदस्यों की सामूहिक सामायिक की अलख भी जगाई जो करीब दस वर्षों से निरन्तर जारी है।

केकड़ी- आगमज्ञ, दृढ़धर्मी, प्रियधर्मी, गहनजिज्ञासु श्रावकरत्न श्री लालचन्द जी नाहटा का 17 मार्च, 2012 को संलेखना-संथारा सहित समाधिभावों में देवलोकगमन हो गया। आपको अंतिम समय का अहसास हो गया और आपने सभी तरह की आसक्ति और मूर्च्छा भाव का त्याग करते हुए अपनी मृत्यु को महोत्सव बना दिया। स्थानकवासी धर्म के प्रति अडिग आस्थावान श्री लालचन्द जी नाहटा ने अपने विचारों को लेखों द्वारा प्रस्तुत कर समाज में अलग ही पहचान बनायी। अद्भुत बौद्धिक क्षमता और अदम्य तार्किक शक्ति के धनी नाहटा साहब ने गूढ तत्त्वों का मंथन किया। आप अपने पीछे भरापूरा सुसंस्कारित धार्मिक परिवार छोड़ गये हैं।

जयपुर- धर्मपरायणा सुश्राविका श्रीमती पारसदेवी चौरड़िया धर्मपत्नी स्व. श्री सौभागमल जी

चौरड़िया का 27 जनवरी, 2012 को देहावसान हो गया। आप श्रद्धानिष्ठ-धर्मनिष्ठ-कर्त्तव्यनिष्ठ श्राविका थीं। संत-सतीवृन्द के प्रति आपकी अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। प्रतिदिन सुबह 5 सामायिक करके वे अन्न-जल ग्रहण करती थीं तथा शाम को प्रतिक्रमण करती थी। सामायिक-स्वाध्याय के प्रति सजग श्राविकारत्न तपस्वी भी थी। आपने मासखमण, अठारह, पन्द्रह, उपवास, ग्यारह, अठाइयाँ व तेला बेला आदि तपस्यायें की थीं। आप अपने पीछे पुत्र पदमचंद चौरड़िया, पुखराज चौरड़िया एवं पुत्री नगीना पटोलिया का भरापूरा परिवार छोड़कर गई हैं। आप संत सतीवृन्द के गोचरी-पानी का पूरा ध्यान रखती थीं।

जयपुर- सन्तसेवी श्रद्धानिष्ठ सुश्राविका श्रीमती तेजकुमारी जी धर्मसहायिका श्री ज्ञानचन्द जी

कोठारी का आकस्मिक स्वर्गवास 16 मार्च, 2012 को हो गया। आपका जीवन सहज, सरल एवं सादगी से परिपूर्ण था। धर्मनिष्ठता, कर्तव्य परायणता, कर्मठ सेवाभावना, स्वधर्मी वात्सल्य, विनम्रता आदि अनेक गुणों से आपका जीवन ओतप्रोत था। आप देव, गुरु एवं धर्म के प्रति पूर्णतः समर्पित थी। सन्त-सतियों की सेवा में सदैव अग्रणी रहती थी।

बैंगलोर- अनन्य गुरुभक्त, संघहितैषी सुज्ञ श्रावकरत्न श्री उत्तमचन्द जी भण्डारी का 01

मार्च, 2012 को असामयिक स्वर्गगमन हो गया। अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के कार्यकारिणी सदस्य, संघमंत्री एवं संघ उपाध्यक्ष पद पर रहकर संघ-सेवा में उन्होंने अनुकरणीय योगदान किया। रत्नसंघ के पीढ़ियों के श्रावकरत्न ने परमाराध्य परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. आदि संत-सतीवृन्द के बैंगलोर चातुर्मास में संघ-सेवा, संत-सेवा, स्वधर्मी वात्सल्य-सेवा का लाभ तो लिया ही, आचार्यप्रवर के चातुर्मास के सुयोग से आबाल-वृद्ध सबको गुरुचरण सन्निधि में लाने और शासन सेवा में जागरूक करने में अपनी सकारात्मक भूमिका का निर्वहन भी किया। सामायिक-स्वाध्याय के रसिक श्रावकरत्न ने आचार्यप्रवर के मुखारविन्द से शीलव्रत का खंदकर गुरुभक्ति का परिचय दिया। ऊर्जावान होने के साथ सरलता, सहनशीलता एवं सबको साथ लेकर चलने की क्षमता के कारण उनका जैन समाज में प्रभुत्व था। भण्डारी परिवार सदा से उद्धार रहा है। धर्मपत्नी प्रमिला जी एवं सुपुत्र अनुराग जी भण्डारी तथा समस्त परिवार धर्मनिष्ठ है।

जोधपुर- सरलता, सादगी और सेवा की प्रतिमूर्ति श्रीमती रतनदेवी जी सालेचा धर्मपत्नी स्व.

सुश्रावक श्री बापूलाल जी सालेचा का 13 मार्च, 2012 को स्वर्गवास हो गया। अस्वस्थता में भी वे अपना काम स्वयं करने को तत्पर रहती थी। सबको साथ लेकर चलना, सबकी सार-संभाल करना और सबकी सेवा करना उनका स्वभाव था। संत-सतीवृन्द के दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण और सेवा-भक्ति में भी उन्होंने सदा सक्रियता रखी। सामायिक आराधन में उनकी अच्छी भावना रहती थी। उनकी सद्शिक्षा और सद्-संस्कारों का ही सुपरिणाम है कि श्री सुन्दरलाल जी सालेचा-स्वाध्याय शिक्षा के सम्पादक के रूप में तथा श्री प्रकाश जी सालेचा संघ कार्यालय प्रभारी के रूप में संघ-सेवा में निष्ठापूर्वक सन्नद्ध हैं।

चेन्नई- श्रावकरत्न श्री चम्पालाल जी लोढा का 65 वर्ष की वय में 23 मार्च 2012 को हृदयगति रुक जाने से आकस्मिक निधन हो गया। उनका पूरा परिवार परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का अनन्य भक्त एवं समर्पित परिवार है। रत्न संघ में आचार्य हीराचन्द्र जी म.सा. के शिष्य श्रद्धेय श्री मनीष मुनि जी महाराज के आप बडे पिताजी थे। वे नित्य सामायिक-स्वाध्याय करने के साथ-साथ सन्त-सेवा और संघ-सेवा में सदैव तत्पर रहते थे। साहूकार पेट, चेन्नई में आचार्य श्री रामलाल जी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री शकुन्तला जी म.सा. के सान्निध्य में 26 मार्च को स्वाध्याय भवन में आयोजित श्रद्धाञ्जलि सभा में सभी सम्प्रदायों के श्रावक-श्राविकाओं ने भाग लिया।

-पी.एस. सुराणा, चेन्नई

भोपाल- सुश्राविका श्रीमती सुशीला देवी लक्ष्मीचन्द जी ओसवाल का 25 जनवरी 2012 को संथारा समाधिपूर्वक देवलोक गमन हो गया। वे सम्प्रदाय एवं गच्छवाद को गौण कर सभी साधु-साध्वियों एवं मुमुक्षुओं की सेवा का लाभ प्राप्त करती थी। तपस्या एवं सेवा भावना में वे सदैव अग्रणी रहती थी।

उदयपुर- श्रद्धानिष्ठ, धर्मनिष्ठ एवं चिन्तनशील श्रावकरत्न श्री राजेन्द्रमल जी कुम्भट का 11 मार्च 2012 को स्वर्गगमन हो गया। जोधपुर के लब्ध प्रतिष्ठ कुम्भट परिवार की गुरुभक्ति , संघ-सेवा और शासनदीप्ति में तत्परता सदा रही है। आपकी पूज्या दादीजी ने रत्नसंघ में प्रव्रज्या अंगीकार कर महासती श्री राजमती जी म.सा. के रूप में 22 वर्षों तक संयम जीवन का पालन किया। सुश्रावक श्री कुम्भट सा. आचार-विचार-व्यवहार में सेवा भक्ति से एवं संघ को सक्रिय बनाने में सदा सजग रहे। श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, उदयपुर की स्थापना में उनका योगदान प्रेरणादायी है। संघ-सेवा, संत-सेवा, स्वधर्मि-वात्सल्य सेवा में उनकी अच्छी रुचि एवं भावना थी। अखिल भारतीय संघ की कार्यकारिणी में भी उनकी भूमिका सकारात्मक रही। अच्छे चिन्तक होने के साथ वे संघ की रीति-नीति के ज्ञाता श्रावक थे। गुरु हस्ती के सामायिक-स्वाध्याय एवं गुरु हीरा के व्यसन-त्याग सन्देश को जन-जन में प्रचारित करने में सदा अग्रणी रहे। उनके पिताश्री विजयमल जी कुम्भट की सेवाएं संघ में उल्लेखनीय रहीं।

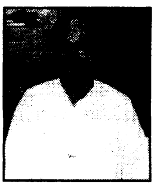

जयपुर- श्री विमलचन्द जी सुपुत्र स्व. श्री रूपचन्द जी गाँधी का 6 मार्च, 2012 को स्वर्गवास हो गया। आप एवं आपका पूरा परिवार रत्नसंघ के प्रति पूर्ण निष्ठा रखता है। श्री विमलचन्द जी ने आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के अहमदाबाद चातुर्मास में तन, मन, धन से खूब सेवा की। आप नियमित सामायिक, स्वाध्याय करते थे। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गये हैं।

जावला (नागौर)- जावला निवासी धर्मानुरागी सुश्रावक श्री चैनराज जी जोगड़ का 06

फरवरी, 2012 को देहावसान हो गया। जिनधर्म के प्रति आपकी प्रगाढ़ रूचि थी एवं चारित्रनिष्ठ आत्माओं के प्रति गहरी श्रद्धा थी। विगत 3 वर्षों से पैरेलिसिस होते हुए भी आपके सामायिक, स्वाध्याय, एकासन, माला फेरने का क्रम अनवरत जारी था। आप मृदुभाषी, मिलनसार एवं धार्मिक व्यक्तित्व के धनी थे। सेवाभावी महासती श्री संतोषकंवर जी म.सा. के जावला चातुर्मास प्रवास के दौरान आपकी सेवाएँ विशेष उल्लेखनीय एवं सराहनीय रहीं।

जयपुर- सुश्रावक श्री शांतिचन्द जी कोठारी सुपुत्र स्व. श्री सुमेरचन्द जी कोठारी का 20 मार्च 2012 को ब्लड कैंसर से निधन हो गया। आपने मृत्युपूर्व संथारा समाधिमरण का पच्चक्खाण

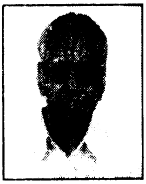

लिया। आप 77 वर्ष के थे। आपने 15 वर्ष पूर्व ही मरणोपरान्त अपनी देह सवाई मानसिंह मेडिकल कॉलेज के विद्यार्थियों को अध्ययन हेतु दान करने का संकल्प ले लिया था। आपके पिता श्री सुमेरचंद जी कोठारी ने श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक जयपुर संघ, जयपुर, लालभवन के 16 वर्ष तक अध्यक्ष पद पर रहते हुए समाज की समर्पित भाव से सेवा की। आप अपने पीछे धर्मपत्नी श्रीमती विद्यादेवी जी कोठारी सुपुत्री श्री चाँदमल जी नाहर परिवार, अजमेर, सुपुत्र श्री संजय जी-बबीता जी कोठारी, सुपुत्री श्रीमती इन्दूजी-शरदजी कोठारी एवं अंजूजी-प्रेमचन्द जी शंखवाल का भरापूरा परिवार छोड़कर गये हैं। आपके अनुज भ्राता श्री सुमतिचंदजी मंडल के उपाध्यक्ष पद को सुशोभित करने के साथ संत-सतियों को निर्दोष औषध उपलब्ध कराने में सक्रिय सहयोग प्रदान कर रहे हैं। श्री सुरेशचन्द जी कोठारी, श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के क्षेत्रीय प्रधान एवं स्थानीय संघ के सहमंत्री पद पर सेवा प्रदान कर रहे हैं।

बैंगलोर- धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती चंपाबाई भंसाली धर्मपत्नी स्व. श्रीमान पुखराज जी

भंसाली का संथारापूर्वक 08 फरवरी, 2012 को प्रयाण हो गया। आप लगभग 85 वर्ष की थी। प्रतिदिन 8-9 सामायिक एवं संत-सतियों की सेवा में रहना आपकी दिनचर्या में शामिल था। आपके विगत लगभग 40 वर्षों से रात्रि भोजन एवं जमीकंद के त्याग थे। मूलतः जोधपुर (महामंदिर, पावटा) निवासी आपश्री का पूरा परिवार रत्नसंघ के प्रति तन-धन-मन से पूर्णतः समर्पित है। आप हमेशा ही संत-सतियों की सेवा में अग्रणी थी। आपका जीवन दया-धर्म-दान से ओतप्रोत था। आप अपने पीछे धर्मनिष्ठ परिवार छोड़कर गए हैं।

कोटा- तप साधिका श्रीमती रक्खी बाई धर्मपत्नी श्री सूरजमल जी जैन चौरू वाले का 72 वर्ष की आयु में 10 मार्च, 2012 को स्वर्गवास हो गया। आप सरल, स्वभावी, मिलनसार एवं धार्मिक प्रवृत्ति की श्राविका थी। आप हमेशा स्वाध्याय एवं साधु-साध्वियों की सेवा में रूचि रखती थी। गुरु हस्ती से प्रेरित होकर आपने पूरे परिवार को सुसंस्कारित किया।

जयपुर- धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती अंगुरीदेवी जी हीरावत धर्मपत्नी स्व. श्री झबरचन्द जी हीरावत का 29 जनवरी, 2012 में स्वर्गवास हो गया। आप स्नेह और संस्कारों से सिंचित करने वाली हीरावत परिवार की शोभा थी। आप नित्य सामायिक-स्वाध्याय करती थीं। साधु-साध्वी के प्रति

आपकी प्रगाढ़ निष्ठा थी। आप व्यवहार में शालीन, गुणानुरागी एवं प्रसन्नचित्त श्राविका थी। आप अपने पीछे धर्मनिष्ठ परिवार छोड़कर गई हैं।

दिल्ली- आदर्श त्यागी सरल स्वभावी, उदारमना, सुश्राविका श्रीमती कमलादेवी जी लोढ़ा धर्मपत्नी लाला श्री रतनलाल जी लोढ़ा-चाँदनी चौक ने 22 जनवरी, 2012 को सभी से क्षमायाचना करते हुए यावज्जीवन संथारा ग्रहण करके बड़ी शान्ति के साथ स्वाध्याय श्रवण करते हुए समाधिमरण को प्राप्त किया। वे श्रमण संघीय उपप्रवर्तक श्री नरेशमुनि जी म.सा. एवं साध्वी रत्न डॉ. श्री दर्शनप्रभा जी म.सा. की माताजी थी। आपने अपने दोनों पुत्र पुत्री को दीक्षा देकर जिनशासन को समर्पित किया।

बालोतरा- श्री आईदानमल जी गोलेच्छा (चवा वाले) का स्वर्गवास 04 मार्च, 2012 को

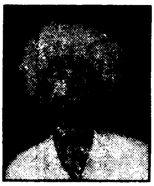

80 वर्ष की उम्र में हो गया। आपने 17 वर्ष की वय में रात्रि भोजन का त्याग किया एवं 34 वर्ष की उम्र में आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. से रात्रि में चौविहार के पच्चक्खाण किये थे। आप नित्य 5 से 7 सामायिक करते थे एवं साधु-संतों की विहार-सेवा में नंगे पैर साथ में चलते थे। 34 वर्षों से साबुन का प्रयोग नहीं किया तथा 65 वर्ष की वय में आपने शीलव्रत का पच्चक्खाण किया था। आपका पूरा परिवार धार्मिक संस्कारों एवं रत्नसंघ से जुड़ा हुआ है।

सिकन्दराबाद- श्रीमती शान्तिदेवी गुन्देचा धर्मपत्नी श्री बाबूलाल जी गुन्देचा का 58 वर्ष की उम्र में 15 दिसम्बर 2011 को प्रत्याख्यान पूर्वक नमस्कार सूत्र सुनते-सुनते आकस्मिक स्वर्गवास हो गया। आपने वर्षीतप, अठाई, उपवास, बेले, तेले आदि कई तप किये। आप प्रतिदिन नवकारसी अथवा पौरसी, 4-5 सामायिक किया करती थी। आप सरलस्वभावी, मिलनसार आदि गुणों से युक्त थी। आपने कई एकान्तर तप भी किये। आपका जीवन त्यागमय था। आप चारित्रनिष्ठ संत-सतियों की सेवा का पूरा-पूरा लाभ लेती थी। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये।

सिकन्दराबाद- धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती राजकुमारी पोखरणा धर्मपत्नी श्री सूरजमल जी पोखरणा का 65 वर्ष की आयु में 12 फरवरी, 2012 को आकस्मिक स्वर्गवास हो गया। आप नियमित सामायिक-स्वाध्याय करती थी। आप सरल स्वभावी श्राविका थी। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गई हैं।

कानोड़ (उदयपुर)- समर्पित साहित्यप्रेमी, कवि और लेखक श्री विपिन जारोली का 19 मार्च 2012 को 79 वर्ष की वय में स्वर्गवास हो गया। उन्होंने भक्तामर स्तोत्र का राजस्थानी पद्यानुवाद किया, जिसे 'तीर्थंकर' के सम्पादक डॉ. नेमीचन्द जैन ने उत्तम बताया और खूब प्रचारित किया। 'भक्तामर भारती' का सम्पादन व प्रकाशन विपिन जी की अन्यतम उपलब्धि

है, जिसमें भक्तामर स्तोत्र के विभिन्न भाषाओं के 124 पद्यानुवाद संगृहीत किये गये हैं। इस कार्य के लिए उन्होंने वर्षों तक कठिन खोजबीन की। जिनवाणी के पूर्व सम्पादक डॉ. नरेन्द्र भानवात के मित्र रहे विपिन जी ने भक्तामर स्तोत्र के अलावा कल्याण मंदिर, महावीराष्ट तथा रत्नाकर पच्चीसी के भी हिन्दी व राजस्थानी में पद्यानुवाद किये। टैगोर की गीतांजलि (बंगला) के कुछ गीतों का भी उन्होंने राजस्थानी में पद्यानुवाद किया। जैन दिवाकर चौथमल जी महाराज के सम्पूर्ण साहित्य को उन्होंने पुनः सम्पादित करके 'जैन दिवाकर ज्योतिपुंज' शीर्षक से 15 खण्डों में प्रकाशित करवाया।

नागौर- श्रीमती पुष्पा देवी भण्डारी धर्मपत्नी स्व. श्री जेठमल जी भण्डारी का स्वर्गवास 24 जनवरी, 2012 को हो गया। आप आचार्य हस्ती-हीरा एवं उपाध्याय मानचन्द्र जी म.सा. की अनन्या भक्त थीं। आप लगभग 35 वर्ष से नियमित सात सामायिक प्रतिदिन करती एवं आप अनेकविध त्याग-तपस्या करती थी। आपका पूर्ण परिवार संत-सती व संघ के लिए पूर्णरूपेण समर्पित है। आपके सुपुत्र नागौर युवक परिषद् के अध्यक्ष हैं एवं आपकी पुत्रवधू श्रीमती ममता भण्डारी श्री जैन रत्न संस्कार केन्द्र, नागौर का संचालन करती हैं एवं महिला मण्डल में भी पूर्ण रुपेण अग्रसर रहती हैं।

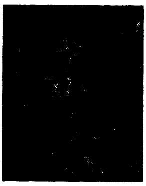

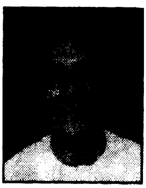

मुम्बई- सुश्रावक श्री महेन्द्रकुमार जी झाबक, भावनगर का 85 वर्ष की वय में 20 फरवरी, 2012 को देहावसान हो गया। आप 30 वर्षों तक हिण्डाल्को कम्पनी में सचिव रहे। वे खींचन के प्रथम सी.ए. एवं सी.एस थे। आप सत्यान्वेषी साधक थे। वर्षों से आपके रात्रि-भोजन का त्याग था। आप ज्ञानगच्छ के धर्मनिष्ठ श्रावक थे।

देलवाड़ा (राजसमन्द)- श्रीमती मोहनबाई सिरोया धर्मपत्नी स्व. श्री मूलचन्द जी सिरोया का 22 जनवरी, 2012 को 90 वर्ष की उम्र में निधन हो गया। आपने 39 वर्ष की वय में विधवा होने पर भी आत्मविश्वास के साथ धर्मनिष्ठ जीवन जीया। उन्होंने अपने जीवन काल में जप-तप, एवं 52 वर्षों तक रात्रि भोजन त्याग किया। अनेक अठाई एवं तेले की तपस्या कीं।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी-परिवार तथा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं वीतराग ध्यान साधना केन्द्र

ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर-302018 (राज.)

सहभागिता शिविर आवेदन पत्र

मैंने वीतराग ध्यान शिविर के नियमों का भलीभाँति अध्ययन कर लिया है। मुझे उनकी आवश्यकता, उपयोगिता एवं गंभीरता स्वीकार्य है। यदि मुझे दिनांक 7 मई 2012 से 17 मई 2012 तक सम्मिलित होने के लिए अनुमति मिले तो मैं पूरे दिनों तक शिविर स्थल पर रहकर नियमों का पालन करूँगा/करूँगी।

पूरा नाम ....

पिता/पति श्री ....

जन्म तिथि ....

शिक्षा ....

व्यवसाय ....

स्थायी पता ....

वर्तमान पता ....

फोन नं./ मोबाइल नं. ....

आप साधना में पूर्णरूप से मौन का पालन करेंगे? हाँ /नहीं

क्या आप साधना में नशे-पते के सेवन से विरत रह पायेंगे? हाँ/ नहीं

अगर आप कोई अन्य साधना संबंधी उपचार विधि या रेकी करते हैं तो पूर्ण विवरण दें।

आपको शारीरिक/मानसिक बीमारी है क्या? हाँ/ नहीं

यदि शारीरिक/ मानसिक बीमारी हो तो उसका पूरा विवरण दें-

दिनाँक :.............. हस्ताक्षर

सम्पर्क सूत्र-*श्रीमती शान्ता मोदी (संयोजक), सी-26, देवनगर, टोंक रोड, जयपुर-302018 (राज.), फोन :- 0141-2710077, मोबाइल 93144-70972,*
E-Mail:prabharati@gmail.com, Web-site : prakritbharati.com

नोट:- नियमावली इसी अंक में द्रष्टव्य है।

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

500/- जिनवाणी पत्रिका की आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

13353 श्री सन्तोषचन्द जी बरड़िया, शिवम अपार्टमेन्ट, जवाहर नगर, जयपुर (राजस्थान)
13354 Smt. Leela Bai ji Acha, Arcot, Vellore (Tamilnadu)
13355 Smt. Bhavana ji, Aroct, Vellore (Tamilnadu)
13356 श्री अजीत कुमार जी जैन, क्विन्स रोड, अजमेर रोड़, जयपुर (राजस्थान)
13357 Shri Vineet ji Jain, Chhabili Ghati, Bikaner (Rajasthan)
13358 Shri Maneesh ji Patwa, Pal Link Road, Jodhpur (Raj.)
13359 Shri Mahavir ji Anchaliya, Vasi, Navi Mumabi (M.H.)
13360 श्री दीपक जी बलोटा, जयनगर, पाली-मारवाड़ (राजस्थान)
13361 श्री दीपक जी छाजेड़, वीरदुर्गादास नगर, पाली-मारवाड़ (राजस्थान)
13362 Shri Ankit ji Hinger, Bangalore (Karnataka)
13363 श्री सुशील जी बालड़, पावटा बी रोड़, जोधपुर (राजस्थान)
13364 डॉ. राहुल जी जैन, गुजराती गल्ली, पारोला, जिला-जलगाँव (महाराष्ट्र)
13365 श्री जीवनमल जी चोरड़िया, महानथाऊ गल्ली, पारोला, जिला-जलगाँव (महा.)
13366 श्री मोरार जी ओस्तवाल, पवन लॉज के पीछे, चाँदवड़, जिला-नाशिक (महा.)
13367 श्री प्रवीण कुमार जी मोदी, नवीन सिडको, नाशिक (महाराष्ट्र)
13368 श्री राजेन्द्र कुमार जी कोठारी, वैजापुर, जिला-औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
13369 श्री महेन्द्र जी बोरा, पगारिया रेसिडेन्सी, फ्लैट नं. ए/3, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
13370 श्री राजेन्द्र कुमार जी रांका, नेशनल हाईवे नं. 7, जलगाँव (महाराष्ट्र)
13371 श्री विजय कुमार जी बडोला (जैन), पाचोरा, जिला-जलगाँव (महाराष्ट्र)
13372 श्री नेमीचन्द जी बाठियाँ, इन्द्रा नगर, पाचोरा, जिला-जलगाँव (महाराष्ट्र)
13373 श्री विनोद जी सिंघवी, (महाराष्ट्र)
13374 श्री बाबूलाल नवनमल जैन ट्रस्ट, पाचोरा, जिला-जलगाँव (महाराष्ट्र)
13375 श्रीमती निर्मला जी कोटेचा, गाँधी चौक, वणी, जिला-यवतमाल (महाराष्ट्र)
13376 सौ.कां. प्रतिमा जी कांकरिया, पावर जोन के पास, (मध्यप्रदेश)
13377 श्री मनोज कुमार जी जैन, चौरू, उनियारा, जिला-टोंक (राजस्थान)
13378 श्री सुरेन्द्र जी गांग, फ्रैण्ड्स कॉलोनी (ईस्ट), नईदिल्ली (दिल्ली)
13379 श्री धर्मचन्द जी सुराणा, ई-284, ग्रेटर कैलाश पार्ट-2, नईदिल्ली (दिल्ली)
13380 Shri Bhushan ji Lunawat, Katraj, Pune (M.H.)
13381 श्री प्रदीप जी रूणवाल, एक्स सी/5, चार इमली, भोपाल (मध्यप्रदेश)
13382 श्री सुधीर कुमार जी कोचर, ई 8/7, चार इमली, भोपाल (मध्यप्रदेश)
13383 श्री गौरव जी बोरा, ई 2/254, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (मध्यप्रदेश)
13384 श्री पारसचंदजी जैन (देवली वाले), शहर-सवाईमाधोपुर (राजस्थान)
13385 सौ. अरूणा जी कोचर, बाजार पेठ, चौपड़ा, जिला-जलगाँव (महाराष्ट्र)
13386 श्री मनोहरलाल जी कोठारी, झाँसी रानी गॉर्डन के पास, उधना, सूरत (गुजरात)
13387 श्री वर्षिता जी मेहता, श्रीजी डेयरी, मणियासा, मणिनगर, अहमदाबाद (गुजरात)

13388 Shri Ashok Kumar ji Jain, Chennai (Tamilnadu)

13389 Shri Veerendra ji Kankaria, Chennai (Tamilnadu)

13390 श्री रमेश जी गुलेच्छा, 55, आदर्शनगर, पाली-मारवाड़ (राजस्थान)

13391 श्री अंकित जी मेहता, न्याय पथ, पटेलमार्ग, मानसरोवर, जयपुर (राजस्थान)

13392 Shri Hemant ji Bhandari, Andheri (W), Mumbai (M.H.)

जिनवाणी हेतु साभार-प्राप्त

11000/- श्री कैलाशजी भंसाली, बेंगलुरू, पूज्य माताश्री सुश्राविका श्रीमती चंपाबाईजी धर्मपत्नी स्व. श्री पुखराज जी भंसाली का दिनांक 08 फरवरी, 2012 को बेंगलुरू में संथारा पूर्वक महाप्रयाण हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

5100/- श्री उमरावमल जी श्रीपाल जी सुराणा, चेन्नई, श्री विनोद जी सुराणा सुपुत्र श्री पी.एस. सुराणा को तमिलनाडु के राजस्थान एसोशियशन की ओर से दिनाँक 25 मार्च, 2012 को युवारत्न की उपाधि से अंलकृत करने के उपलक्ष्य में भेंट।

5100/- श्री चिन्तन जी, ज्ञानचन्द जी धारीवाल, पाली, दादाजी श्रीमान् रूपचन्द जी धारीवाल की पावन स्मृति में।

5000/- श्री राजेन्द्रकुमारजी, महेन्द्रकुमारजी, सुरेशचंदजी, महावीरचंदजी, प्रसन्नचंदजी भंसाली, बेंगलुरू एवं सुभाषचंदजी, अशोककुमारजी, विपिनजी, पुनीतजी धोका, मैसूर, सौ.कां. रींकू का शुभ-विवाह श्री मनोजजी के संग सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

3100/- श्री राजेन्द्रजी नाहर, भोपाल, चि. नितिनजी के शुभविवाहोपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

2100/- श्रीमती शान्ताकँवरजी, जवाहरलालजी बाघमार (कोसाणा वाले), चेन्नई, सुपौत्र चि. पुनीतजी सुपुत्र श्रीमती रूपाजी-राजेन्द्र जी बाघमार का शुभ-विवाह दिनांक 12 फरवरी, 2012 को सौ.कां. रश्मिजी, सुपुत्री श्रीमती राजश्रीजी-सुधीकुमार जी बोहरा, पुणे के संग सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

2100/- श्रीमती रतनजी कर्णावट एवं समस्त पारिवारिकजन, जयपुर, स्व. श्री मोतीचन्दजी कर्णावट की पुण्यस्मृति में भेंट।

2100/- श्री शंकरलाल जी, नितीनकुमार जी, अजीतकुमार जी चोरडिया, जलगांव, चि. रोहन चोरडिया संग सौ. पूजा सुपुत्री श्री राजेन्द्र जी बाफना के शुभविवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

2100/- श्रीमती विद्यादेवीजी, संजयजी कोठारी व समस्त पारिवारिकजन, जयपुर, श्री शांतिचंदजी कोठारी सुपुत्र स्व. श्री सुमेरचंदजी कोठारी का दिनांक 20 मार्च, 2012 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

1500/- श्री प्रकाशमलजी, सुनीलकुमारजी बोथरा, चेन्नई, फाल्गुनी चौमासी पर्व पर मेड़तासिटी में पूज्य आचार्य भगवन्तश्री एवं संत-सतीवृन्द के दर्शनलाभ के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1101/- श्री चाँदमलजी-कमलादेवीजी जैन, नवसारी, सुपुत्री मनिषा जी, सुपौत्री स्व. श्री उच्छबराय जी (अलीगढ़-रामपुरा वाले) का शुभ-विवाह दिनांक 02 फरवरी, 2012 को चि. योगेश कुमारजी, सुपुत्र श्री पन्नालालजी शाह के यहाँ नवसारी में सुसम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

1101/- श्री ओमप्रकाशजी, टीकमचंदजी जैन, नवसारी, चि. आशीषजी, सुपुत्र श्री ओमप्रकाशजी

संग सौ.कां. रूचिताजी सुपुत्री श्री जम्बूकुमार जी जैन के शुभविवाहोपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1100/- श्रीमती शांताजी नाहर, जयपुर, पूज्य श्री कुशलचन्दजी नाहर की दिनांक 25 मार्च, 2012 को नवीं पुण्यतिथि के उपलक्ष्य में भेंट।

1100/- श्री महावीरचंदजी, संदीप कुमारजी ओस्तवाल, चेन्नई, चि. सुनीलजी संग सौ.कां. राखीजी के विवाह के उपलक्ष्य में तथा पूज्य गुरुदेव के दर्शनलाभ व गुरू आम्नाय पूज्य गुरु भगवन्त के मुखारविन्द से ग्रहण करने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री लोकेशजी, जयपुर, सप्रेम भेंट।

1100/- श्री पारसमलजी, घीसालालजी, पदमचंदजी बम्ब, मदनगंज-किशनगढ़, श्रीमती जतनदेवीजी धर्मपत्नी श्री लादुलालजी बम्ब का दिनांक 17 मार्च, 2012 को स्वर्गवास हो जाने पर पुण्यस्मृति में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री ओमप्रकाशजी, टीकमचंदजी जैन, नवसारी, चि. आशीषजी संग सौ.कां. रूचिका के विवाहोपलक्ष्य पश्चात् पूज्य गुरूदेव श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के पावन मुखारविन्द से छोटी पादू में गुरु आम्नाय लेने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1000/- श्री आनन्दराज जी झाबक, बैंगलोर निवासी तथा कमलाबाईजी बेला बहन, भावनगर, श्री महेन्द्र कुमार जी झाबक सुपुत्र श्री राजूलाल जी झाबक, भीनासर का 20 फरवरी, 2012 को स्वर्गवास होने पर उनकी स्मृति में।

1000/- श्री उत्तमचन्दजी, महेन्द्रकुमारजी कांकरिया, चेन्नई, फाल्गुनी चौमासी पर्व पर मेड़तासिटी में पूज्य आचार्य भगवन्तश्री एवं संत-सतीवृन्द मंडल के दर्शनलाभ के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

551/- श्रीमती कुमकुमजी-त्रिलोकचंदजी जैन, महावीरनगर-सवाईमाधोपुर, सुपुत्र श्री राहुलजी जैन द्वारा आई.आई.आई.एम. जयपुर से 79% अंकों के साथ एम.सी.ए. उत्तीर्ण करने एवं एक्ररा सोफ्टवेयर कम्पनी लिमिटेड, गुडगाँव में सीनियर सोफ्टवेयर इंजीनियर के रूप में निर्युक्ति होने पर सप्रेम भेंट।

551/- श्री त्रिलोकचंदजी जैन (श्यामपुरा वाले), महावीरनगर-सवाईमाधोपुर श्रीमती कुमकुमजी जैन के आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर की जैनागम स्तोक वारिधि परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर सप्रेम भेंट।

501/- श्री रामदयालजी, अशोककुमारजी जैन (सर्राफ), सवाईमाधोपुर, चि. त्रिलोकचन्दजी सुपुत्र स्व. श्री महावीरप्रसादजी जैन (सर्राफ) के शुभ-विवाहोपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

501/- श्री रघुनाथजी, महावीरप्रसादजी जैन, जयपुर, चि. हेमन्त सुपुत्र श्री महावीरप्रसादजी जैन, संग सौ.कां. अंशिमाजी (बिट्टू) सुपुत्री श्री महेन्द्रकुमारजी जैन, अलीगढ़-रामपुरा के शुभ-विवाहोपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

501/- श्री सूरजमलजी, तेजमलजी, रतनलालजी, धर्मचंदजी जैन (चौरू वाले), कोटा, श्रीमती रक्खीदेवीजी धर्मपत्नी श्री सूरजमलजी जैन की पुण्यस्मृति में भेंट।

500/- श्री मिलापचंदजी, देवीलालजी चोरड़िया, भैरूंदा, पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्रजी म.सा. आदि सन्त वृन्द के अनन्त कृपाकर भैरूंदा की धरा पर पधारने व विराजने की खुशी में सप्रेम भेंट।

500/- श्री पूरणमलजी, गौतमचंदजी, विपिनकुमारजी (उखलाना वाले), जयपुर चि. अंकित का

शुभ-विवाह सौ.कां. पिंकीजी सुपुत्री श्री कन्हैयालालजी जैन (पांवडेढा वाले) से दिनांक 11 मार्च, 2012 को सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

मंडल के सत्साहित्य प्रकाशन हेतु साभार

161000/- श्रीमती सायरकँवर प्यारेलाल शेषकुमार कोठारी चेरिटेबल ट्रस्ट, अहमदाबाद, मंडल द्वारा पुनः प्रकाशित होने वाली पुस्तक-प्रश्नव्याकरण सूत्र भाग-1, प्रश्नव्याकरणसूत्र भाग-2, आवश्यकसूत्र, ज्ञातासूत्र की कथायें, स्वाध्याय स्तवन माला, युवा सँवारे यौवन एवं झलकियाँ जो इतिहास बन गईं के लिए अर्थसहयोग सधन्यवाद प्राप्त हुआ।

60000/- श्री पी. एस. सुराणा जी, चेन्नई, नवीन प्रकाशन क्रियोद्धारक संत आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी म.सा. जीवन-व्यक्तित्व एवं कृतित्व एवं कवयित्री महासती श्री जड़ावकँवर जी म.सा. की काव्य-साधना के लिए अर्थसहयोग सधन्यवाद प्राप्त हुआ।

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर को साभार प्राप्त

4000/- श्री जौहरीमल जी, गजराज जी जैन, जोधपुर, परमपूज्य आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा 11 का 2011 का चातुर्मास पावटा, जोधपुर में सम्पन्न होने की खुशी में।

1101/- श्री ओमप्रकाश जी टीकमचन्द जी जैन, नवसारी (गुजरात), चि. आशीष जैन सुपुत्र श्री ओमप्रकाश जी जैन संग सौ.का. रूचिता जैन सुपुत्री श्री जम्बुकुमार जी जैन, जयपुर के शुभ विवाहोपलक्ष्य में भेंट।

501/- श्री रामदयाल जी अशोककुमार जी जैन सर्राफ, सवाईमाधोपुर, चि. त्रिलोकचन्द सुपुत्र स्व. श्री महावीर प्रसाद जी जैन सर्राफ के शुभ विवाहोपलक्ष्य में सादर भेंट।

500/- श्री पारसमल जी, हेमन्तकुमार जी, मनोजकुमार जी ओस्तवाल, बैंगलोर, पूज्य पिताजी स्व. श्री चम्पालाल जी ओस्तवाल की पावन स्मृति में भेंट।

500/- श्री ज्ञानराज जी अंबानी सेवा ट्रस्ट, जोधपुर, सहयोग हेतु भेंट।

500/- श्री जीतमल जी नीरजकुमार जी जैन 'एण्डवा वाले', सवाईमाधोपुर, चि. आशीष का शुभ विवाह सौ. सीमा सुपुत्री श्री पारसचन्द जी कुश्तला वाले से 16 जनवरी, 2012 को होने की खुशी में।

गजेन्द्र निधि द्वारा संचालित आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

(अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा क्रियान्वित)

दानदाता एवं दान एकत्रित करने वालों की सूची

120000/- श्री हरीश कवाड़ एवं परिवार, चेन्नई, की तरफ से भेंट।

100000/- गुप्त भेंट, चेन्नई।

12000/- चेनकंवर कनकमल चोरडिया ट्रस्ट, चेन्नई, की तरफ से भेंट।

12000/- श्री दिलखुशराज जी जैन, वडोदरा, की तरफ से भेंट।

12000/- श्री सुखेन्द्र जी लोढ़ा, मुम्बई, की तरफ से भेंट।

12000/- श्रीमती उच्छब जी सर्राफ, जोधपुर, स्व. श्री चन्दनराज जी सर्राफ की स्मृति में भेंट।

12000/- श्री सम्पतराज जी भण्डारी एवं परिवार, चेन्नई, स्व. श्री सज्जनराज जी भण्डारी की 17 वीं

एवं स्व. श्रीमती भवरी बाई जी भण्डारी की 8 वीं पुण्य तिथि पर उनकी स्मृति में भेंट।

12000/- श्री सम्पतराज जी भण्डारी एवं परिवार, चेन्नई, श्रीमान् ज्ञानचन्द जी भंडारी रायचूर के दूसरे वर्षीतप के सम्पूर्ण होने के उपलक्ष्य में भेंट।

12000/- श्री सम्पतराज जी भण्डारी एवं परिवार, चेन्नई, महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. एवं महासती श्री चारित्रलता जी म.सा. का चेन्नई चातुर्मास सान्नद सम्पन्न होने की उपलक्ष्य में भेंट।

12000/- श्री सम्पतराज जी भण्डारी एवं परिवार, चेन्नई, श्री रमेशचन्द्र जी, मीनाकंवर जी विनायिका, श्री किशोर कुमार जी संगीता जी विनायिका, ताम्बरम् के नव-गृह प्रवेश के उपलक्ष्य में भेंट।

12000/- श्री सम्पतराज जी भण्डारी एवं परिवार, चेन्नई, श्री संजय जी शर्मिलाबाई एवं श्री विनोद जी सुनीता जी नाहर को मायरा देने की खुशी में।

12000/- श्री निहालचन्द जी, प्रकाशचन्द जी सुराणा, चेन्नई, चि. पंकजकुमार सुपुत्र श्री प्रकाशचन्द जी सुराणा का शुभ विवाह सौ.का.निशा सुपुत्री श्री हंसराज जी बाघमार के साथ द्रिनाँक 03 दिसम्बर, 2011 को होने की खुशी में भेंट।

छात्रवृत्ति-योजना में इच्छुक दानदाता एक छात्र के लिए 12000/- रु. अथवा उनके गुणक में जितनी छात्रवृत्तियाँ देना चाहें तदनुसार दानराशि 'गजेन्द्र निधि आचार्य श्री हस्ती स्कॉलर शिप फण्ड' योजना के नाम चैक या ड्राफ्ट(Donations to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of IncomeTax Act 1961) से निम्नांकित पते पर भेजने का कष्ट करें- ***श्री अशोक जी कवाड़,*** 33, *Montieth Road, Egmore, Chennai-600008 (Mob. 9381041097)*

आगामी पर्व

वैशाख कृष्णा 8	शुक्रवार	13.04.2012	अष्टमी
वैशाख कृष्णा 14	शुक्रवार	20.04.2012	चतुर्दशी, पक्खी
वैशाख शुक्ला 3	मंगलवार	24.04.2012	अक्षय तृतीया, आचार्य श्री कजोड़ीमल जी म.सा. की 133 वीं पुण्य तिथि
वैशाख शुक्ला 8	रविवार	29.04.2012	अष्टमी, आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. की 21 वीं पुण्य तिथि
वैशाख शुक्ला 9	सोमवार	30.04.2012	उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. का 22वां उपाध्याय पद दिवस
वैशाख शुक्ला 13	शुक्रवार	04.05.2012	उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. का 50 वां दीक्षा दिवस
वैशाख शुक्ला 14	शनिवार	05.05.2012	चतुर्दशी, पक्खी
ज्येष्ठ कृष्णा 5	गुरुवार	10.05.2012	आचार्यश्री हीराचन्द्र जी म.सा. का 22 वां आचार्य पदारोहण दिवस
ज्येष्ठ कृष्णा 6	शुक्रवार	11.05.2012	पूज्य श्री कुशलचन्द्र जी म.सा. की 229 वीं पुण्य तिथि
ज्येष्ठ कृष्णा 8	रविवार	13.05.2012	अष्टमी
ज्येष्ठ कृष्णा 30	रविवार	20.05.2012	चतुर्दशी, पक्खी

पर्युषण पर्वाराधना हेतु स्वाध्यायी आमन्त्रित कीजिए

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर विगत 66 से भी अधिक वर्षों से सन्त-सतियों के चातुर्मासों से वंचित गाँव/शहरों में 'पर्वाधिराज पर्युषण पर्व' के पावन अवसर पर धर्माराधन हेतु योग्य, अनुभवी एवं विद्वान् स्वाध्यायियों को बाहर क्षेत्र में भेजकर जिनशासन एवं समाज की महती सेवा करता आ रहा है। इस वर्ष भी उन क्षेत्रों में जहाँ जैन सन्त-सतियों के चातुर्मास नहीं हैं, स्वाध्यायी बन्धुओं को भेजने की व्यवस्था है। इस वर्ष **पर्युषण पर्व 14 से 21 अगस्त 2012** तक रहेंगे। अत: देश-विदेश के इच्छुक संघ के अध्यक्ष/मंत्री निम्नांकित बिन्दुओं की जानकारी के साथ अपना आवेदन पत्र दिनांक **15 जुलाई 2012** तक इस कार्यालय को अवश्य प्रेषित करने का श्रम करावें। पहले प्राप्त आवेदन पत्रों को प्राथमिकता दी जायेगी।

1. गांव/शहरका नाम........................जिला.............प्रान्त................
2. श्री संघ का नाम व पूरा पता...
3. संघाध्यक्ष का नाम, पता मय फोन नं...
   ....
4. संघ मंत्री का नाम, पता मय फोन नं...
   ....
5. संबंधित जगह पहुंचने के विभिन्न साधन.....................................
   ....
6. समस्त जैन घरों की संख्या...
7. क्या आपके यहाँ धार्मिक पाठशाला चलती है?...................................
8. क्या आपके यहाँ स्वाध्याय का कार्यक्रम नियमित चलता है?.........................
9. पर्युषण सेवा संबंधी आवश्यक सुझाव...
10. अन्य विशेष विवरण...

आवेदन करने का पता-संयोजक/सचिव, श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, प्रधान कार्यालय-घोड़ों का चौक, जोधपुर- 342001 (राज.) फोन नं. 2624891, 2633679 फैक्स- 2636763, मोबाइल-94142-67824

ईमेल-swadhyaysanghjodhpur@gmail.com

विशेष- दक्षिण भारत के संघ अपनी मांग श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ शाखा चेन्नई 24/25, **Basin Water Works Street,Sowcarpet, Chennai-600079** के पते पर भी भेज सकते हैं। सम्पर्क सूत्र- श्री सुधीर जी सुराणा, फोन नं. 09380997333 (मोबाइल)25295143 (स्वाध्याय संघ)

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

क्रोध पर विजय प्राप्त करनी हो तो क्षमा से प्रतिकार करें।

- आचार्यश्री हस्ती

जोधपुर में प्लॉट, मकान, जमीन, फार्म हाऊस खरीदनें व बेचने हेतु सम्पर्क करें।

पद्मावती
डेवलोपर्स एण्ड प्रोपर्टीज

महावीर बोथरा
09828582391

नरेश बोथरा
09414100257

292, सनसिटी हॉस्पिटल के पीछे, पावटा, जोधपुर 34200[illegible] (राज.)

फोन नं. : 0291-2556767

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

अहंकार की तृष्टि ही सबसे बड़ी विकृति है।

- आचार्य श्री हीरा

महावीर जयन्ती पर
हार्दिक शुभकामनाएँ

C/o CHANANMUL UMEDRAJ
BAGHMAR MOTOR FINANCE
S. SAMPATRAJ FINANCIER'S
S. RAJAN FINANCIERS

218, Ashoka Road, Lashkar Mohalla,
Mysore-570001 (Karanataka)

With Best Compliments from :

C. Sohanlal Budhraj Sampathraj Rajan
Abhishek, Rohith, Saurav, Akhilesh Baghmar

Tel. : 821-4265431, 2446407 (O)

Mo. : 9845126407 (B), 9845580407 (S), 9845113334 (R)

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

देने वाले निरभिमानी, पाने वाले हैं आभारी।
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति में, ज्ञानदान की महिमा न्यारी।।

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

With Best Compliments From :

पारसमल सुरेशचन्द कोठारी

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

प्रतिष्ठान

KOTHARI FINANCERS

23, Vada malai Street, Sowcarpet
Chennai-600079 (T.N.) Ph. 044-25292727
M. 9841091508

BRANCHES :

Bhagawan Motors
Chennai-53, Ph. 26251960

Bhagawan Cars
Chennai-53, Ph. 26243455/56

Balalji Motors
Chennai-50, Ph. 26247077

Padmavati Motors
Jafar Khan Peth, Chennai, Ph. 24854526

Gurudev

SURANA

yes, the best TMT

DRI Plant

Electric Arc Furnace

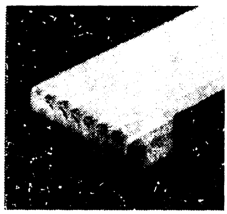
Billets

Rolling Mill

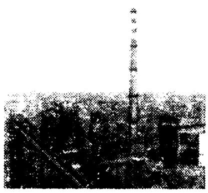
Captive Power Plant

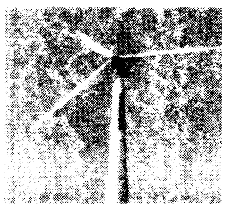
Windmill

With best wishes from

ISO 9001-2008

SURANA INDUSTRIES LIMITED

INTEGRATED STEEL PLANT

MANUFACTURE OF TMT BARS AND ALL KIND OF ALLOY STEEL

29, Whites Road, II Floor, Royapettah, Chennai 600 014/ Ph : 044-28525127 (3 lines) 28525596. Fax: 044-28521143
Email: steelmktg@suranaind.com / www.surana.org.in

STEEL I POWER I MINING

।। श्री महावीराय नमः ।।

हस्ती-हीरा जय जय ! हीरा-मान जय जय !

छोटा सा नियम धोवन का।
लाभ बड़ा इसके पालन का।।

अखण्ड बाल ब्रह्मचारी चारित्र चूड़ामणि, भक्तों के भगवान् 1008
श्री हस्तीमल जी म.सा. के चरणों में हृदय की असीम आस्था से समर्पण
उनके अनमोल खजानें के हीरे-मोती जन-जन के तारणहार
पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा.,
पण्डित रत्न उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा.
एवं समस्त
रत्नाधिक साधु साध्वी मण्डल
के चरण कमलों में भावभरा कोटिशः वन्दन एवं समर्पण...

OUR HUMBLE SALUTATIONS TO THE MOST NOBLE SOULS

PRITHIVIRAJ PREM KUMAR KAVAD
690, Trunk Road, Poonamallee, Chennai - 600 056
Ph. 044-26272196 Mob. : 93810-07273

MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD
GURU HASTI THANGA MAALIGAI
(JEWELLERS & BANKERS)
5, Car Street, Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. : 044-26272609 Mob. : 95-00-11-44-55

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

प्यास बुझाये, कर्म कटाये
फिर क्यों न अपनायें
धोवन पानी

Narendra Hirawat & Co.

Flat No. 1, Building No. 2, Navjeevan Society,
Senapati Bapat Marg, Matunga (West), MUMBAI-400 016

Trin-Trin

Matunga Office : 022-24370713, 24380713, 66669707
Opera House Office : 022-23669818
Mobile : 09821040899

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

गजेन्द्र निधि द्वारा संचालित

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा क्रियान्वित

समस्त गुरु भाईयों को सादर जय जिनेन्द्र !

आचार्य भगवन्त 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. के जन्म दिवस वर्ष 2010-11 को अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा शताब्दी वर्ष के रूप में मनाने के लिए आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना बनाई । यह एक पंचवर्षीय एवं बहुउद्देश्यीय योजना है, जिसे पाली में संघ द्वारा दो वर्ष के लिए आगे विस्तार कर दिया गया है ।

इस वर्ष योजनान्तर्गत छात्र-छात्राओं के 370 नवीनीकरण आवेदन पत्र एवं 200 नवीन आवेदन पत्र हमें प्राप्त हुए हैं । नवीन आवेदन करने वाले छात्र-छात्राओं में से इस वर्ष 125 विद्यार्थियों का चयन हुआ है ।

गत पांच वर्षों से योजना में छात्रवृत्ति कोष द्वारा छात्र-छात्राओं को छात्रवृत्ति वितरण आप जैसे सरलमना, धर्मनिष्ठ गुरुभक्तों के पूर्ण सहयोग के कारण हो पाया है और इस वर्ष भी हमें छात्रवृत्ति कोष में आप जैसे उदारमना दानदाताओं के पूर्ण सहयोग की आवश्यकता है, जिससे हम सब मिलकर छात्र-छात्राओं का भविष्य उज्जवल बनाने में सहायक बन सकें । आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी आप इस योजना के उद्देश्य को पूरा करने में संघ का सहयोग करेंगे ।

हमारा यह विश्वास है कि यह योजना न केवल छात्र-छात्राओं के शैक्षणिक उन्नति एवं नैतिक व आध्यात्मिक दृष्टि से भी नींव का पत्थर साबित होगी । छात्रवृत्ति योजना के तहत् संचालित शिविरों के माध्यम से अनेक छात्र-छात्राएँ संघ के कर्मनिष्ठ स्वाध्यायी एवं ऊर्जावान कार्यकर्त्ता के रूप में उभरे हैं। परिषद् के प्रत्येक कार्यक्रम व आयोजन आपके स्नेह व निरन्तर सहयोग से ही गतिमान हैं तथा इस योजना की सफलता में भी आपके गतिमान निरन्तर सहयोग की अपेक्षा है ।

अनन्य गुरुभक्त जो भी इस योजना में अर्थ सहयोग करना चाहते हैं, वे चैक, ड्राफ्ट या नकद राशि द्वारा जमा या भेज सकते हैं । कोष का खाता विवरण इस प्रकार है -

Scholarship Fund Bank A/c Details
A/c Name - Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund
A/c No. - 168010100120722
Bank Name & Address - AXIS BANK LTD. Anna Salai, Chennai (TN)
IFSC Code - UTIB0000168

सहयोग राशि भेजने एवं योजना संबंधित अन्य जानकारी के लिए सम्पर्क करें-

1. **Ashok Kavad**, Chennai (9381041097)
2. **Sumtichand Mehta**, Pipar (9414462729)
3. **Mahendra Surana**, Jodhpur (9309087760)
4. **Budhmal Bohra**, Chennai (9444235065)
5. **Rajkumar Golecha**, Pali (9829020742)
6. **Manoj Kankaria**, Jodhpur (9414563597)
7. **Praveen Karnavat**, Mumbai (9821055932)
8. **Kushalchand Jain**, Sawai Madhopur (9460441570)
9. **Jitendra Daga**, Jaipur (9829011589)
10. **Mahendra Bafna**, Jalgaon (9422773411)
11. **Harish Kavad**, Chennai (9500114455)
12. **Manish Jain**, Chennai (9543068382)

सहयोग के लिए चैक या ड्राफ्ट कार्यालय के इस पते पर भेजें-

B.BUDHMAL BOHRA
No.-53,Erullappan street, Sowcarpet, Chennai - 600079 (T.N.)
Telefax No - 044-42728476

JAI GURU HASTI JAI GURU HEERA JAI GURU MAAN

प्यास बुझाये, कर्म कटाये फिर क्यों न अपनायें धोवन पानी

With best compliments from :

SOHANLAL UMEDRAJ SURENDER HUNDIWAL

S.UMEDRAJ JAIN (HUNDIWAL)
098407 18382
2027 'H' BLOCK 4th STREET,12TH MAIN ROAD,
ANNA NAGAR, CHENNAI-600040
044-32550532

BRANCHES

APPOLO BRIGHT STEELS PVT LTD.
S.P.59, 3 rd MAINROAD
AMBATTUR ESTATE CHENNAI-600058
044-26258734, 9840716053, 98407 16056
FAX: 044-26257269
E-MAIL: appolobright@yahoo.com

APPOLO CORRUGATORS PVT LTD.
NO.400 NORTH PHASE, SIDCO INDUSTRIAL ESTATE,
AMBATTUR CHENNAI-60098
FAX: 044-26253903, 9840716054
E-MAIL:appolocorrugators@yahoo.com

SAPNA PACKAGING INDUSTRIES
NO.410 NORTH PHASE INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR, CHENNAI-600098
044-26241041

PENINSULAR PACKAGINGS
NO.25 SIDCO INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR CHENNAI-600098
044-26250564

आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-21/2012-14
वर्ष : 69 ★ अंक : 04 ★ मूल्य : 20 रु.
10 अप्रेल, 2012 ★ वैशाख, 2069

Kalpataru

AURA

• Awarded Best Architecture (Multiple Units) at Asia Pacific Property Awards 2010 • A complex of multi-storeyed buildings • Luxurious 2 BHK & E3 homes • Two clubhouses with gymnasium, squash, half-basketball and tennis courts • Mini-theatre • Yoga room • Swimming pool • Multi-functional room • Spa • Landscaped garden and children's play area • Safety and security features

KALPA-TARU®

Site Address: LBS Marg, Ghatkopar (West), Mumbai - 400 086.
Head Office: 101, Kalpataru Synergy, Opp. Grand Hyatt, Santacruz (East), Mumbai - 400 055.
Tel.: 022-3064 3065 • **Fax:** 022-3064 3131
Email: sales@kalpataru.com • **Visit:** www.kalpataru.com

All specifications, designs, facilities, dimensions, etc. are subject to the approval of the respective authorities and the developers reserve the right to change the specifications or features without any notice or obligation. Images are for representative purposes only. All project elevations are an artistic design. Conditions apply.

Kalpataru Limited is proposing, subject to market conditions and other considerations, to make a public issue of securities and has filed a Draft Red Herring Prospectus ("DRHP") with the Securities and Exchange Board of India (SEBI). The DRHP is available on the website of SEBI at www.sebi.gov.in and the respective websites of the Book Running Lead Managers at www.morganstanley.com/indiaofferdocuments, www.online.citibank.co.in/rhtm/citigroupglobalscreen1.htm, www.csinga.com, www.icicisecurities.com, www.nomura.com/asia/services/capital_raising/equity.shtml, www.idfccapital.com. Investors should note that investment in equity shares involves a high degree of risk and for details relating to the same, see 'Risk Factors' in the aforementioned offer documents. This communication is not for publication or distribution to persons in the United States, and is not an offer for sale within the United States of any equity shares or any other security of Kalpataru Limited. Securities of Kalpataru Limited, including its equity shares, may not be offered or sold in the United States absent registration under U.S. securities laws or unless exempt from registration under such laws.

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक – विरदराज सुराणा द्वारा दी डामयण्ड प्रिंटिंग प्रेस, जौहरी बाजार, जयपुर से मुद्रित व सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर – 302003 से प्रकाशित। सम्पादक – डॉ. धर्मचन्द जैन